BAMT-301

ताल विज्ञान

बी0ए0 संगीत(तबला) – तृतीय वर्ष

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMT-301

ताल विज्ञान

बी0ए0 संगीत(तबला) – तृतीय वर्ष

संगीत विभाग – मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000/01/02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in** वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 गोविन्द सिंह
निदेशक–मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 सत्यभान शर्मा
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
दयालबाग विश्वविद्यालय,
दयालबाग

श्री सतीश श्रीवास्तव
पूर्व विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग,
डी0जी0 कालेज, कानपुर

डॉ0 गीता जोशी
प्रधानाध्यापिका,
महिला महाविद्यालय,
सतीकुण्ड, हरिद्वार

डॉ0 विजय कृष्ण(आ.स.)
पूर्व वरि0 अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन एवं संपादन

डॉ0 विजय कृष्ण
पूर्व वरि0 अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

द्विजेश उपाध्याय
अकादमिक परामर्शदाता,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन

1.	**डॉ0 महेश पाण्डे**	प्रथम खण्ड़ – इकाई 1
		द्वितीय खण्ड़ – इकाई 1
2.	**डॉ0 विजय कृष्ण**	प्रथम खण्ड़ – इकाई 2 व 3
		द्वितीय खण्ड़ – इकाई 2
		तृतीय खण्ड़ – इकाई 1, 2 व 3
3.	**डॉ0 रेखा शाह**	द्वितीय खण्ड़ – इकाई 3

कापीराइट : @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

संस्करण : सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष : जुलाई 2014, पुनर्प्रकाशन–जुलाई 2016
प्रकाशक : निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल : **books@uou.ac.in**

इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

बी0ए0 संगीत(तबला) – तृतीय वर्ष
ताल विज्ञान – बी0ए0एम0टी0–301

खण्ड 1 – भारतीय संगीत का इतिहास, भारतीय अवनद्य वाद्य एवं तबला वादन

इकाई 1 – भारतीय संगीत का इतिहास–मध्यकाल के उपरान्त से आधुनिक काल तक। **पृष्ठ 1–12**

इकाई 2 – प्राचीन व मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्ध वाद्य; तबले की उत्पत्ति एवं विकास। **पृष्ठ 13–25**

इकाई 3 – तबला वादन(एकल वादन एवं संगत)। **पृष्ठ 26–38**

खण्ड 2 – मार्गी, देशी व दक्षिण भारतीय संगीत, जीवन परिचय एवं निबन्ध लेखन

इकाई 1 – मार्गी एवं देशी संगीत; दक्षिण भारतीय संगीत का संक्षिप्त परिचय। **पृष्ठ 39–50**

इकाई 2 – संगीतज्ञों(उ0 आबिद हुसैन, उ0 शेख दाऊद, उ0 आफाक हुसैन, उ0 अमीर हुसैन खां, पं0 गुदई महाराज, उ0 लतीफ अहमद खां व पं0 बीरु मिश्र) का जीवन परिचय। **पृष्ठ 51–59**

इकाई 3 – संगीत सम्बन्धी विषयों पर निबन्ध। **पृष्ठ 60–67**

खण्ड 3 – ताल रचना एवं तललिपि में लिखना

इकाई 1 – ताल रचना के सिद्धान्त एवं समान मात्राओं की विभिन्न तालों का औचित्य। **पृष्ठ 68–77**

इकाई 2 – पाठयक्रम की तालों का परिचय एवं बोल समूह द्वारा ताल पहचानना; पाठयक्रम की तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन, चौगुन और आड में लिखना। **पृष्ठ 78–89**

इकाई 3 – तबले की रचनाओं(पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना। **पृष्ठ 90–115**

इकाई 1 – भारतीय संगीत का इतिहास(मध्यकाल के उपरान्त से आधुनिक काल तक)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मध्यकाल में संगीत
  1.3.1 मुस्लिम प्रवेश युग
  1.3.2 संगीत ग्रंथ
1.4 आधुनिक काल
  1.4.1 संगीत विकास के कार्य
  1.4.2 वर्तमान शिक्षा का स्वरूप
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के प्रथम खण्ड की पहली इकाई है। इससे पूर्व की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि प्राचीन काल में संगीत कितना महत्वपूर्ण एवं समृद्ध विषय के रूप में प्रचलन में था। उस समय के अध्ययन से संगीत सम्बन्धी अनेक सूत्रों का पता चलता है जिनके द्वारा उस युग में संगीत की विभिन्न विधाओं, प्रयोगों एवं जनमानस में संगीत के प्रति अनुराग पर प्रकाश पड़ता है।

इस इकाई में मध्यकाल के उपरान्त से आधुनिक काल तक के भारतीय संगीत के इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई में उस काल में संगीत की स्थिति, गायन, वादन की विभिन्न शैलियों एवं उनका प्रयोग के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप मध्यकालीन एवं आधुनिक कालीन समय में उपलब्ध सांगीतिक सामग्री को समझ सकेंगे तथा प्राचीन संगीत से इन कालों का सम्बन्ध स्थापित कर तुलनात्मक अध्ययन भी कर सकेंगे। आप इन कालों में उपलब्ध संगीत शिक्षा के स्वरूप, विभिन्न शास्त्रों एवं प्रसिद्ध संगीतज्ञों की समृद्ध परम्परा को भी समझ सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- बता सकेंगे कि मध्यकाल एवं आधुनिक काल में प्रचलित गायन, वादन की विभिन्न शैलियों एवं उनका प्रयोग किस रूप में किया जाता था।
- समझा सकेंगे कि वर्तमान समय में संगीत की जो स्थिति एवं स्वरूप है वह मध्यकाल के पश्चात किस प्रकार से परिवर्तित होता आया है।
- बता सकेंगे कि मध्यकाल के समय में मुख्य रूप से भारतीय संगीत की पारम्परिक शैली में विदेशी शासकों द्वारा अनेक प्रयोग किए गए जिससे संगीत के क्षेत्र में एक नवीन स्वरूप का आविर्भाव हुआ।
- बता सकेंगे कि आधुनिक काल तक प्रवेश करते–करते भारतीय संगीत ने सांस्कृतिक, सैद्धान्तिक एवं प्रयोगात्मक दृष्टि से किस स्वरूप को ग्रहण किया।

1.3 मध्यकाल

भारत एक प्रफुल्लित और समृद्धशाली देश होने के कारण विदेशियों ने इस पर हमले शुरू कर दिए। इन हमलों का मुख्य उद्देश्य भारत को लूटना था। इन हमलावरों में गज़नवी ने चार बार हमले किए। इन कारणों से भारत की आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था नष्ट हुई। भारतीय जन–साधारण का जीवन अत्यधिक दुखदायी हो गया। इतना ही नहीं, भारतीय संस्कृति और सभ्यता की मौलिक परम्परा को नष्ट करके अपनी संस्कृति और सभ्यता का प्रमुख अंग, संगीत भी उसकी चपेट में आ गया। साहित्य और संगीत का आध्यात्मिक वातावरण श्रृंगारित प्रवृत्ति में बदल गया। 11वीं शताब्दी से लेकर 18वीं शताब्दी तक चाहे विदेशियों का राज्य रहा हो या फिर किसी और का, परन्तु फिर भी इस काल में बहुत सारे सांगीतिक ग्रन्थों की रचना की गई। जैसे–संगीत रत्नाकर, गीत गोविन्द, राग तरंगिणी(लोचन), स्वरमेलकलानिधि(रामामात्य), रागमाला, राग मंजरी, राग विबोध(पुण्डरीक विठ्ठल), संगीत पारिजात(अहोबल), संगीत दर्पण(पं. दामोदर), हृदय कौतुक(हृदय नारायण), अनूप संगीत रत्नाकर(अनूप), संगीत विलास, अनुप्रकाश(भाव भट्ट) इत्यादि।

1.3.1 मुस्लिम प्रवेश युग – मध्यकाल के अन्तर्गत मुख्यतः खिलजी, तुगलक, लोधी और मुगल शासकों का राज्य रहा। संगीत को ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

1. संगीत कलाकार
2. सांगीतिक ग्रन्थ
3. संगीत के लिए प्रोत्साहन

- **खिलजी काल में संगीत कलाकार** – खिलजी काल में अमीर खुसरो और गोपाल नायक जैसे उच्चकोटि के संगीत कलाकार थे।

- **अमीर खुसरो** – यह अलाउद्दीन के दरबार के प्रमुख रत्न में से थे। खुसरो फारसी के प्रसिद्ध कवि और महान संगीतकार थे। खुसरो ने भारतीय संगीत पर ईरानी संगीत का सुमेल किया। "Hazrat Amir Khusro introduce a number of Ragas by combining the Persian Muqqams in Indian Ragas." इसमें से साजगिरी सरपरदा, यमन कल्याण, रात की पूरिया, पूर्वी आदि का नाम विशेष तौर पर वर्णन योग्य है।

विशेष सांगीतिक शैलियां : अमीर खुसरो को कौल, कलवाना, कव्वाली, गज़ल और तराना आदि का आविष्कारक माना जाता है।

विशेष तालें : फरोदस्त, पश्तो, सवारी, सूलफाक्ता, आड़ाचौताल, झूमरा आदि तालों का आविष्कारक भी अमीर खुसरो को माना जाता है।

वाद्य : सितार और तबले के आविष्कार का श्रेय भी अमीर खुसरो को ही दिया जाता है। इसके बारे में विद्वानों के विभिन्न मत हैं। यदि इनको आविष्कारक न भी माना जाए तो भी यह जरूर कहा जा सकता है कि अमीर खुसरो ने इन वाद्यों के प्रचार के लिए विशेष यत्न किए। अमीर खुसरो ने अपना सारा जीवन ही संगीत के लिए समर्पित कर दिया।

- **गोपाल नायक** – खिलजी काल के दूसरे संगीतकार गोपाल नायक थे। गोपाल नायक देवगिरि राज्य के प्रसिद्ध गायक थे। 1294 ई. में अलाउद्दीन ने देवगिरि पर हमला किया और विजय प्राप्त की। विजय प्राप्त करने के बाद वह, वहां के बहुत सारे गायकों को बन्दी बनाकर दिल्ली ले गया क्योंकि वह संगीत–प्रेमी था। गोपाल नायक संगीत के क्रियात्मक पक्ष में ही उत्तम नहीं थे बल्कि संगीत के सैद्धान्तिक पक्षों का भी भलीभांति ज्ञान रखते थे। इन्होंने ख्याल शैली के विकास के लिए बहुत यत्न किए। बडहंस, पीलू आदि रागों का आविष्कारक इनको माना जाता था। गोपाल नायक छन्द प्रबन्ध गायन के उत्तम गायक थे। उनके संगीत की प्रसिद्धि आम जनता में बहुत प्रचलित थी। अलाउद्दीन

खिलजी चाहते थे कि विद्वान अमीर खुसरो उनसे अधिक प्रसिद्धि हासिल करें। अलाउद्दीन खिलजी ने अमीर खुसरो और गोपाल नायक का एक संगीत मुकाबला करवाया। मुकाबले की शर्त यह थी कि दोनों एक–दूसरे का गायन नहीं सुनेंगे। मुकाबले का आरम्भ गोपाल नायक के गायन से किया गया। गोपाल नायक ने गायन के अन्त में गीतम् गाया जो उनकी अपनी आविष्कार की हुई रचना थी। अमीर खुसरो ने यह सारा गायन सुना और गीतम के आधार पर नक्ष, कौल, किलवाना आदि रचनाएं बनाकर लोगों को सुनवाई और इस तरह अमीर खुसरो को उत्तम गायक की पदवी दी गई।

- **खिलजी काल में सांगीतिक ग्रन्थ** – अलाउद्दीन खिलजी के समय में पं. शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर, जयदेव ने गीत गोविन्द नामक ग्रन्थ की रचना की।

संगीत रत्नाकर : पं. शारंगदेव का समय 1210 ई. से लेकर 1247 ई. के मध्य में माना जाता है। यह देवगिरि(दौलतबाद) यादव वंशी राजा के दरबारी संगीतकार थे। इन्होंने संगीत रत्नाकर नामक ग्रन्थ की रचना की, जिसको केवल उत्तरी भारतीय संगीत में ही नहीं बल्कि दक्षिणी संगीत में भी बहुत महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। यह ग्रन्थ मुख्य रूप से सात अध्यायों में विभाजित किया गया है।

1. स्वराध्याय
2. तालाध्याय
3. वाद्याध्याय
4. नृत्याध्याय
5. रागाध्याय
6. प्रबन्धाध्याय
7. प्रकीर्णकाध्याय

इस ग्रन्थ में तीनों कलाओं गायन, वादन व नृत्य का पूर्ण विवरण मिलता है। यह शुद्ध और विकृत स्वरों की संख्या 12 मानते हैं। इन्होंने भरत की तरह 18 जातियां मानी परन्तु जातियों के लक्षण बताते समय तीन और लक्षण जोड़ दिए, जिससे इन जातियों के कुल 13 लक्षण बताए गए। इन्होंने कुल 22 श्रुतियां मानी और उन पर स्वरों की स्थापना 4–3–2–4–4–3–2 के अनुसार करते हुए षड्ज को चौथी श्रुति पर कायम किया। उन्होंने दसविधि राग वर्गीकरण के अन्तर्गत ग्राम, राग, उपराग, राग भाषा, विभाषा, अन्तर भाषा, रागांग, क्रियांग, भाषांग, उपांग आदि का वर्णन किया है। वाद्य अध्याय में इन्होंने चारों प्रकार के वाद्यों के बारे में वर्णन किया है। जबकि राग अध्याय में 200 से ऊपर रागों का वर्णन किया है।

गीत गोविन्द : गीत गोविन्द की रचना 12वीं शताब्दी में जयदेव ने की। आप उच्चकोटि के कवि होने के साथ–साथ उत्तम संगीतकार भी थे, इसलिए इनको वाग्गेयकार भी कहा जा सकता है। गीत गोविन्द जयदेव की अमर कलाकृति है। यह ग्रन्थ संस्कृत में लिखा गया है। इसका अनुवाद दूसरी भाषाओं में भी हो चुका है। इस ग्रन्थ में राधा–कृष्ण की प्रेम–लीलाओं का भी वर्णन किया गया है। यह संगीतमयी ग्रन्थ माना जाता है क्योंकि इसके पदों के ऊपर राग और तालों के नाम अंकित किए गए हैं। इस ग्रन्थ का स्थाई भाव प्रेम है परन्तु यह प्रेम दुनियावी न होकर आत्मा–परमात्मा के मिलन का प्रेम है। यह ग्रन्थ संगीत के क्षेत्र में विशेष स्थान रखता है।

- **बाबर काल में संगीत** – मुगलों के सबसे पहले बादशाह बाबर थे। बाबर खुद एक अच्छा संगीतकार था। इस काल में कालीनाथ ने "संगीत रत्नाकर" की टीका लिखी। इस काल में भक्ति आन्दोलन ने जोर पकड़ा। भारतीय, विदेशियों के हमले से पीड़ित होकर परमात्मा की भक्ति में लीन हो गए। भक्ति–आन्दोलन के प्रचारक कबीर, रामानन्द, चैतन्य, नामदेव और वैष्णव मत के अनुयायी आदि ने

परमात्मा के गुणों का गायन संगीत के माध्यम से किया। क्योंकि भक्ति–आन्दोलन के प्रचारकों ने संगीत की अपार शक्ति का अनुभव कर लिया था। बाबर युग में धर्म और संगीत का सुमेल हुआ।

- **हुमायूँ काल में संगीत** – बाबर के बाद उसका पुत्र हुमायूँ गद्दी पर बैठा। हुमायूँ के समय में सूफी मत का अधिक प्रचार हुआ था। सूफी कवियों ने भी अपनी रचनाओं का संगीत के माध्यम से प्रचार किया। इसके शासन काल में कर्नाटक के प्रसिद्ध ग्रन्थकार रामामात्य जी ने "स्वरमेल कलानिधि" की रचना की।

- **सुल्तान हुसैन शर्की काल में संगीत** – जौनपुर के राजा हुसैन शर्की का समय भी लोधी काल के साथ ही था। कहा जाता है कि सुल्तान हुसैन शर्की ने "ख्याल शैली" का आविष्कार किया। परन्तु इसके बारे में भी मतभेद हैं। इसके आविष्कार के बारे में चाहे मतभेद हैं परन्तु यह जरूर कहा जाता है कि सुल्तान हुसैन शर्की ने "ख्याल शैली" के प्रचार और प्रसार के लिए विशेष योगदान दिया। इन्होंने कई नए रागों की रचना की। जैसे जौनपुरी तोड़ी, रसूली तोड़ी, सिन्धी भैरवी, श्याम के विभिन्न प्रकार जैसे मल्हार श्याम, बसन्त श्याम आदि।

- **मानसिंह तोमर काल में संगीत** – राजा मानसिंह तोमर ग्वालियर के साथ सम्बन्धित थे। आप बहुत बड़े संगीत–प्रेमी ही नहीं बल्कि संगीत के सैद्धान्तिक और क्रियात्मक पक्ष से सम्बन्धित सम्मेलनों का आयोजन भी किया करते थे। स्वयं राजा मानसिंह तोमर भी इस वाद–विवाद में हिस्सा लेते थे।

- **अकबर काल में संगीत** – अकबर का जन्म 1542 ई. में हुआ था। इनका शासन काल 1556 से आरम्भ होता है। 1556 ई. में जब इनके पिता हुमायूँ की मृत्यु हुई तब अकबर की तख्तपोशी की रसम कलानोर में की गई। उस समय अकबर की आयु केवल 14 साल की थी। अकबर एक अच्छा शासक होने के साथ–साथ संगीत प्रेमी भी था। "He is rightly said to be the most enthusiastic lover of music who rendered all possible help to the musicians in the cultivation and preservation of Indian music."

संगीत का प्रेमी होने के कारण उसने नकाड़ा नामक वाद्य को बजाना सीखा और इसमें निपुणता हासिल की। अकबर के काल में संगीत का प्रचार घर–घर में हुआ। इस काल में संगीत सम्बन्धी विभिन्न पक्षों को मुख्य रूप से चार भागों में बांटा गया :–

1. संगीतकार
2. भक्ति–आन्दोलन के प्रचारक संगीतकार
3. संगीत–सम्मेलन
4. संगीत–ग्रन्थ

संगीतकार : अकबर ने अपने दरबार में गायकों तथा वादकों को विशेष रूप से श्रेय दिया। अकबर संगीतकारों का बहुत आदर करता था और समय–समय पर वह उन्हें इनाम देकर प्रोत्साहित भी करता रहता था। इनके दरबार में दूसरी रियासतों के कालाकार भी अपनी कला–प्रदर्शन के लिए आते थे। इनके दरबार में 36 संगीतकार थे। इनमें से प्रमुख संगीतकारों जैसे – बैजू, तानरंग खां, गोपाल खां, तानसेन, बाबा रामदास, सूरदास, बहादुर, स्वामी हरिदास आदि के बारे में विस्तार सहित वर्णन किया जा रहा है।

तानसेन : भारतीय संगीत के क्षेत्र में तानसेन को संगीत सम्राट कहा जाता है। तानसेन द्वारा संगीत के क्षेत्र में दिया गया योगदान बेमिसाल है। तानसेन बचपन से ही बहुत नटखट था। पढ़ाई की जगह प्राकृतिक वातावरण में बहुत मन लगाता था और जानवरों की आवाज की नकल करने में निपुण था। एक बार स्वामी हरिदास जी अपनी शिष्य–मण्डली के साथ जंगल से जा रहे थे, तो तानसेन ने उनको शेर की आवाज़ निकालकर डराया। जब स्वामी जी को यह पता चला कि यह आवाज किसी शेर की नहीं किसी बच्चे की है, तो वह उसकी योग्यता से बहुत प्रभावित हुए और उसको अपना शिष्य बनाने का निर्णय किया। तानसेन ने स्वामी जी से संगीत की शिक्षा हासिल करने के बाद संगीत के क्षेत्र में

बहुत निपुणता प्राप्त की। उनकी प्रसिद्धि को सुनकर राजा राम चन्द्र ने आपको दरबारी गायक के तौर पर अपने दरबार में रख लिया। तानसेन के समय में प्रमुख गायन शैली ध्रुपद थी। तानसेन ने अनेक ध्रुपदों की रचना की और उनका गायन किया। इनकी चर्चा अकबर तक भी पहुंची। 1526 ई. में अकबर ने तानसेन को दिल्ली बुलाया। उनका गायन सुनकर अकबर बहुत प्रभावित हुए और तानसेन को रत्न की उपाधि देकर दरबार में रख लिया।

राग : तानसेन ने दरबारी कान्हड़ा, मीयां की तोड़ी, मियां की सारंग, मियां की मल्हार आदि रागों की रचना की। तानसेन के जीवन के साथ जुड़ी हुई एक प्रसिद्ध घटना है। अकबर के दरबार में प्रसिद्ध कलाकार तानसेन से दूसरे संगीत कलाकार ईर्ष्या करने लगे। उन्होंने अकबर बादशाह को तानसेन से दीपक राग सुनने के लिए कहा क्योंकि वह जानते थे कि जब तानसेन यह राग गाते थे तो तपिश पैदा हो जाती थी। इस राग को गाने के बाद तानसेन की हालत बहुत खराब हो गई और इस गर्मी को कम करने के लिए तानसेन की पुत्री ने मल्हार राग गया। इस तरह के और भी उदाहरण मिलते हैं जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि तानसेन संगीत के उच्चकोटी के साधक थे।

शैली : तानसेन ने ध्रुपद गायन शैली को उच्चकोटि तक पहुंचाया।

वंश–परम्परा : तानसेन की गायन की विभिन्न शैलियां घरानों के साथ जानी जाती हैं। उनके पुत्र सूरत सेन और विलास खां ने उनकी संगीत–परम्परा को आगे बढ़ाया। इनका घराना रबाबियों का घराना कहलाया। इनकी लड़की–दामाद, जो वीणा बजाने में निपुण थे, बीनकार कहलाए।

बैजु : बैजु भी अकबर के दरबार के प्रसिद्ध गायक थे। वह भी स्वामी हरिदास के शिष्य थे। तानसेन और बैजु की संगीत–प्रतियोगिता भी अक्सर हुआ करती थी। जिसके बारे में कुछ विद्वानों का मत है कि अकबर ने बैजु का गायन अधिक पसन्द किया था, जबकि अन्य विद्वान इस मत से सहमत नहीं हैं।

रामदास : रामदास भी अकबर के दरबार के प्रसिद्ध गायक थे। इन्होंने रामदासी मल्हार की रचना की।

भक्ति आन्दोलन के प्रचारक : भारत में भक्ति की परम्परा बहुत प्राचीन है। भक्ति मनुष्य को दुःख, सुख, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि की भावनाओं से मुक्त करती है। भक्ति का प्राचीन स्वरूप वेदों के द्वारा प्राप्त होता है, परन्तु मध्यकाल में सम्पूर्ण भारत में भक्ति की लहर चली जिसको भक्ति आन्दोलन का नाम दिया गया। भक्ति आन्दोलन के प्रचारकों ने आम जनता को भक्ति के बुनियादी तत्वों का ज्ञान संगीत के माध्यम से दिया। क्योंकि इन पीरों–फकीरों और संतों ने संगीत को ही अपना प्रमुख साधन माना। मध्यकाल में हमारे भक्ति संगीत की प्रमुख विभूतियां मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास आदि हैं।

स्वामी हरिदास : स्वामी हरिदास जी तानसेन के गुरू थे तथा आध्यात्मिक संगीत के महान संगीतज्ञ थे। स्वामी हरिदास जी ने ब्रज भाषा में अनेक ध्रुपदों की रचना की और उन्हें गेय रूप दिया। यह कहा जाए कि स्वामी हरिदास उत्तर भारत के महान वाग्गेयकार थे तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। स्वामी जी गायन तथा वादन दोनों कलाओं में प्रवीण थे। इन्होंने अनेक शिष्य तैयार किए जिनमें से तानसेन, बैजु बावरा, गोपाल नायक, मदनलाल, रामदास, पं. सोमनाथ आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

मीराबाई : मीराबाई श्री कृष्ण की सच्ची उपासिका थी। मीरा ने आध्यात्मिक पदों और गीतों को संगीत के रूप में ढाला। इन्होंने संगीत की स्वर–लहरियों का गायन करते समय करताल, झांझ, मंजीरा, एकतारा आदि वाद्यों का प्रयोग भी किया और नृत्य के द्वारा अपने मन के भावों को प्रकट किया। इन्होंने गायन, वादन, नृत्य तीनों कलाओं का सम्मिलित रूप जनता के सामने प्रस्तुत किया। मीराबाई एक श्रेष्ठ कृष्ण भक्त थी। उनकी भक्ति का माध्यम संकीर्तन था। उनके द्वारा की गई भजन–रचनाएं आज भी आम जनता में प्रचलित हैं। उनके द्वारा रचित राग "मीराबाई की मल्हार" आज भी आम जनता में प्रचलित है।

तुलसीदास : तुलसीदास जितने बड़े कवि एवं भक्त थे, उतने ही बड़े संगीतज्ञ भी थे। अकबर के काल में तुलसीदास जी ने संगीत को एक नया रूप दिया, जिसमें नए भाव, नई कल्पनाएं मुख्य रूप से थी। उनके द्वारा रचित रामचरित मानस सम्पूर्ण रूप से संगीत पर आधारित है, जिसमें विभिन्न चौपाइयों को विभिन्न रागों की स्वर–लहरियों द्वारा सजाकर प्रस्तुत किया है। इन्होंने अपने काव्यों में रागों का पूर्ण रूप से प्रयोग किया है जैसे कृष्णगीतावली में 10 रागों और गीतावली में 21 रागों का प्रयोग किया गया है। उन्होंने भक्ति रस को विशेष महत्व दिया। तुलसीदास जी द्वारा रचित रामायण अनेक भाषाओं में अनुवादित हो चुका है।

सूरदास : बाबा रामदास के पुत्र सूरदास जी को उच्च कोटि के आध्यात्मिक संगीतकारों की श्रेणी में रखा जा सकता है। सूरदास जी एक उच्च कोटि के भक्त कवि और गायक थे। इनको भी आध्यात्मिक श्रेणी के उत्तम वाग्गेयकार कहा जा सकता है। इन्होंने सूरमल्हार राग की रचना की और तीन ग्रन्थ रचे। जिन ग्रन्थों में साहित्य और संगीत का जो वर्णन मिलता है, वह हैं सूरसागर, सूरसूरावली, साहित्यलहरी। सूरसागर में तो संगीत का भरपूर खज़ाना है। इसमें संगीत के परिभाषिक तत्व, विभिन्न शैलियों, रागों आदि का वर्णन मिलता है।

1.3.2 संगीत ग्रन्थ – अकबर के समय में पुण्डरीक विट्ठल ने सद्रागचन्द्रोदय, रागमाला, रागमंजरी, रामामात्य ने स्वरमेल कलानिधि, सूरदास ने सूरसागर, सूररचनावली आदि प्रमुख ग्रन्थों की रचना की। इस काल में गुरू अर्जुन देव जी ने आदि ग्रन्थ गुरू ग्रन्थ का भी संकलन किया। गुरू अर्जुन देव जी ने अपनी और पांच गुरूओं की वाणी के अतिरिक्त दूसरे भक्तों पीर, फकीरों की वाणियों को इकट्ठा करके आदि गुरू ग्रन्थ साहिब की रचना की। इसके बारे में जी.एस. छाबड़ा लिखते हैं – "The hymns of several other bhaktas were also available. The Guru decided to bring all of them together in the shape of Granth."

गुरू ग्रन्थ साहिब में गुरूओं की वाणी के अतिरिक्त दूसरे संतों, पीरों, फकीरों की वाणी इस बात का प्रमाण देती है कि गुरू ग्रन्थ साहिब धर्म–निरपेक्ष ग्रन्थ है। प्यारा सिंह पदम अपनी पुस्तक ग्रन्थ दर्शन में लिखते हैं कि आदि ग्रन्थ में सम्प्रदाय तालीम के लिए कोई स्थान नहीं है। यहां तो अल्लाह, राम, रहीम, वेद, पुराण का मिलाजुला समास मिलता है। इसका महत्व इसलिए नहीं है कि यह सिखों का धर्म ग्रन्थ है बल्कि इसलिए है कि यह सबके भले का पैगाम है।

इसमें एक विशेष सम्पादकीय ढंग मौजूद है। डॉ. तारण सिंह लिखते हैं कि गुरू ग्रन्थ साहिब में जो सम्पादकीय ढंग या प्रबन्ध मौजूद है, यह विशेष रूप से गुरू अर्जुन देव साहिब की देन है। ग्रन्थ में सम्मिलित वाणी को कीर्तन द्वारा गायन की परम्परा गुरू नानक देव जी ने चलाई। इसका अनुकरण बाकी गुरूओं ने भी किया। कीर्तन का शब्दकोषीय अर्थ है "भजन–परमेश्वर के गुण गान", राग सहित करतार के गुण गाना। सम्पूर्ण वाणी को रागों के अन्तर्गत बांटा गया। संगीत का सहारा लेकर गुरू वाणी के रचनाकारों ने सम्पूर्ण मनुष्यता को भाईचारा, धर्म–निरपेक्षता और मानसिक शान्ति का सन्देश दिया।

गुरूओं ने धर्म और संगीत का मेल किया। इसके बारे में सुरजीत सिंह गांधी अपनी पुस्तक "हिस्टरी ऑफ सिख गुरू ग्रन्थ" में लिखते हैं कि – "The gurus considered devine worship through music." उनका मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक पक्ष को उभारना था न कि सांगीतिक पक्ष को। संगीत का तो उन्होंने मात्र सहारा ही लिया।

स्वरमेल कलानिधि : दक्षिणी संगीत विद्वान् रामामात्य ने इस ग्रन्थ की रचना की। इसमें पांच प्रकरण हैं। जैसे स्वर प्रकरण, उपोद्धात प्रकरण, वीणा प्रकरण, मेल प्रकरण और राग प्रकरण। स्वर प्रकरण में सात शुद्ध और सात विकृत स्वर माने गए हैं। वीणा प्रकरण में वीणा की डांड पर आपने 14 स्वर स्थापित

किए हैं। मेल प्रकरण में 20 थाट का वर्णन है। राग प्रकरण में 20 थाट के अन्तर्गत 63 अन्य रागों का वर्णन मिलता है।

सद्रागचन्द्रोदय, रागमाला, रागमंजरी, रागनिर्णय : बादशाह अकबर के समय में भारतीय संगीत उन्नति के उच्च शिखर तक पहुंच चुका था। पुण्डरीक विट्ठल के द्वारा लिखित चार ग्रन्थ मिलते हैं– 1. सद्रागचन्द्रोदय, 2. राग माला, 3. रागमंजरी 4. राग निर्णय। इस ग्रन्थ में वर्णित कवि के रागों का अवलोकन करें तो पता चलता है कि उसमें कई राग दक्षिणी पद्धति के रागों से मिलते हैं। पुण्डरीक विट्ठल को उत्तर भारतीय संगीत पर पूर्ण अधिकार था। आपने भारतीय संगीत में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया।

संगीत दर्पण : जहांगीर काल में संगीत का स्तर बहुत ऊंचा था। इनके शासनकाल में विलास खां, परवेज खां, छतर खां आदि प्रसिद्ध संगीतकार थे। इनके काल में पंडित दामोदर ने "संगीत दर्पण" ग्रन्थों की रचना की। 1625 ई. में पंडित दामोदर द्वारा संगीत दर्पण की रचना हुई। इस ग्रन्थ के दो अध्याय हैं, पहला स्वर अध्याय और दूसरा राग अध्याय। यह ग्रन्थ हिन्दी, फारसी, गुजराती आदि भाषाओं में लिखा गया है। इस ग्रन्थ में रागों का विशेष वर्णन किया गया है।

राग तत्व विबोध : सोमनाथ के द्वारा लिखित राग तत्व विबोध भी इसी काल की रचना है। इन्होंने कुल 22 श्रुतियां मानी। इन्होंने सात शुद्ध और 15 अशुद्ध स्वरों का वर्णन 23 मेलों के अन्तर्गत किया।

संगीत पारिजात : औरंगजेब के काल में संगीत को इतना प्रोत्साहन नहीं मिला क्योंकि वह संगीत का प्रेमी नहीं था परन्तु फिर भी संगीत के साधक एकान्त में बैठकर संगीत की साधना करते रहे। इनके शासनकाल में हृदयनारायण ने हृदयकौतुक, हृदय प्रकाश, भावभट्ट ने अनूप संगीत विलास, अहोबल ने संगीत पारिजात, व्यंकटमुखी ने चतुर्दण्डि प्रकाशिका आदि प्रसिद्ध ग्रन्थों की रचना की।

संगीत पारिजात ग्रन्थ का समय 17वीं शताब्दी के मध्य का माना जाता है। उन्होंने इस ग्रन्थ को सात अध्यायों में बांटा, जो इस प्रकार हैं–1. मंगलाचरण, 2. स्वर प्रकरण 3. राग प्रकरण 4. मूर्च्छना प्रकरण, 5. वर्ण, अलंकार प्रकरण 6. जाति प्रकरण 7. राग प्रकरण। यह ग्रन्थ दोनों पद्धतियों में विशेष स्थान रखता है।

अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप विलास, अनूप प्रकाश : भावभट्ट ने अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप विलास, अनूप प्रकाश आदि तीन ग्रन्थ लिखे। इन ग्रन्थों में संगीत के पारिभाषिक तत्व जैसे स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, अलंकार आदि का वर्णन किया। इसके अतिरिक्त ध्रुपद गायन शैली और रागों के भेदों के बारे में बताया।

हृदय कौतुक और हृदय प्रकाश : हृदय नारायण के हृदय कौतुक और हृदय प्रकाश नामक ग्रन्थों की रचना औरंगजेब के समय में ही मानी जाती है। इसमें उन्होंने वीणा की तार की लम्बाई के आधार पर स्वरों की स्थापना की। इसमें संगीत के पारिभाषिक तत्वों जैसे वादी, संवादी, विवादी, तान आदि का वर्णन किया है। इन्होंने एक राग, जिसका नाम हृदय राग रखा, की रचना भी की।

1.4 आधुनिक काल

सन् 1800 ई. से लेकर अब तक का समय आधुनिक काल में आता है। लगभग 1750 ई. में अंग्रेज भारत में आए। यह समय भारतीयों के लिए अच्छा सिद्ध नहीं हुआ। भारतीय भाषाओं तथा कलाओं के साथ अंग्रेजों को कोई दिलचस्पी नहीं थी। उन्होंने असभ्यता की ही संस्कृति समझी। भारतीय संगीत को उन्होंने शोरगुल से ज्यादा कुछ नहीं समझा। इसी कारण संगीत पतन की ओर जाने लगा। अंग्रेजों ने इसको कोई प्रोत्साहन नहीं दिया क्योंकि वह देश में राज्य करना चाहते थे। इससे

पहले संगीत को राजाओं का श्रेय मिलता था परन्तु अंग्रेजों के समय सारे महाराजाओं को अपने आप को बचाने की चिंता थी। संगीत विलासिता का साधन बनकर रह गया। समझदार व्यक्ति इनको घृणा की दृष्टि से देखते थे। इसलिए सन् 1900 से पहले की दशा बहुत असन्तोषजनक थी। इस अवस्था में संगीत कुछ देशी रियासतों में दीपक की लौ की भांति जलता रहा और यह शिक्षा कुछ घरानों तक सीमित रह गई। इस समय पवित्र कला संगीत एक अपवित्र वातावरण में फंस गई। संगीत जो किसी समय समाज का आभूषण था, उसको दुश्मन माना जाने लगा।

1.4.1 संगीत विकास के कार्य – जयपुर नरेश महाराजा प्रताप सिंह(1779 ई. से 1804 ई.) की प्रेरणा के साथ संगीत विद्वानों का एक सम्मेलन हुआ। इसके फलस्वरूप संगीत सार ग्रंथ का निर्माण हुआ। इसमें बिलावल थाट के स्वरों को शुद्ध माना गया। 19वीं शताब्दी में भारतीय संगीत के विकास के लिए काम हुए। उस्तादी गायकी की स्वरलिपि तैयार की गई। अश्लील गीतों के स्थान पर भक्ति भाव के पदों को स्थापित किया गया। संगीत शास्त्र की विस्तार से चर्चा हुई। बाकी विषयों की तरह संगीत को स्थान मिला। शास्त्रीय संगीत के प्रति जन–साधारण की रूचि पैदा हुई।

नगमाते आसफी : सन् 1813 में पटना के मोहम्मद रजा ने "नगमाते आसफी" को लिखा। इन्होंने पुरानी राग–रागिनी पद्धति को गलत बताया और अपनी एक नवीन पद्धति 6 रागों और 36 रागिनियों वाली चलाई। कई विद्वानों का विचार है कि इस ग्रंथ में ही सबसे पहले बिलावल को शुद्ध थाट माना गया।

संगीत कल्पद्रुम : सन् 1842 में कृष्णानन्द व्यास ने यह पुस्तक लिखी। यह कलकत्ता से प्रकाशित हुई। इसमें उस समय तक प्रचलित ध्रुपद, धमार, ख्याल की शब्दावली दी गई है।
कैपटन विलरड : 1834 में इन्होंने एक पुस्तक A treatise on the music of Hindustan लिखी और प्रकाशित की।

एम.एस.टैगोर : बंगाल के प्रसिद्ध राजा एम.एस. टैगोर ने राग–रागिनी पद्धति को स्वीकार करके (1867–96) के समय में कई पुस्तकें लिखीं।

1- English Verses to Hindu Music
2- Six Raags and Thirty Six Raginis
3- Kantha Kaumudi
4- Sangeet Sar
5- The Universal History of music

यह पुस्तकें बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई।

कृष्णा धन बैनर्जी : इनकी पुस्तक "गीत सूत्रधार" में हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति से सम्बन्धित अनेक ध्रुपदों का संकलन है। इनमें ध्रुपदों की रचनाओं की स्वरलिपि स्टाफ नोटेशन में की गई है। दक्षिण के संगीत विद्वान आपकी संगीत–रचनाओं को बहुत आदर और श्रद्धा के साथ गाते हैं।

पन्नालाल गोस्वामी : इनका संगीत ग्रंथ "नाद विनोद" 1896 ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें रागों के प्राचीन स्वरूप, 6 राग 36 रागिनियों के गायन के विभिन्न पक्षों और सितार के पदों के बारे में विशेष जानकारी मिलती है।

संगीत सम्प्रदाय प्रदर्शनी : कर्नाटक संगीत की यह पुस्तक सुभाराव द्वारा प्रकाशित हुई। इसमें शास्त्रीय रचनाओं के अलावा व्यंकटमुखी, श्याम शास्त्री, रामास्वामी आदि कर्नाटक के अनेक प्रसिद्ध रचनाकारों की रचनाएं शामिल हैं।

मोहम्मद करम इमाम : इनकी उर्दू की रचना मुआदनुल मौसिकी 19वीं शताब्दी में प्रकाशित हुई। इसमें लेखक ने कहा कि ऋषभ ही क्यों उतरता है, स और प स्वर क्यों नहीं। इसके अलावा 12 स्वरों के अलग–अलग नाम हैं।

राजा नवाब अली : राजा नवाब अली, जो कि लाहौर के रहने वाले थे, उन्होंने सन् 1911 ई. में मारिफुन्नगमात की रचना की। यह भातखण्डे जी से प्रभावित हुए और उनके सम्पर्क में आए। इसका हिन्दी में भी अनुवाद हो चुका है।

1.4.2 वर्तमान शिक्षा का स्वरूप – आधुनिक संगीत में विशेष रूप से शिक्षा के क्षेत्र में सुधार लाने का श्रेय पंडित भातखंडे जी और पुलस्कर जी को जाता है।

- **पंडित विष्णु नारायण भातखंडे** : 10 अगस्त 1860 को महाराष्ट्र में भातखंडे जी का जन्म हुआ। उन्होंने बी.ए., एल.एल.बी. तक की शिक्षा प्राप्त की। इन्होंने भारतीय संगीत को ऊंचा स्थान दिलाने के लिए अपने प्राचीन आचार्यों के ग्रन्थों का अध्ययन किया। सारे भारत की यात्रा करने के बाद जो सामग्री जहां मिली, उसको प्राप्त किया। प्राचीन एवं नवीन विचारों को इकट्ठा करके उस पर शास्त्रों की सहमति के साथ अपना दृष्टिकोण निर्धारित किया।

संगीत के क्षेत्र में विशेष कार्य : उन दिनों में राग–रागिनी की प्रथा प्रचलित थी। संगीतकार ज्यादा शिक्षित न होने के कारण राग के नियमों की ओर ध्यान न देते हुए जिस प्रकार भी उनको सिखलाया जाता था, ग्रहण कर लेते थे। भातखंडे जी ने कई स्थानों पर अपने ग्रंथों में इस प्रकार का वर्णन किया है। बहुत बड़े–बड़े गायक गायन तो बहुत अच्छा करते थे परन्तु उनको न तो राग का ज्ञान था और न ही थाट का ज्ञान था। वे यह भी नहीं बता सकते थे कि व कौन से स्वर लगा रहे हैं। यह देखकर भातखंडे जी ने दक्षिण मेल पद्धति से प्रभावित होकर "जनक थाट पद्धति" का प्रचार किया, जिसको लोगों ने समझा, उपयोगिता का ध्यान रखा और अपना लिया। इनमें सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये पढ़े–लिखे थे। इसी कारण वे उच्च कोटि तथा निम्न कोटि के संगीतकारों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके।

ग्रंथ–लेखन : भातखंडे जी ने अभिनव राग मंजरी संस्कृत में और हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति क्रमिक पुस्तक मालिका–6 भागों में और मराठी भाषा में भी ग्रंथ लिखे। इसके अलावा अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में भी पुस्तकें लिखी।

इन्होंने प्राचीन उस्तादी बंदिशों को उसी रूप में कायम रखने के लिए अपनी स्वरलिपि का निर्माण करके उसमें बंदिशें लिखी। आने वाले विद्यार्थी वर्ग के लिए लक्षण गीतों का प्रचार किया। चतुर, चतर आदि उपनाम इनकी रचनाओं में मिलते हैं। हररंग के उपनाम तथा गीत उन्होंने अपने उस्ताद मोहम्मद अली खां साहब की स्मृति में लिखे।

संगीत सम्मेलन तथा संगीत शिक्षा संस्थाएं : भातखंडे जी ने भारत के विभिन्न स्थानों बड़ौदा, दिल्ली, बनारस, लखनऊ आदि में संगीत सम्मेलन किए। इसमें संगीत सम्बन्धी शास्त्र–चर्चा और प्रसिद्ध कलाकारों को इकट्ठा करके साधारण जनता को संगीत कला का परिचय करवाया। ग्वालियर, बड़ौदा, लखनऊ आदि स्थानों पर संगीत शिक्षा का प्रचार करने के लिए संगीत के विद्यालयों की स्थापना की गई, जो आज भी सफलतापूर्वक चल रहे हैं।

- **पंडित विष्णु दिगम्बर पुलस्कर** : 1872 में महाराष्ट्र में पुलस्कर जी का जन्म हुआ। संगीत के संस्कार इनके अंदर थे। बाल्यावस्था में ही आतिशबाजी के साथ नेत्र चले जाने के कारण यह पढ़ाई नहीं कर सके तथा संगीत की ओर पूरा ध्यान देने लगे।

संगीत क्षेत्र में महान कार्य : पंडित जी ने संगीत के उद्धार का महान् कार्य किया। उनके समय में भारतीय संगीत अनुशीलन के अन्धकार में पड़ा था। उसकी अपनी पवित्रता समाप्त हो गई थी। ब्रिटिश काल में भारतीय संगीत से घृणा की जाती थी यह देखकर इस महान् आत्मा का दिल कांप उठा।

अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने गीतों में से अश्लील तथा श्रृंगार रस के शब्द निकालकर भक्ति रस के शब्दों का समावेश किया। फलस्वरूप इनकी वाणी का लोगों पर बहुत प्रभाव पड़ा। इनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर लोगों ने इनके संगीत को अपनाया।

संगीत प्रचार के लिए इन्होंने संगीत विद्यालय खोले तथा अनेक योग्य शिष्य तैयार किए। सबसे पहले 1907 में "लाहौर गन्धर्व" महाविद्यालय की स्थापना की। इसके बाद दिल्ली, बम्बई तथा पूना में संगीत संस्थाओं की स्थापना भी की। उनके कुछ गन्धर्व रत्नों के नाम इस प्रकार हैं–पंडित विनायक राव पटवर्धन, ओंकार नाथ ठाकुर, पंडित नारायण राव व्यास, श्री शंकर राव व्यास, नारायण राव, सोरेश्वर खरे आदि।

ग्रंथ लेखन : आप ने बहुत सारे ग्रंथों की भी रचना की। संगीत बाल बोध, संगीत बाल प्रकाश, राग प्रवेश आदि पंडित जी की महान कृतियां हैं। इन्होंने एक मासिक पत्रिका भी चलाई जो कि संस्था में ही प्रकाशित होती थी। कुछ समय बाद वह बंद हो गई।

भक्ति भावना तथा अंतिम जीवन : पंडित जी को समाज में बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त हुआ। अपने जीवन के अंतिम समय में उन्होंने संसार से वैराग्य ले लिया और सब कुछ छोड़कर अपने द्वारा बनाए "राम नाम आधार" आश्रम में रहने लगे। आप रामायण और "रघुपति राघव राजा राम, पतित पावन सीताराम" पंक्तियों का गायन करने लगे। जैजैवंती राग के स्वरों में गाई हुई उनकी यह धुन भारतीयों के कानों में आज भी गूंजती है।

इस प्रकार इन दोनों महान् संगीतकारों(पं. भातखंडे और पं. पुलस्कर) के महान प्रयत्नों तथा मेहनत के कारण भारतीय संगीत अपना स्थान प्राप्त कर सका और उन्नति की ओर चल पड़ा। आज संगीत के क्रियात्मक तथा शास्त्रीय दोनों पक्षों का समुचित विकास हो रहा है। आज यहां बड़े–बड़े संगीतकार अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे हैं। वहां दूसरी ओर संगीत शास्त्र में नए अनुसंधानों द्वारा संगीत का विस्तार बहुत तीव्र गति से हो रहा है। आज भारतीय संगीत दिन–प्रतिदिन बहुत उन्नति कर रहा है तथा दूसरे विषयों की भांति उचित स्थान प्राप्त कर रहा है।

- **ओंकारनाथ ठाकुर** : पंडित ओंकर नाथ ठाकुर का संगीत–जगत् को दिया गया योगदान हमेशा अमर रहेगा। आप एक उच्चकोटि के संगीतकार थे। आपने संगीतांजली, प्रणव भारती नामक पुस्तकें लिखी। 1955 में आप को भारत सरकार की ओर से पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया गया। आप ग्वालियर घराने से सम्बन्ध रखते थे। आप ख्याल गायन में बहुत माहिर थे परन्तु ध्रुपद, ठुमरी, भजन भी गाते थे।

- **उस्ताद अलाउद्दीन खां** : उस्ताद अलाउद्दीन खां का संगीत क्षेत्र में विशेष योगदान है। आप को संगीत के लिए कई मुश्किलों का सामना करना पड़ा परन्तु इससे आपकी जिज्ञासा कम नहीं हुई। आपने गायन और वादन दोनों में ही कुशलता प्राप्त की। आपको राष्ट्रपति की ओर से पद्म भूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया। आपने संगीत के क्षेत्र में उच्च कोटि के शिष्य तैयार किए जिनमें से पं. रवि शंकर, उ0 अली अकबर खां जी का नाम उल्लेखनीय है।

आधुनिक युग के उभरते कलाकार – 20वीं शताब्दी में बहुत सारे उभरते कलाकार संगीत के स्तर को ऊंचा करने की कोशिश कर रहे हैं, उनमें पंडित विलायत खां, पंडित रवि शंकर, अली अकबर खां, सुजात खां, अल्ला रक्खा खां, जाकिर हुसैन, हरि प्रसाद चौरसिया, बिसमिल्ला खां आदि का नाम उल्लेखनीय है। यह संगीतकार अपने–अपने क्षेत्र में संगीत का प्रचार एवं प्रसार कर रहे हैं।

आधुनिक युग में संगीत विकास के अन्य साधन – आधुनिक युग रेडियो तथा टी.वी. का युग है। रेडियो तथा टी.वी. द्वारा उच्च कोटि के संगीतकारों के विचार तथा उनकी कला पेश की जाती है, जिससे संगीत का काफी प्रचार हुआ है।

संगीत शिक्षा संस्थाएं – आधुनिक युग में बहुत सारी संगीत संस्थाएं संगीत की शिक्षा दे रही हैं। जैसे प्रयाग संगीत समिति इलाहाबाद, भातखण्डे कॉलेज लखनऊ(मैरिस म्यूज़िक कॉलेज), गन्धर्व महाविद्याालय पूना आदि का नाम उल्लेखनीय है। इसके अलावा संगीत स्कूलों, कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में विषय के रूप में भी सिखाया जाता है।

संगीत पुस्तकें : संगीत के विभिन्न पक्षों पर(क्रियात्मक एवं सैद्धान्तिक) पुस्तकें प्रकाशित हो रही हैं। संगीत, संगीत कला विहार, इंडियन म्यूजिक जनरल, मासिक पत्रिकाएं संगीत के प्रत्येक विषय पर रोशनी डाल रही हैं।

अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. गीत गोविन्द पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. मानसिंह तोमर काल में संगीत की स्थिति को संक्षेप में समझाइए।
3. आधुनिक कालीन प्रसिद्ध संगीत ग्रंथों के नाम बताइए।
4. उस्ताद अलाउद्दीन खां के सांगीतिक योगदान को बताइए।

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

1. मैरिस म्यूजिक कॉलेज इलाहाबाद में स्थित है।
2. अभिनव राग मंजरी के रचयिता पं.वि.दिगम्बर पुलस्कर हैं।
3. भक्ति आंदोलन के प्रचारकों में सूरदास प्रमुख थे।
4. तानसेन द्वारा राग मियां की सारंग की रचना हुई।

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

1. संगीत दर्पण ग्रंथ के लेखक _____ हैं।
2. गीत गोविन्द की रचना _____शताब्दी में हुई।
3. सर्वप्रथम सन् _____ में लाहौर गन्धर्व महाविद्यालय की स्थापना हुई।
4. पं.ओमकार नाथ ठाकुर को सन् _____में पद्मश्री से सम्मानित किया गया।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप मध्यकाल के उपरान्त से आधुनिक काल तक के भारतीय संगीत के इतिहास के विषय में जान चुके होंगे। मध्यकाल में मुख्य रूप से विदेशी आक्रमणों से भारत की धार्मिक एवं सांस्कृतिक अर्थव्यवस्था पर विशेष प्रभाव पड़ा। विशेष रूप से उत्तर भारतीय संगीत पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। मध्यकाल में खिलजी, तुगलक, लोधी एवं मुगल शासकों का तथा आधुनिक काल में ब्रिटिश साम्राज्य का प्रभाव रहा, जिसका प्रभाव संगीत की विभिन्न विधाओं एवं संगीतज्ञों पर पड़ा। इन कालों में ख्याल, तराना, गज़ल, कव्वाली आदि अनेक नवीन विधाओं का मूल्यांकन हुआ तथा अनेक रागों एवं तालों का आविष्कार भी हुआ। मध्यकाल में सम्पूर्ण भारत में भक्ति की लहर चली। भक्ति के मार्ग को जन–जन तक पहुंचाने हेतु संगीत का माध्यम ही विशेष रूप से रहा। भक्ति संगीत में प्रमुख रूप से मीराबाई, सूरदास, तुलसीदास आदि विभूतियां रहीं। मध्यकाल में प्रमुख ग्रन्थों में स्वरमेल कलानिधी, संगीत दर्पण, राग तत्व विबोध, संगीत पारिजात, अनूप संगीत रत्नाकर, हृदय कौतुक आदि की रचना हुई। आधुनिक काल में अंग्रेजों के आगमन से भारतीय संगीत का पतन होने लगा। 19वीं शताब्दी से भारतीय संगीत के विकास के लिए कार्य शुरू हुए। अनेक ग्रन्थ नगमाते आसफी, संगीत कल्पद्रुम, क्रमिक पुस्तक मालिका, संगीतांजलि आदि ग्रन्थों की रचना हुई। पं.

वि. नारायण भातखंडे एवं पं. वि. दिगम्बर पुलस्कर ने विशेष रूप से संगीत की दशा एवं शिक्षा के क्षेत्र में सुधार लाने के सफल प्रयास किए।

1.6 शब्दावली

1. **द्विश्रुतिक, त्रिश्रुतिक एवं चतुर्श्रुतिक –** भारतीय शास्त्रीय संगीत में सात स्वर विभिन्न श्रुतियों पर स्थापित माने गए हैं। प्राचीन समय से 22 श्रुतियों का प्रचलन था। प्रत्येक स्वर की श्रुतियाँ भिन्न–भिन्न हैं। जैसे – षड़ज एवं पंचम, चतुर्श्रुतिक हैं; गन्धार एवं निषाद, त्रिश्रुतिक तथा धैवत एवं ऋषभ, द्विश्रुतिक हैं।
2. **प्रबन्ध –** प्राचीनकाल में निबद्ध गान के अन्तर्गत प्रबन्ध, रूपक आदि आते थे। प्रबन्ध की चार धातुएँ उदग्राह, मेलापक, ध्रुव और आभोग हैं।
3. **कव्वाली –** कव्वाली गायन शैली का एक प्रकार है। प्रारम्भ में यह मुस्लिम धर्म में अधिकतर भक्ति भाव के लिए गाई जाती थी परन्तु आज इसके कई रूप दिखते हैं।
4. **जाति गायन –** जिस प्रकार वर्तमान में राग गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन समय में जाति गायन का प्रचलन था।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

1. **असत्य** **2. असत्य** **3. सत्य** **4. सत्य**

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

1. पं.दामोदर 2. 12वीं 3. 1907 4. 1955

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. परांजपे, डॉ0 शरच्चन्द्र श्रीधर, (1992), संगीत बोध, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
2. राजन, डा0 रेणु, (2010) भारतीय शास्त्रीय संगीत के विविध आयाम, अंकित पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. सर्राफ, डॉ0 रमा, (2004) *भारतीय संगीत सरिता,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
4. भातखण्डे, विष्णु नारायण, (1966), उत्तर भारतीय संगीत का संक्षिप्त इतिहास, संगीत कार्यालय, हाथरस।

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्रीः

1. गर्ग, लक्ष्मी नारायण, वसन्त, (1997), संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गोबर्धन, शान्ति, (1989), संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. पाठक, पं0 जगदीश नारायण, (1995), संगीत शास्त्र प्रवीण, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. मध्यकाल में मुस्लिम प्रवेश युग के समय संगीत की क्या स्थिति थी? विस्तार में समझाइए।
2. आधुनिक कालीन प्रसिद्ध ग्रंथ एंव संगीतज्ञों के विषय में बताते हुए इस काल का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

इकाई 2 – प्राचीन व मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य; तबले की उत्पत्ति एवं विकास

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 प्राचीन काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य
2.4 मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य
2.5 तबले की उत्पत्ति एवं विकास
2.6 सारांश
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के प्रथम खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास के विषय में बता सकते हैं। आप विशेष रूप से मध्यकाल के बाद से आधुनिक काल तक के समय में भारतीय संगीत की स्थिति के विषय में बता सकेंगे।

इस इकाई में प्राचीन व मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों की चर्चा की गई है। प्राचीन व मध्य काल विभिन्न अवनद्य वाद्य प्रयुक्त किए जाते थे। इस इकाई में तबले की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में भी बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि प्राचीन व मध्य काल में कौन–कौन से अवनद्य वाद्य प्रयोग किए जाते थे। आप तबले की उत्पत्ति के विषय में जान सकेंगे। आप यह भी जान सकेंगे कि किस तरह तबले का विकास हुआ।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

1. प्राचीन काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों के विषय में जान सकेंगे।
2. मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों के विषय में जान सकेंगे।
3. तबले की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में जान सकेंगे।

2.3 प्राचीन काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य

प्राचीन काल में संगीत – यह काल मध्यकाल से पूर्व का काल है जिसका समय 800 ई0 से पहले का है। इस काल में वैदिक काल, रामायण काल, महाभारत काल व पौराणिक काल का समावेश किया जा सकता है। वैदिक काल में हमें चार वेद ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद, रामायण, महाभारत जैसे प्रबन्ध काव्य एवं पुराण प्राप्त होते हैं। इनसे हमें इस काल के संगीत प्रसंगों के माध्यम से संगीत का ज्ञान प्राप्त होता है।

भारत में आर्यों के आगमन से वैदिक युग का प्रारम्भ माना जाता है। इस युग में चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र स्थापित हुए। संगीत ब्राह्मण वर्ग के हाथ में था। स्त्रियां भी इस युग में गायन, वादन तथा नृत्य तीनों में भाग लिया करती थी। यज्ञ हेतु गायक एवं वादक नियुक्त रहते थे। इस युग में संगीत धर्म के साथ जुड़ गया तथा पवित्र माना जाने लगा। आर्यों के जीवन में संगीत ने पूरी तरह से प्रवेश किया। इस समय आर्यों ने देवताओं को प्रसन्न करने का एक मात्र साधन संगीत को ही माना तथा संगीत का आध्यात्मिक स्वरूप भी स्थापित हुआ। इस युग में संगीत एवं संगीत कलाकारों को बहुत सम्मान प्राप्त था, जिसका कारण वैदिक युग के कलाकारों का उज्जवल एवं उच्चकोटि का चरित्र था। संगीत की तपस्या बड़े संयम एवं नियम से की जाती थी। स्त्रियां वीणा वादन में प्रवीण थी एवं संगीत के आयोजन में खुलकर भाग लेती थी तथा समाज में इनको सम्मान प्राप्त था। मध्यकाल के उत्तरार्ध में संगीत जब धर्म एवं आध्यात्म से अलग होकर विलासित के रूप में प्रयोग होने लगा तो इसमें नैतिक पतन आया एवं इसको हेय दृष्टी से देखा जाने लगा। ऋग्वेद की गानोपयोगी ऋचाओं को संकलित करके ही सामवेद की रचना हुई। ऋक का स्वरयुक्त गान होता था जो कि स्वर एवं शब्द के मेल का प्राचीनतम स्वरूप है। सामवेद से ही संगीत का प्रथम ज्ञान प्राप्त होता है तथा यह संगीत का प्रारम्भिक ग्रन्थ है।

वैदिक युग में सामगान के चार प्रकार – ग्राम गेय, अरण्ये गेय, उहं एवं उह थे। ग्राम गेय गायन गृहस्थी, गोष्ठियों तथा सामान्य जन के लिए था। अरण्ये गान अरण्यवासी ऋषियों के लिए था। साम गान के दो भाग पूर्वगान एव उत्तर गान थे। ग्राम गेय गान को पूर्व गान तथा अरण्ये, उहं एवं उह गान को उत्तर गान कहते थे। ग्रामगेय गान से मार्गी संगीत की कल्पना प्रतिपादित हुई। साम गान में तीन स्तोभ – वर्ण स्तोभ, पद स्तोभ तथा वाक्य स्तोभ थे। इन स्तोभों से भरत ने बहिर्गीतों को स्थापित किया था। साम गान में वर्तमान की भांति सम, विषम, विभिन्न प्रकार के छंद एव लय के विभिन्न प्रयोग होते थे। किसी भी यज्ञ हेतु सामगान अनिवार्य था। सामगान हेतु स्वर सप्तक का प्रयोग होता था जिन्हें क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, कृष्ट एवं अतिस्वर कहते थे तथा इनका क्रम अवरोह का था। वैदिक युग में ही नई–नई शैलियों के गीतों का उदभव एवं विकास हुआ। सामवेद के द्वारा स्वर सप्तक, लय के प्रयोग, छन्द के प्रयोग का प्रथम बार ज्ञान प्राप्त होता है। वेदों में विभिन्न प्रकार के लय वाद्यों का प्रसंग भी प्राप्त होता है। वैदिक युग में वैदिक संगीत के अतिरिक्त लौकिक संगीत के रूप में गाथा गायन का भी प्रचार था। सभी वेदों में संगीत के प्रसंग प्राप्त होते हैं। अथर्ववेद मे काष्ठ दुदुंभि लय वाद्य का विवरण उपलब्ध होता है। सामगान में लय एवं छन्द प्रदर्शन हेतु भूमि दुदुंभि का प्रयोग किया जाता था। यजुर्वेद कालीन महिलाएं लय शास्त्र में प्रवीण थी तथा गायन एवं नृत्य में लयकारी का प्रदर्शन करती थी। गायन, वादन एवं नृत्य के साथ मात्रा गिनकर हाथ से ताल देने की प्रथा थी जो कि दक्षिण भारतीय संगीत में वर्तमान में भी प्रचलित है।

रामायण एवं महाभारत काल प्राचीन काल में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इनका समय ईसा पूर्व 400 में 200 वर्ष तक का है। रामायण एवं महाभारत संगीत ग्रन्थों के अन्तर्गत नहीं आते हैं परन्तु इन ग्रन्थों में संगीत के उपलब्ध विभिन्न प्रसंगों से इन कालों में संगीत की स्थिति की जानकारी प्राप्त होती है। रामायण एवं महाभारत के प्रत्येक अध्याय में गीत, वाद्य तथा नृत्य का उल्लेख है। रामायण काल में संगीत का विशेष आदर था। राज परिवार, ब्राह्मण तथा ऋषि मुनि भी संगीत की साधना किया करते थे। महर्षि बाल्मीकि ने लव–कुश के द्वारा राम की सभा में रामायण का सस्वर गान कराया था। राम के अश्वमेघ यज्ञ आयोजन में भी रामायण का स्वर एव ताल युक्त गान का उल्लेख रामायण के उत्तरकाण्ड में प्राप्त होता है। इस गान हेतु कुशल गायकों को आमन्त्रित किया गया था। रामायण के रचियता महर्षि बाल्मीकि स्वर संगीत के मर्मज्ञ विद्वान थे तथा इन्होंने लव–कुश के माध्यम से लय के प्रकार द्रुत, मध्य एवं विलम्बित लय का विवेचन

किया। लव–कुश के गान को रामचन्द्र तथा यज्ञ में उपस्थित सभी लोगों ने सराहा था तथा यज्ञ के अन्त में स्वयं रामचन्द्र व ऋषि मुनियों आदि ने बाल्मीकि एवं लव–कुश का आदर पूर्वक आहवान किया था। रामायण काल में लय वाद्यों का विशेष स्थान एवं महत्व था। दशरथ की मृत्यु के पश्चात जब भरत अयोध्या लौटे थे तो उनको पिता दशरथ की मृत्यु का पता नहीं था परन्तु अयोध्या में मृदंग तथा अन्य लय वाद्यों को मौन देख उनको अनिष्ट का आभास हो गया था। रामचन्द्र द्वारा शिव का धनुष तोडे जाने के समय आकाश में देवताओं द्वारा दुदुंभी बजाई गई तथा अप्सराएं नृत्य व गीत करने लगी। रामचन्द्र एवं सीता के जयमाला के समय भी संगीत का आयोजन किया गया था। ये सभी प्रसंग रामायण में प्राप्त होते हैं। रावण भी संगीत का प्रकाण्ड विद्वान था। रामायण काल में भी वैदिक काल की भांति हाथ से लय ताल देने की प्रथा रही जो कि रामायण में गान्धर्व गान के प्रसंग में **पाणिवादिका** शब्द से ज्ञात होती है।

महाभारत काल में भी गीत, वाद्य एवं नृत्य के उल्लेख प्राप्त होते हैं। महाभारत काल में कृष्ण, संगीत एवं नृत्य के महान आचार्य थे तथा इनके द्वारा रासलीला नृत्य की उत्पत्ति की गई। वाद्य वंशी एवं कृष्ण एक दूसरे के पूरक बन गए। नृत्य का महाभारत में आदि पर्व, द्रोण पर्व तथा अरण्य पर्व में उल्लेख प्राप्त होता हैं। महाभारत काल में रस भाव एवं लय प्रयोगों के सन्दर्भ प्राप्त होते हैं तथा इनका विवेचन भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में किया है। इस काल में पुरूषों के समान नारियां तथा अन्तःपुर की स्त्रियां भी संगीत तथा नृत्य में निपुण थी। समाज में संगीत एवं नृत्य के कलाकारों को सम्मान प्राप्त था। महाभारत काल के धनुर्धर अर्जुन पखावज वादन तथा नृत्य कला में निपुण थे जो कि इनके अज्ञातवास के समय बहन्नलाल का रूप धारण कर संगीत नृत्य की शिक्षा, विराट राजा की पुत्री उत्तरा को देने के प्रसंग से प्रमाणित होती है। महाभारत काल में कृष्ण एवं अर्जुन ने संगीत की स्थापना में विशेष योगदान दिया। अर्जुन नृत्य, पखावज वादन तथा वीणा वादन तीनों में ही निपुण थे।

रामायण तथा महाभारत के पश्चात सभ्यता एवं संस्कृति के विकास हेतु पुराण लिखे गए जिनके रचियता के रूप में महाभारत के रचियता वेदव्यास ही जाने जाते हैं। अठारह पुराणों का प्राचीन समय में उल्लेख प्राप्त होता है। अठारह पुराण के नाम इस प्रकार हैं – बहम, पदम, वैष्णव, शैव, भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय, अग्निय, भविष्य, बहमवैवर्त, लिंग, बाराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मतस्य, गरूण एवं बह्मांड।

मार्कण्डेय पुराण प्राचीन पुराण ग्रन्थ है। यह 237 अध्याय में विभक्त है परन्तु प्रत्येक अध्याय में संगीत नृत्य के प्रसंग प्राप्त नहीं होते हैं। प्रथम अध्याय में नारद ने अप्सराओं को सम्बोधित कर नृत्य एवं नर्तक की व्याख्या प्रस्तुत की। मार्कण्डेय पुराण के तैइसवें अध्याय में संगीत की विवेचना की गई है। इस अध्याय में संगीत की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती के माध्यम से ताल क्रियाओं तथा वाद्य वर्गीकरण का परिचय दिया गया हे। ताल, लय तथा यति आदि का उल्लेख भी इस पुराण में प्राप्त होता है। मार्कण्डेय पुराण के अतिरिक्त वायु पुराण के 86 व 87 वें अध्याय में संगीत की विवेचना की गई है जिसे गान्धर्व शास्त्र कहा गया। सात स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छना व उन्नचास तानों का उल्लेख भी वायु पुराण में प्राप्त होता है।

पुराणों के पश्चात् हमें तीन उपनिषद छांदोग्योपनिषद, बृहदारण्यकोपनिषद तथा तैतिरीयोपनिषद प्राप्त होते हैं। इन तीनों में छांदोग्योपनिषद सबसे प्राचीन है जिसमें गीत, वाद्य तथा नृत्य का उल्लेख प्राप्त होता है। इसमें ही गीत के साथ सामूहिक नृत्य का तथा ह्रश्व, दीर्घ तथा प्लुत मात्राओं का विवरण मिलता है। गायन में तथा मन्त्रों के पाठ हेतु मात्राओं के प्रयोग के निश्चित नियम थे तथा नियमों के विपरीत मन्त्रों का पाठ अथवा गायन निषिद्ध था। बृहदारण्यक में गायत्री मंत्र हेतु त्रिष्टुप एवं अनुष्टुप छन्द का प्रयोग निश्चित किया गया है। तैतिरीय उपनिषद में संगीत में प्रयुक्त होने वाले वर्ण, स्वर, मात्रा तथा बल शब्द के उच्चारण की विवेचना प्रस्तुत की गई। स्वर के प्रकार – अनुदात्त, स्वरित एवं उदात, मात्रा – लघु, दीर्घ एवं प्लुत की विवेचना तैत्तिरीय उपनिषद में प्राप्त होती है।

उपनिषदों के पश्चात शिक्षाशास्त्र ग्रन्थों में संगीत की प्रायोगिक शिक्षा के मन्त्र प्राप्त होते हैं। शिक्षाशास्त्र ग्रन्थ को प्रतिशारण्य ग्रन्थ भी कहा गया। इसमें विलम्बित, मध्य तथा द्रुत लय के प्रयोग की शिक्षा के विषय में चर्चा की गई है जिसके अनुसार प्रारम्भ में विलम्बित लय का प्रयोग, पुनरावृत्ति हेतु द्रुत लय तथा प्रदर्शन हेतु मध्यलय के प्रयोग का उल्लेख प्राप्त होता है। कण्ठ के अभ्यास हेतु मन्द्रसप्तक का प्रयोग बताया गया है।

विभिन्न जातक कथाओं के माध्यम से बौद्ध काल में संगीत की स्थिति स्पष्ट होती है। भेरीवादकजातक कथा के अनुसार गौतम बुद्ध का जन्म एक भेरी बजाने वाले के कुल में हुआ था तथा इसमें भेरी का उल्लेख है। शंख जातक में शंख का उल्लेख है। गुप्तिल जातक में गुप्तिल ने अपने शिष्य मुसिल को एक श्रेष्ठ वादक का स्थान दिया था। काकवती जातक में वीणा एवं गाथा गान का प्रसंग है। शोणक जातक में राजा अमिरन्द्र एवं बालक पचंचूड के सन्दर्भ में गायन का प्रसंग है तथा इसी में बताया गया कि भेरी की ध्वनि के द्वारा लोगों को संगीत आयोजन हेतु सूचना दी जाती थी। विदुरपण्डित जातक में हाथ से ताली देकर संगीत प्रदर्शन एवं लय वाद्य कुतस्थुण, पणव, डिडिम्ब, मृदंग, कांस्य एवं करताल का उल्लेख है। इसी में स्त्रीयों के सामगान के साथ पिच्छौरा वीणा वादन का भी उल्लेख है।

कुतस्थुण का वर्तमान स्वरूप दक्षिण भारतीय संगीत का घटम वाद्य है परन्तु कुतस्थुण में घड़े के मुख को चर्म द्वारा आच्छादित किया जाता था। विश्वन्तर जातक में वाद्यों का वर्गीकरण प्राप्त होता है जिसमें वाद्यों को पांच श्रेणी– आतत, वितत, आतत वितत, घन तथा सुषिर वर्ग में रखा गया है। आतत श्रेणी में वर्तमान के अवनद्य वाद्य आते हैं जिनमें मुख पर चमड़ा मढा होता है, जैसे तबला। वितत जिनके दोनों मुख पर चमड़ा मढा होता है जैसे ढोल, डमरू, हुडक्का, मृदंग आदि। आतत वितत श्रेणी में वीणा जैसे वाद्य थे, घन तथा सुषिर का वर्गीकरण वर्तमान की भांति ही था। शवयात्रा तथा अन्त्येष्टि के समय भेरी वादन किया जाता था। गौतम बुद्ध के महानिर्वाण के बाद उनकी अन्त्येष्टि वाद्यों की ध्वनि के साथ सम्पन्न की गई थी।

बौद्ध काल में वाराणसी में एक विश्वविद्यालय था जिसके साथ एक संगीत विद्यालय संलग्न था। इसमें लगभग 500 विद्यार्थी थे जो कि संगीत के गुणी शिक्षकों से संगीत की शिक्षा प्राप्त करते थे। उस समय के तीन विश्वविद्यालय नालन्दा, विक्रमशीला तथा औदन्तपुरी में गान्धर्व विद्या विभाग था जिसमें संगीत की विधिवत शिक्षा दी जाती थी।

मौर्य काल में भी संगीत का विकास हुआ परन्तु इस काल में संगीत मनोरंजन हेतु अधिक प्रयोग होने लगा था। संगीत नागरिक जीवन का अंग बन गया। विवाह हेतु भी वर तथा वधु के लिए संगीत में प्रवीण होना एक आवश्यक गुण माना जाता था। गणिकाओं में संगीत उनकी जीविका निर्वाह का साधन बन गया था। संगीत कला का आदान प्रदान गोष्ठियों के माध्यम से होने लगा। चन्द्रगुप्त मौर्य की पत्नी जो कि युनान के सैल्युकस की पुत्री थी, युनानी संगीत की उत्तम कलाकार थी। इस प्रकार भारत में युनानी संगीत आया। अशोक ने संगीत को उच्च स्तर पर पहुंचाने के लिए अथक परिश्रम किया जिसमें उन्होंने श्रृंगारिक गीतों का बहिष्कार किया। अशोक की पत्नी की परिचारिका चारूमित्रा वीणा वादिका थी। अशोक के समय संगीत ने पुनः अपने आध्यात्मिक स्वरूप को प्राप्त किया जिसको विदेशों में श्रृद्धा से अपनाया गया।

अशोक के बाद कनिष्क स्वयं संगीतज्ञ थे। इन्होंने संगीत को उसके गौरवशाली स्तर पर पहुंचाने में विशेष योगदान दिया। कनिष्क के दरबार में भारत के समस्त प्रान्तों के अतिरिक्त अफगानिस्तान तथा चीन के कलाकार भी समय–समय पर उपस्थित रहा करते थे। जिनका कनिष्क बहुत आदर किया करता था तथा यथोचित पुरष्कृत भी करता था। इस समय भारतीय संगीत का प्रचार पूरे एशिया में हुआ। कनिष्क काल के उपरान्त भरत ने नाट्यशास्त्र की रचना की।

गुप्त काल के सम्राट समुद्रगुप्त स्वयं एक अच्छे संगीतज्ञ थे। उस समय की सोने की मुद्रा पर समुद्रगुप्त का वीणा वादन करते हुए चित्र उक्त तथ्य को सिद्ध करता है। इस काल में भारतीय संस्कृति के साथ विदेशी सभ्यता एवं संस्कृति का मिलन हुआ जिससे संगीत में नवीन दिशाओं का सूत्रपात हुआ। महाराजा विक्रमादित्य(चन्द्रगुप्त द्वितीय) ने शिक्षा, शिल्प, संगीत के लिए नाट्यशास्त्र तथा संगीतशालाओं का निर्माण करवाया था। महाकवि कालिदास के ग्रन्थों से गुप्तकालीन संगीत का परिचय प्राप्त होता है। कालिदास के समय मार्गी संगीत का लगभग लोप हो चुका था तथा देशी संगीत ही समाज में प्रचलित था। कालिदास के 'कुमार सम्भव' एवं 'अभिज्ञानशाकुन्तलम' में संगीत के शाब्दिक शब्दों का प्रयोग है। 'कुमार सम्भव' में मंगल पदों के लिए विलम्बित शब्दों का प्रयोग उल्लेखित है। 'मेघदूत' में कालिदास ने गान्धार ग्राम की मूर्च्छनाओं का वर्णन किया है। 'मृच्छकटिक' नाटक में मृदंग हेतु पणव शब्द का प्रयोग किया गया है। भरत के पुत्र दत्तिल द्वारा लिखा गया ग्रन्थ दत्तिलम इस काल की महत्वपूर्ण देन है।

प्राचीन काल में हमें चार वेद, पुराण, महाभारत, रामायण आदि से इस काल के संगीत की स्थिति का ज्ञान होता है। इसके अतिरिक्त संगीत की विवेचना भरत के नाट्यशास्त्र, नारदकृत नारदीय शिक्षा, नारद कृत संगीत मकरंद, शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर, रामामात्य कृत स्वरमेलकलानिधि, दामोदर कृत संगीत दर्पण, सोमनाथ कृत रागविबोध, अहोबल कृत संगीत पारिजात आदि ग्रन्थों से प्राप्त होती है जो कि संगीत के विकास हेतु बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए।

प्राचीन काल के अवनद्य वाद्य :–

डमरू – डमरू भारत का सर्वप्रथम अवनद्य वाद्य है। डमरू शंकर भगवान के दाए हाथ में रहता है जो कि अखण्ड महाकाल को नियंत्रित एवं संयमित करने का घोतक है।

दुदुम्भी – वैदिक काल में दुदुम्भी का अवनद्य वाद्य के रूप में विशेष स्थान था। दो प्रकार की दुदुम्भी प्रचलन में थी 1. भूमि दुदुम्भी जो कि पृथ्वी में गढ़ा खोद कर उसके मुख पर चमड़ा आच्छदित किया जाता था तथा चमडे को चमड़े की डोरी से कसा जाता था। 2. काष्ठ–दुदुम्भी में लकड़ी के खोल के उपर चमड़ा मढ दिया जाता था। मन्त्रों द्वारा दुदुम्भी का आवाहन किया जाता था।

मन्त्रों में शत्रु के नाश हेतु दुदुम्भी का प्रयोग होता था। काष्ठ दुदुम्भी को वनस्पति वाद्य भी कहा गया है। नगाड़ा, नक्कारा, घौंसा तथा दमामा, दुदुम्भी वाद्य के ही रूप हैं। इनके विभिन्न आकारों के कारण इनके नाम भिन्न हो गए। वर्तमान का नगाड़ा दुदुम्भी ही है। हिन्दी शब्द सागर में भी दुदुम्भी का अर्थ नागाड़ा तथा घौंसा दिया गया है। दुदुम्भी मंगल उत्सवों में तथा देव मन्दिरों में बजाई जाती थी। दुदुम्भी एक नग का वाद्य था। नगाड़ा में बडे आकार के साथ एक छोटा आकार भी जुड़ गया जिसमें छोटे की ध्वनि उंचे स्वर की तथा बड़े आकार की ध्वनि गम्भीर एवं नीचे स्वर की होती है। इसका प्रयोग शहनाई वाद्य की संगति एवं हरियाणा तथा राजस्थान के लोक संगीत में होता है। इसका वादन हाथ एवं लकडी दोनों से ही आवश्यकतानुसार किया जाता है।

मृदंग – यह एक अत्यन्त प्राचीन अवनद्य वाद्य है जिसके आविष्कारक भगवान शंकर को बताया गया है तथा भगवान गणेश ने सर्वप्रथम इसका वादन किया था। त्रिपुरासर के वध के पश्चात् उसके रक्त से जो कीचड़ बना उससे बह्मा ने मृदंग का निर्माण किया। वैदिक काल का मृदंग मिट्टी का बना होता था परन्तु महाभारत काल में यह लकड़ी का बनने लगा। लकड़ी से बने मृदंग की ध्वनि मिट्टी से बने मृंदग की ध्वनि से अधिक मधुर होती थी। कई ग्रन्थकारों ने लकड़ी के बने मृदंग को मधुर मृदंग भी कहा है। रक्तचन्दन लकड़ी से बना मृदंग को सबसे अच्छा माना जाता था। मृदंग दो मुखी वाद्य है जिसका दाहिना मुख आठ से दस अंगुली के व्यास का तथा बायां मुख इससे थोड़ा बड़ा होता था। इसकी लम्बाई लगभग डेढ हाथ के बराबर होती थी। दोनों मुख पर बकरे का चमड़ा लगाया जाता था। प्राचीन ग्रन्थों में मृदंग, मुरज तथा मर्दल शब्दों का प्रयोग मिलता है। भरत ने नाट्यशास्त्र में कहा है कि मांगलिक होने के कारण इसको मृदंग तथा मिट्टी से बने होने के कारण इसे मुरज कहा गया। मृदंग एवं मुरज एक दूसरे के पर्याय है शारंगदेव का मत भी यही था। शारंगदेव ने मृदल को भी मृदंग का प्रर्याय माना है।

पुष्कर – भरत ने मृदंग को पुष्करत्रय भी कहा है। भरत के समय में मृदंग के तीन भाग थे आंकिक, उर्ध्वक तथा आलिग्य जिनको त्रयपुष्कर भी कहा जाता था। आलिग्य एवं उध्वर्क को खड़ा कर तथा आंकिक को लेटाकर बजाते थे। पुष्कर वाद्य की रचना के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि स्वाति मुनि जब स्नान कर रहे थे तब उनको कमल पत्र पर पड़ने वाली जल धारा की ध्वनि ने आकर्षित किया तथा इसे सुनकर इन्होंने पुष्कर वाद्य का निर्माण किया। शारंगदेव के समय तक त्रयपुष्कर वाद्य का प्रचलन कम हो गया था। भरत ने आंकिक को हरीतकी के समान, उर्ध्वक को यवा अथवा जौं के समान तथा आलिग्य को गोपुच्छा की आकृति के समान बताया है। उर्ध्वक तथा आलिग्य का वादन एक मुख से होता था तथा आंकिक का वादन दोनों मुखों से होता था। मार्जन अर्थात स्वर स्थापना का वर्णन करते हुए भरत ने उर्ध्वक तथा आलिग्य का

नाम लिया तथा आंकिक हेतु नाम लिया बाम तथा दक्षिण भाग का जो आंकिक के दो मुखों को स्पष्ट करता है नाम लिया। आंकिक लेटा हुआ वाद्य होता है जो अंक (गोद) में रखकर दोनों मुखों से बजाया जाता था। इसी स्वरूप का बाद में मृदंग अथवा पखावज तथा दक्षिण का मृदंगम प्रचलन में आया। भरतकालीन मृदंग के तीन भाग अथवा त्रयपुष्कर थे परन्तु इनमें आंकिक भाग महत्वपूर्ण था। मृदंग के आकार एवं रूप का वर्णन करते हुए भरत ने पहले आंकिक का वर्णन किया है।

पुष्कर पर स्वर स्थापना का निश्चित नियम था जो मध्यग्राम, षडज ग्राम तथा गान्धार ग्राम के गान के लिए था। जिनको क्रमशः मायूरी मार्जना, अर्धमायुरी मार्जना तथा कार्मारवी मर्जना कहते थे। मायुरी मर्जना में बाम मुख को गान्धार, दक्षिण मुख को षड्ज तथा उर्ध्वक को पंचम स्वर में मिलाया जाता था। अर्धमायुरी मार्जना में बाम मुख को षडज, दक्षिण मुख को रिषभ तथा उर्ध्वक को पंचम स्वर में मिलाया जाता था। कार्मारवी मार्जना में बाममुख को रिषभ, दक्षिण मुख को षडज तथा उर्ध्वक को पंचम में मिलाया जाता था। पुष्कर का प्रचलन धीरे–धीरे कम हो गया तथा मध्यकाल आते–आते मृदंग लोकप्रिय हो गया।

भेरी – हिन्दी शब्द सागर में भेरी को ढोल, नगाड़ा तथा ढक्का बताया है। भेरी को मृदंग जाति का माना जा सकता है क्योंकि यह मृदंग की भाँति दो मुख वाला वाद्य है। भेरी को ढोल के अधिक पास माना जा सकता है, परन्तु नगाड़े का इससे कोई साम्य नहीं है। भेरी के दोनों मुख पर चमड़ा मढ़ा होता है तथा इसको दाहिनी ओर लकड़ी से तथा बांयी ओर हाथ से बजाते हैं, जो कि ढोल की वादन विधि भी है। भेरी का उल्लेख सभी प्राचीन ग्रन्थों में विशेषकर रामायण तथा महाभारत में मिलता है। भेरी का सुषिर वाद्य का स्वरूप भी प्राचीन काल से प्राप्त होता है। यह छः–सात फुट लम्बी धातु की बनी होती है जिसको फूंक कर बजाने का प्रचलन मध्यकाल में युद्ध तथा विवाहोत्सव के समय था। युद्ध के लिए दुदुम्भी वाद्य का प्रयोग किया जाता था किन्तु बाद में इसका स्थान अवनद्य वाद्य भेरी ने ले लिया। दुश्मन में भय उत्पन्न करने हेतु इसका प्रयोग किया जाता था। भेरी के साथ शंख का वादन भी किया जाता था। भेरी का वर्तमान रूप ढोल कहा जा सकता है।

पटह – पटह वर्तमान की ढोलक का स्वरूप है। संगीत पारिजात में पटह का अर्थ भी ढोलक ही दिया गया। मध्यकाल की ढोलक को प्राचीन काल में पटह कहा जाता था। पटह, भेरी तथा मृदंग जाति का वाद्य था जिसे लकड़ी एवं हाथ के आद्यात से आवश्यकतानुसार बजाया जाता था। मृदंग के बाद पटह ही लोकप्रिय वाद्य था। पटह वाद्य का प्रयोग मुख्यतः देशी संगीत के लिए किया जाता था जबकि मृदंग मार्गी संगीत तथा मध्यकालीन शास्त्रीय संगीत के लिए प्रयोग किया जाता था। मध्यकाल तथा वर्तमान काल में ढोलक का प्रयोग लोक संगीत में ही हुआ। इसका उल्लेख रामायण, महाभारत, नान्यदेव के भरत भाष्य, संगीत रत्नाकर आदि ग्रन्थों में मिलता है।

पणव – उत्तराखण्ड के लोक संगीत में प्रयोग होने वाला हुडका प्राचीन काल का पणव है। ये दो मुखी वाद्य है जिसके दोनों मुख कोमल चमड़े से मढ़े होते हैं जिनको सुतलियों के माध्यम से कसा जाता है। यह डमरू आकार का होता है, बीच में सुतली को ढीला रखा जाता है जिससे बीच में बांए हाथ से दबाकर नीची तथा उंची ध्वनि प्राप्त की जाती है। दाहिने मुख पर हाथ से प्रहार कर शब्द अथवा बोल निकाले जाते हैं तथा इसको कंधे पर लटका कर बजाया जाता है। प्राचीन काल के पणव को मध्यकाल में आवज, स्कन्धावज तथा हुडुक तथा वर्तमान में हुडका वाद्य के नाम से जाना जाता है।

दर्दर अथवा दर्दुर – यह मिट्टी का घड़ा है जिसका मुख लगभग सात से नौ अंगुल व्यास का होता है तथा विशेष बात यह कि इस पर मढ़ी खाल का व्यास मुंह से दो–तीन अंगुल अधिक होता है जिसको नीचे डोरी से बांध देते हैं। यह दोनों हाथों के आघात से बजाया जाता है तथा इस पर मृदंग पर प्रयोग होने वाले बोल ही बजाए जाते हैं। इस वाद्य को मृदंग वाद्य के साथ बजाने की प्रथा थी। भरत ने दर्दर वाद्य की चर्चा नाट्यशास्त्र में की तथा इसी दर्दर वाद्य को शारंगदेव ने घट कहा। मध्यकालीन घट में चमड़ा मुख के

व्यास के बराबर ही रखा जाने लगा। बिना मुख पर चमड़े वाला घट भी प्रयोग में आया जो कि वर्तमान में दक्षिण भारतीय संगीत में घटम के नाम से प्रयोग किया जाता है।

चक्रवाद्य अथवा करचक्र – यह गोलाकर आकार का लकडी का बना होता है। इसके एक मुख पर चमड़ा मढ़ा होता है जिसका व्यास लगभग दस अंगुलि का होता हैं। इसको कंधे के सहारे पर रखकर, बाएं हाथ से चमड़ा दबाया जाता है तथा दाहिने हाथ से चमड़े पर आघात किया जाता है। संगीतसार में चक्रवाद्य को खंजरी कहा गया है। मध्यकाल की खंजरी में तीन अथवा चार छोटी लकड़ी के घेरे को काटकर थोड़ी थोड़ी दूरी पर लगाई जाती है जिससे वादन के समय में ये झांझे झंकृत होकर मधुर ध्वनि उत्पन्न करती हैं। बिना झांझ वाली चक्रवाद्य का आकार बड़ा होने पर इसको ढफ कहा जाता है। अतः ढफ तथा खंजरी चक्र वाद्य के ही प्रकार हैं।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. सामवेद में प्रयोग होने वाले सप्तस्वर के नाम लिखिए।
2. सामगान हेतु प्रारम्भ में कौन से अवनद्य वाद्य का प्रयोग होता था?
3. महाभारत के अर्जुन कौन से वाद्य बजाते थे?
4. महाभारत के रचियता कौन थे?
5. पुराणों की संख्या कितनी है?
6. सात स्वर, तीन ग्राम, इक्कीस मूर्च्छना तथा उन्नचास तान का उल्लेख किस पुराण में किया गया है?
7. सामगान में स्त्रियों द्वारा कौन सी वीणा बजाई जाती थी?
8. ढोलक के समान प्राचीन काल में कौन सा वाद्य था?
9. भेरी के समान वर्तमान में कौन सा वाद्य है?
10. प्राचीन काल का पणव वर्तमान में कौन सा वाद्य है?

2.4 मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य

मध्यकाल में संगीत – 800 ई से 1800 ई तक का काल मध्यकाल के रूप में जाना जाता है। संगीत की दृष्टी से यह सबसे महत्वपूर्ण काल रहा क्योंकि इस काल में संगीत में कई उतार–चढ़ाव हुए। इस काल में आंशिक रूप से राजपूत काल तथा मुख्य रूप से मुगल काल समाहित है। राजपूत काल में भारत छोटे–छोटे भागों में विभक्त हो गया था तथा छोटे–छोटे राज्य बन गए थे। छोटे–छोटे राज्य आपस में ही युद्ध में व्यस्त रहते थे। प्राचीन काल की संगीत परम्परा इस काल में नहीं रही। संगीत राजदरबारों एवं विलासिता का अंग बन गया तथा शासक की इच्छा के अनुरूप की संगीत प्रयोग होने लगा तथा संगीत ने इसी वातावरण में सम्भवतः विकास किया। यद्यपि इस युग के उपलब्ध राग–रागिनी के चित्र यह दर्शाते हैं कि रजपूत वर्ग संगीत का प्रेमी था। महाकवि जयदेव ने गीत गोविन्द की रचना इसी काल में की तथा नारदीय शिक्षा ग्रन्थ का काल भी यही माना जाता है। इसी युग में मोहम्मद गजनी तथा शहाबुद्धीन गौरी ईरानी बादशाहों ने भारत पर आक्रमण किए। ईरान के बादशाह बहेरामन ने भारत के लगभग 1200 संगीतज्ञों को अपने यहां नौकरी पर रख लिया था। इस प्रकार धीरे–धीरे मुसलमानों का भारत मे प्रवेश हुआ।

भारत पर मुसलमान राजाओं की विजय से भारतीय संगीत पर प्रभाव पड़ा। इस काल में हिन्दु कलाओं के पतन का आरम्भ हुआ। भारत की पवित्र संगीत कला मुस्लिम धारा में विलय हो गई तथा इसका वैदिक–सौन्दर्य नष्ट हो गया।

1290 से 1320 ई को खिजली युग से जाना जाता है। अलाउद्दीन खिलजी संगीत का प्रेमी था एवं इनके दरबार में कवि एवं संगीतज्ञ अमीर खुसरो थे। भारतीय संगीत के सन्दर्भ में अमीर खुसरो विशेष चर्चा

में रहे। अमीर खुसरो को कई राग एवं तालों का आविष्कारक बताया जाता है। सितार एवं तबला वाद्य के अविष्कारक के रूप में भी अमीर खुसरो का नाम लिया जाता है जो कि ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर सिद्ध नहीं हो सका है। खिलजी युग में शारंगदेव ने संगीत रत्नाकर ग्रन्थ की रचना कर संगीत शास्त्र की प्रस्तुति की तथा भरत के कार्य को मध्यकाल में आगे बढाया। शारंगदेव के समय प्रबन्ध गायन प्रचलित था।

खिलजी युग के पश्चात तुगलक युग में संगीत का प्रचलन समाज में हुआ परन्तु गम्भीर शास्त्रीय संगीत के बजाय गजल, कव्वाली, ठुमरी तथा दादरा अधिक प्रचलित हुए।

बाबर के शासन काल से मुगल काल का आरम्भ हुआ। बाबर स्वयं संगीत प्रेमी था एवं संगीतज्ञों का सम्मान करता था परन्तु संगीत को वह केवल मनोरंजन का साधन ही समझता था। प्राचीन काल में संगीत को जो नैतिक एवं आध्यात्मिक स्तर प्राप्त था वह मध्यकाल में धुमिल हो गया। बाबर के पश्चात जब हुमायूं गद्दी पर बैठा तो उस समय सूफी लोग समाज में मानव उत्थान की बातों को संगीत के माध्यम प्रचारित करते थे। हिन्दू सन्तों ने भी यही कार्य किया जिससे संगीत की स्थिती स्थिर होने लगी। इसी काल में जौनपुर के बादशाह सुल्तान हुसैन शर्की में 1500 ई के लगभग ख्याल पद्धति को प्रचलित किया तथा नवीन रागों की रचना की।

अकबर का काल संगीत के लिए विशेष महत्व रखता है क्योंकि इसी काल में संगीत का पुनः उद्धार हुआ। इस काल में ही स्वामी हरिदास, तानसेन, बैज, रामदास, ब्रजचन्द, श्रीचन्द आदि संगीतज्ञ तथा सन्त कबीर, नानक, सूरदास, तुलसीदास, चैतन्य आदि ने संगीत के प्रचार–प्रसार में अमूल्य योगदान दिया। अकबर के दरबार में डागर गांव के निवासी ब्रजचन्द्र, खंडहार के निवासी राज समोखन सिंह, नौहार के श्रीचन्द राजपूत तथा तानसेन थे। इन महान संगीतज्ञों ने क्रमशः ध्रुपद की डागर वाणी, खंडहार वाणी, नौहार वाणी तथा तानसेन ने गोबरहार वाणी प्रचलित की। ध्रुपद की यह वाणी की यह परम्परा वर्तमान तक स्थापित है। तानसेन गौड ब्राहमण थे अतः उनकी शैली का नाम गोडीय अथवा गोबरहारी पडा। तानसेन की कन्या का विवाह समोखन सिंह के साथ हुआ था। अकबर के समय स्वामी हरिदास प्रसिद्ध संगीतज्ञ तथा सन्त हुए, तानसेन इन्हीं के शिष्य थे। तानसेन ने दरबारी कान्हड़ा, मियां की सारंग, मियां की मल्हार, साजागिरी आदि रागों का भी निर्माण किया। इस समय ध्रुपद गायन ही अधिक प्रचलित था। कबीर, सूर, नानक, तुलसी, मीरा ने अपने पदों को संगीतबद्ध कर समाज में फैली कुरीतियों को भजन शैली के माध्यम से जन चेतना जागृत की। संगीत के उत्थान में इन संत संगीतज्ञों का विशेष योगदान है। आज भी इन भक्त कवियों के पद बड़े आदर के साथ गाए जाते हैं। ये सभी सन्त संगीत के मर्मज्ञ थे।

अकबर का पुत्र जहांगीर तथा जहांगीर का पुत्र शाहजहां संगीत के प्रेमी थे। इन्होंने संगीत एवं संगीतज्ञों को पूर्ण आश्रय प्रदान किया जिससे संगीत के मौलिक सिद्धान्तों की रक्षा हुई। संगीत दरबारों की शोभा था तथा शासक की प्रशंसा में ही संगीत की रचनाएं हुई। संगीत, गाणिकाओं के जीवन यापन का साधन भी बन चुका था। जहांगीर के दरबार में छतरखां, विलास खां, खुर्रमदाद, परवेशदाद आदि कलाकार थे। पं दामोदर ने संगीत दर्पण की रचना जहांगीर काल में ही की थी।

इस काल में कत्थक नृत्य भी प्रचार में था। औरंगजेब को संगीत कला का दुश्मन समझा जाता है जिसका कारण उसके समक्ष संगीत का वह स्वरूप ही आया जो विलासित पूर्ण था। इस प्रकार के संगीत को उसने चरित्र के उत्थान में बाधा समझा तथा वह संगीत विरोधी हो गया। यद्यपि वह संगीत का आदर करता था। ऐतिहासिक तथ्यों में किरपा पखावजी को औरंगजेब ने 'मृदंग राय' की उपाधि से सम्मानित किया। बेगम एवं शहजादियों के मनोरंजन हेतु महल में गायन तथा नृत्य के कार्यक्रम हुआ करते थे।

मुहम्मदशाह रंगीले मुगल वंश के अन्तिम बादशाह थे जो की संगीत में निपुण थे। इनके दरबार में सदारंग एवं अदारंग संगीतज्ञ तथा वागेयकार थे। सदारंग तथा अदारंग ने सैकड़ो ख्यालों की रचना की जिसमें उनका नाम भी आता है। मुहम्मदशाह रंगीले का नाम भी ख्याल की रचनाओं में आता है जिनका संकलन पं भातखण्डे ने अपनी क्रमिक पुस्तक मालिका में किया है। ठुमरी एवं टप्पे का प्रचलन भी रंगीले के समय में ही हुआ। इस समय तक ध्रुपद गायन, ख्याल शैली, ठुमरी–दादरा, टप्पा, तराना आदि शैलियां प्रचलन में आ गई थी।

मध्यकाल के अवनद्य वाद्य – प्राचीन काल के सभी अवनद्य वाद्य का प्रचलन मध्यकाल में भी रहा परन्तु उनके नामकरण में परिवर्तन आया जिसकी चर्चा वैदिक काल में अवनद्य वाद्य के अर्न्तगत की जा चुकी है। मध्यकाल में ख्याल गायन शैली का प्रचलन प्रारम्भ हुआ जिसकी लय–ताल की संगति हेतु मृदंग वाद्य को उपयुक्त नहीं समझा गया। इसके लिए तबला वाद्य का निर्माण हुआ जिसकी ध्वनि ख्याल गायन शैली के लिए उपयुक्त थी। अतः मध्यकाल में अवनद्य वाद्य में तबले के द्वारा श्री वृद्धी हुई। तबला वाद्य सबसे अधिक लोकप्रिय वाद्य बन गया तथा इसका प्रयोग शास्त्रीय संगीत, उपशास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत यहां तक कि लोक संगीत में भी होने लगा। निम्न सूची से आप प्राचीन काल के अवनद्य वाद्य तथा उनके मध्यकाल में नाम से परिचित होएंगे।

प्राचीन काल	मध्यकाल
भेरी	ढोल
दर्दर/दर्दुर	घट, घटम (दक्षिण भारतीय संगीत)
चक्रवाद्य	खंजरी(झांझ वाली), ढ़पली(बिना झांझ वाली), ढ़प अथवा चंग(बडे आकार की ढ़पली)
काष्ठ दुदुम्भी	नगाडा
पणव	हुडुक अथवा हुड़का
पटह	ढ़ोलक
मृदंग	मृदंगम(दक्षिण भारतीय संगीत), मृदंग अथवा पखावज(उत्तर भारतीय संगीत)

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. महाकवि जयदेव ने गीत गोविन्द की रचना किस काल में की?
2. शारंगदेव के समय कौन सा गायन प्रचलित था?
3. सदारंग एवं अदारंग किस राजा के दरबार में संगीतज्ञ थे?
4. प्राचीन काल का दर्दर/दर्दुर वाद्य मध्यकाल में किस नाम से जाना जाता था?

2.5 तबले की उत्पति एवं विकास

तबले की उत्पत्ति – तबले की उत्पति कब, कैसे और किसने की इस पर अभी तक किसी निश्चित परिणाम पर नहीं पहुँचा जा सका है। इसके लिए संगीत विद्वानों ने प्राप्त तथ्यों के आधार पर अपने–अपने मत दिए हैं इनके आधार पर ही हम तबले की उत्पति के विषय में जानने का प्रयत्न करेंगे। सर्वप्रथम समझने का प्रयास करते है कि तबला शब्द कैसे एवं एक विशिष्ट अवनद्य वाद्य के लिए प्रतिष्ठित हुआ।

संगीत जगत के जन सामान्य में यह बात प्रचलित है कि मृदंग को बीच से काटकर दो भाग किए गए एवं इनको खड़ा करके बजाया गया जिसको तबला कहा गया। ये दो भाग मृदंग को काटने पर भी बोले अतैव तब भी बोला। इस शब्द का अपभ्रंश हो कर तब(भी)+ बोला=तब बोला >तबोला > तबला शब्द प्रचार में आया। परन्तु यह उक्ति तर्क संगत एवं वैज्ञानिक प्रतीत नहीं होती है। भरत कालीन युग में त्रिपुष्कर वाद्य का उल्लेख है। त्रिपुष्कर अर्थात तीन प्रकार के पुष्कर 'वाद्य'। इसमें दो पुष्कर उध्वर्क एवं आलिंग्य खड़े थे एवं तीसरा आंकिक पुष्कर लेटा हुआ था। अतः मृदंग से पूर्व त्रिपुष्कर वाद्य लय एवं ताल हेतु संगीत में प्रयुक्त होता था तथा पखावज को काटने की बात तर्क संगत नहीं लगती, जब कि उध्वर्क एवं आलिंग्य पुष्कर वाद्य पहले से ही विद्यमान थे। अतः यह सम्भव है कि पखावज एवं तबला दोनों ही त्रिपुष्कर वाद्य से प्रेरित होकर रचे गए हों। उध्वर्क एवं आलिंग्य से तबला एवं आंकिक से मृदंग अथवा पखावज। कुछ विद्वानों द्वारा तबले की उत्पति को भरत कालीन दुर्दर वाद्य से माना है। दुर्दर वाद्य के मुख पर चमड़ा लगाया जाता था एवं इसका मुख आकाश की ओर होता था परन्तु यह दो भागों में नहीं था,

तबले का स्वरुप दाएं एवं बाएं भाग से मिलकर ही है। अतः उक्त उक्ति तर्क संगत नहीं लगती है। तबले की रचना मृदंग से प्रेरित होकर ही हुई। मृदंग के वर्णन के बारे मे यह तथ्य प्राप्त होता है कि मृदंग तीन भागों मे था। एक भाग गोद मे रहता था दुसरे दोनों भाग उर्ध्वमुखी रहते थे। इन्हीं को भरत ने त्रिपुष्कर वाद्य भी कहा। मृदंग के दाएं वाले भाग जिसको स्वर मे मिलाया जाता था उसमें मिट्टी का लेप एवं बाएं वाले भाग मे आटा लगाया जाता था। बाद मे मिट्टी के लेप के स्थान पर लोहे का चूर्ण लगाया जाने लगा एवं बाएं भाग पर आटा ही रहा। पंजाब में आज भी बाएं तबले पर आटा लगाने की परम्परा है जो कि गुरुद्वारों मे रागी संगीत के साथ तबला वादन में मिलती है। पंजाब का तबला घराना भी पंजाब के पखावज घराने की ही देन है।

संगीत के विद्वानों द्वारा 'तबला' का सम्बन्ध 'तबल' से भी जोड़ा गया है। 'तबल' फारस का एक अवनद्य वाद्य है। इसका अविष्कार सिकन्दर ने फारस जीतने के बाद किया था। 'तबल' वास्तव में अरबी शब्द था जिसका प्रयोग फारसी में किया जाने लगा।

एक किवदंती के अनुसार अरब में संगीत के विद्वान 'लमक' के पुत्र 'टुबुल' ने 'तबल' वाद्य का अविष्कार किया था। एक अन्य मान्यता के अनुसार 'त' से ताल 'ब' से बोल एवं 'ल' से लय अर्थात ऐसा वाद्य जिसमें लय एवं ताल, वाद्य पर बजने वाले बोलों से प्रदर्शित हो तबला कहलाया। यह मान्यता प्राचीन मालूम नहीं होती वरन तबला वाद्य के स्थापित हो जाने के बाद वाद्य की व्याख्या को सरल भाषा में समझाने हेतु प्रयोग किया गया हो। तबला वाद्य की यह व्याख्या तर्क संगत लगती है। प्राचीन काल में तबला वाद्य के समरूप वादन शैली का कोई वाद्य हमें नहीं मिलता। तबला वादन का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। ख्याल गायकी एवं तन्त्र वाद्य पर गतकारी वादन शैली के साथ ही तबला वादन शैली स्थापित हुई एवं इसके पश्चात, समय के साथ तबला वादन शैली का विकास हुआ। अतः तबले के अविष्कार के सम्बन्ध में भी जानने की आवश्यकता है।

तबले के अविष्कारक के रूप में सामान्य रूप से 13वीं शताब्दी के हजरत अमीर खुसरो को माना जाता रहा है। हकीम मुहम्मद करम इमाम ने अपनी पुस्तक 'मादनुल मूसिकी' में हजरत अमीर खुसरो को 'तबल' वाद्य का अविष्कारक माना है यद्यपि उन्होंने तबल को ढोल जैसा वाद्य माना है। 'तबल' वाद्य ढोल एवं नगाड़े से सम्बन्धित माना गया है। 'तबल' वाद्य से तबला वाद्य को सम्बन्धित कर तबला वाद्य का अविष्कारक हजरत अमीर खुसरो को समझा जाने लगा एवं यह प्रचारित हुआ। हजरत अमीर खुसरो का समय तेरहवीं शताब्दी के उतरार्ध से चौदहवीं शताब्दी के पूर्वाध तब का है। हजरत अमीर खुसरो का जन्म सन् 1253 एवं मृत्यु सन् 1325 मानी जाती है। इन्होंने स्वयं अपने किसी ग्रन्थ में 'तबला' वाद्य का कोई जिक्र नहीं किया। परन्तु इस समय 'तबल' नाम से जिस अवनद्य वाद्य को जाना जाता था वह 'नगाड़ा' था जो कि युद्ध के समय बजाए जाने वाला वाद्य था। इसी समय अरब, फारस एवं तुर्की देशों में 'तबल' वाद्य प्रयोग में था परन्तु वह भी 'तबला' वाद्य जैसा नहीं था। हजरत अमीर खुसरो के तीन सौ वर्षो के बाद भी 'तबल' शब्द का प्रयोग युद्ध में बजाए जाने वाले अवनद्य वाद्य नगाड़े के लिए किया जाता था जिसका प्रकरण 'गुरूग्रन्थ साहब' एवं मलिक मोहम्मद जायसी के 'पद्मावत' में मिलता है। हजरत अमीर खुसरो के समय तेरहवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक अवनद्य वाद्य के रूप में 'तबला' का उल्लेख कहीं भी प्राप्त नहीं होता है अतः 'तबला' वाद्य हजरत अमीर खुसरो के बाद अठ्ारवीं शताब्दी में ही स्थापित हुआ।

मध्य युग एवं अकबर के युग में भी किसी तबला वादक का कोई प्रसंग प्राप्त नहीं होता है। उस समय भी भगवान दास, फिरोज खाँ(पंजाब), कृपा राय पखावज वादकों का उल्लेख प्राप्त होता है। कृपा राय को औरंगजेब द्वारा मृदंग राय की उपाधि से भी सम्मानित किया गया था। पंजाब के फिरोज खाँ के शिष्यों द्वारा बाद में तबले के पंजाब घराने को स्थापित किया गया। मुगल काल में अलग–अलग समय पर खुसरो नाम के तीन भिन्न व्यक्तियों का संगीत से सम्बन्ध रहा है। पहले तेरहवीं शताब्दी के हजरत अमीर खुसरो जिनके कव्वाली गायन, तबला, सितार वाद्य एवं राग सरपरदा, साजगिरी, झिल्लफ आदि रागों के अविष्कारक के रूप में प्रचारित किया गया। दूसरे खुसरो खाँ जो कि मूलतः गुजरात के थे जिन्हें खिलजी शासन काल में गुजरात से बन्दी बनाकर दिल्ली लाया गया और वे बाद में मुसलमान हो गए थे जो खुसरो खाँ नाम से प्रसिद्व हुए। बाद में इन्हीं खुसरो खाँ ने चार महीने दिल्ली पर भी राज्य किया एवं इनको नासिरूद्दीन उपाधि भी प्राप्त हुई थी। इन दोनों को ही तबला अविष्कारक मानना तर्क संगत नहीं है।

तीसरे खुसरों खाँ अठारवीं शताब्दि के मुहम्मद शाह रंगीले के समय के है। ये सुप्रसिद्व ख्याल रचियता नेमत खाँ जिनका उपनाम सदारंग था के छोटे भाई एव शिष्य थे। सुबोध नन्दी ने अपनी पुस्तक 'तबलार कथा' में बंगाल के सुप्रसिद्व संगीतज्ञं गोपेश्वर बन्दोपाध्याय द्वारा लिखित एक पत्र की चर्चा की जिसमें उन्होने तबला के अविष्कार का श्रेय इस अठ्ारवीं शताब्दि के खुसरो खाँ को दिया एवं इनका उल्लेख द्वितीय अमीर खुसरो के नाम से किया। गोपेश्वर बन्दोपाध्याय के पत्र के अनुसार – ''सम्राट अलाउद्दीन की सभा के अन्यतम विद्वान अमीर खुसरो खाँ तबला अविष्कारक कह कर अनेक लोग भूल करते हैं। मुगल बादशाह द्वितीय के समय सन् 1738 में रहमान खाँ नामक विख्यात पखावजी के पुत्र द्वितीय अमीर खुसरो ने कुछ दिन ख्याल गान सीखा था एवं इसी की संगत करने के लिए वर्तमान तबला वाद्य का अविष्कार किया''

गोपेश्वर बंदोपाध्याय के अनुसार ''विष्णुपुर के विख्यात गायक स्वर्गीय गदाधर चक्रवती के छोटे भाई स्वर्गीय मुरलीधर चक्रवती दिल्ली गए थे एवं सबसे पहले उन्होंने सदारंग एवं उनके शिष्य अचपल से ख्याल गान सीखा। वे जब विष्णुपुर लौटे, तब मेरे पिता स्वर्गीत अनन्त लाल बंधोपाध्याय को बताया कि जब सदारंग ने ख्याल की रचना की तो प्रारम्भ में उसके साथ पखावज की संगत होती थी। परन्तु सदारंग को ख्याल गायन के साथ पखावज की संगत उपयुक्त नहीं लगी तब उनके शिष्य द्वितीय अमीर खुसरो ने तबला वाद्य की रचना की।

अतः उपरोक्त तथ्यों से यही निष्कर्ष निकलता है 'तबला' वाद्य के अविष्कारक अमीर खुसरो (द्वितीय) हैं जो मुहम्मद शाह रंगीले के समय के है ना कि हजरत अमीर खुसरो जो कि अलाउद्दीन खिलजी के समय के।

<u>तबले का विकास</u> – यह निश्चित है कि तबला वाद्य का निर्माण ख्याल गायन की संगत के लिए किया गया और बाद में इसकी विभिन्न वादन शैली विकसित हुई जो तबले के घरानों के नाम से जानी गई। सिद्धार खाँ ढाढ़ी को तबला वाद्य का मूल प्रवर्तक माना जाता है। अमीर खुसरो ने तबले की रचना की एवं सिद्धार खाँ ढाढ़ी ने इसकी वादन शैली स्थापित कर इसे विकसित किया। सिद्धार खाँ ढाढ़ी को दिल्ली घराने का प्रथम पुरूष माना जाता है एवं दिल्ली घराने को ही तबले का सबसे पुराना घराना माना जाता है। तबले के मुख्य छः घराने माने जाते हैं– दिल्ली, अजराडा, लखनऊ, फरूखाबाद, बनारस एवं पंजाब। दिल्ली घराने के वंशजों द्वारा अजराड़ा एवं लखनऊ घराने की स्थापना हुई। लखनऊ घराने के कलाकारों द्वारा शिष्य तैयार कर फर्रूखाबाद घराना एवं बनारस घराने की नींव पड़ी। पंजाब घराना स्वतन्त्र रूप से पखावज वादन शैली से विकसित हुआ। इन घरानों के विकास क्रम से तबले की वादन शैली विकसित हुई, जिसने तबले को लोकप्रिय अवनद्य वाद्य बनाने मे महत्वपूर्ण योगदान दिया। तबले के घरानों का विस्तृत परिचय आप तबला एवं पखावज के घराने की इकाई में प्राप्त करेंगे।

तबला वाद्य के विकास में पखावज के साथ–साथ ढोलक, नक्कारा, ताशा आदि अनेक वाद्यों की वादन शैली का महत्वपूर्ण योगदान है। तबले पर लग्गी–लड़ी का प्रयोग ढ़ोलक एवं ताशा की वादन शैली का प्रभाव है। पखावज की विभिन्न रचनाएं भी तबला वादन शैली में परिवर्तित कर बजाई जाती हैं। नाना पानसे की विभिन्न रचनाएं तबले पर बजाई जाती हैं। खब्बे हुसैन ढोलकिए की गतें एवं टुकडे भी तबले पर प्रयोग किए जाते हैं। तबला वादन शैली के लिए मुख्य रुप से कायदा, पेशकार, रेला बनाए गए थे जिनका विभिन्न घरानो में अपनी वादन शैली के अनुसार विकास हुआ। पखावज पर भी रेले, गतें एवं परनें बजाई जाती थी। तबले के वर्णों से गतें एवं परनें निर्मित की गई। कायदा, पेशकार के विकास में मुख्य रुप से दिल्ली घराने का योगदान है यद्यपि बाद मे अजराड़ा एवं लखनऊ घराने में इनको अपने घराने की वादन शैली के अनुसार विकसित किया। तबले की गतों मे महत्वपूर्ण योगदान फर्रुखाबाद घराने का रहा एवं फर्रुखाबाद घराने की गतें प्रसिद्ध हुई।

पंजाब एवं बनारस घराने द्वारा अपनी स्वतंत्र वादन शैली विकसित की गई। पिछले पाँच दशकों में तबले के विकास एवं लोकप्रिय बनाने मे देहली घराने के उस्ताद नत्थू खां एवं उस्ताद इनाम अली खां के शिष्यों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। देहली घराने के उस्ताद लतीफ खां एवं शफात हुसैन खां लोकप्रिय तबला वादक हुए जिन्होंने एकल वादन एवं गायन, वाद्य एवं नृत्य की संगत कर देहली घराने को लोकप्रिय

बनाया। उस्ताद अहमद जान थिरकवा जो कि उस्ताद नत्थू खां(देहली) एवं उस्ताद मुनीर खां(फरुखाबाद) के शिष्य थे, ने अपने समय में तबला वादन के क्षेत्र मे खूब ख्याति अर्जित की। अजराडा घराने के उस्ताद हबीबुद्दीन खां एवं उनके शिष्य रमजान खां ने अजराडा घराने को लोकप्रिय बनाया। दक्षिण भारत में उस्ताद शेख दाउद ने तबले का भरपूर प्रचार–प्रसार किया एवं तबला वादन में शिष्य तैयार किए, जिन्होंने स्थान–स्थान पर तबले का प्रचार एवं प्रसार किया। बंगाल मे फर्रुखाबाद घराने के उस्ताद मसीत खां, उनके पुत्र करामतुल्ला खां ने तबले के विकास क्रम मे अपना योगदान दिया। वर्तमान मे उस्ताद करामतुल्ला के पुत्र शाबिर खां इस परम्परा में अपना योगदान दे रहे हैं। लखनऊ में उस्ताद मुन्ने खां ने भी तबले का प्रचार किया एवं स्व0 बेगम अखतर के साथ संगत कर विशेष ख्याति अर्जित की। बनारस घराने के मूर्धन्य कलाकार पं0 अनोखे लाल, कण्ठे महाराज, पं0 किशन महाराज, पं0 सामता प्रसाद(गुदई महाराज), पं0 रंगनाथ मिश्रा आदि ने बनारस घराने की वादन शैली को विकसित करने मे महत्पूर्ण योगदान दिया। पंजाब घराने की वादन शैली में तबले के अनुरुप उस्ताद अल्लारखा खां द्वारा तबले की वादन शैली विकसित की गई एवं वर्तमान मे इनके पुत्र जाकिर हुसैन इस परम्परा को आगे बढा रहे हैं।

वर्तमान मे तबले की वादन शैली में जो विकास हुआ है एवं तबला सबसे अधिक लोकप्रिय अवनद्य वाद्य के रुप में संगीत के क्षेत्र मे प्रतिष्ठित है इसका श्रेय सभी तबला वादको को जाता है।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. तबले का अविष्कारक कौन था?
2. तबले की वादन शैली किसने स्थापित की?
3. तबले का मूल घराना कौन सा है?

2.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप प्राचीन काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों के विषय में जान चुके होंगे। आप मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों को जान चुके होंगे। आप यह भी जान चुके होंगे कि प्राचीन काल एवं मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों में क्या–क्या समानताएं एवं विषमताएं हैं। आप तबले की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में भी जान गए होंगे। तबले की उत्पत्ति के विषय में कई मान्यताएं है किन्तु इसका इतिहास लगभग 300–350 वर्ष पुराना माना गया है।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.3 क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, कुष्ट व अतिस्वर
2. भूमि दुदुम्भी
3. पखावज तथा वीणा
4. वेद व्यास
5. अठारह पुराण
6. वायुपुराण
7. पिच्छौरा वीणा
8. पटह
9. ढ़ोल
10. हुडका

2.4 क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. मध्यकाल
2. प्रबन्ध गायन
3. मुहम्मद शाह रंगीले
4. घट/घटम

2.5 क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. खुसरो खां द्वितीय
2. सिद्धार खां
3. देहली

2.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. भरत, *नाट्यशास्त्र(अनु0–श्री बाबू शुक्ल शास्त्री),* चौखम्बा पब्लिकेशन, वाराणसी, उ0प्र0।
2. मिश्र, डॉ0 लालमणि, *भारतीय संगीत वाद्य,* भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली।
3. बृहस्पति, आचार्य, भरत का संगीत सिद्धान्त।
4. कसेल, डॉ0 नवजोत कौर, *तत् वाद्यों की जननी वीणा,* निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली।
5. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
6. चौधरी, डा0 सुभाष रानी, *संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धान्त,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
7. बंसल, डॉ0 परमानन्द, *संगीत सागरिका,* प्रासंगिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
8. शुक्ल, योगमाया, तबले का उदगम, विकास एवं वादन शैली।
9. मिस्त्री, आबान ई0, पखावज और तबला के घराने एवं परम्पराएं।
10. सेन, अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन।

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्राचीन काल में प्रयुक्त होने वाले अवनद्ध वाद्यों के बारे में विस्तार से समझाइए।

इकाई 3 – तबला वादन(एकल वादन एवं संगत)

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 एकल वादन – तबला
3.4 शास्त्रीय गायन के साथ संगत
3.4.1 ख्याल गायन के साथ संगत
3.4.2 ध्रुपद गायन के साथ संगत
3.5 स्वर वाद्यों के साथ संगत
3.5.1 स्वर वाद्यों का परिचय
3.5.2 स्वर वाद्यों के साथ संगत
3.6 नृत्य के साथ संगत
3.7 सारांश
3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के प्रथम खण्ड की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास(विशेष रूप से मध्यकाल के बाद से आधुनिक काल तक) के विषय में बता सकते हैं। आप प्राचीन व मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों को भी जान चुके होंगे। आप तबले की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में एकल वादन एवं संगत के सन्दर्भ में चर्चा की गई है। इस इकाई में हम एकल वादन एवं संगत का अध्ययन उत्तर भारतीय संगीत के सन्दर्भ में ही करेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप समझ सकेंगे कि एकल वादन में किस प्रकार का वादन किया जाता है तथा तबले की रचनाओं का क्या क्रम रहता है। आप शास्त्रीय गायन, स्वर वाद्यों एवं नृत्य के साथ संगत के विषय में भी समझ सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- तबले का सफल, सुन्दर एवं प्रभावशाली एकल वादन प्रस्तुत कर सकेंगे।
- शास्त्रीय गायन के साथ प्रभावशाली संगत कर सकेंगे।
- स्वर वाद्यों के साथ प्रभावशाली संगत कर सकेंगे।
- नृत्य के साथ प्रभावशाली संगत कर सकेंगे।

3.3 एकल वादन – तबला

अवनद्ध वाद्य तबला मुख्य रूप से संगीत में लय एवं ताल हेतु प्रयोग में लाए जाते थे। परन्तु पिछले पांच दशकों से संगीत सभाओं में इनका स्वतंत्र वादन भी होने लगा है जिसको एकल वादन भी कहते हैं। इस इकाई में अवनद्ध वाद्य तबला के प्रभावशाली एकल वादन प्रस्तुतीकरण एवं शास्त्रीय गायन एवं नृत्य के साथ संगत का अध्ययन करेंगे। एकल वादन में कलाकार अपनी शिक्षा एवं अर्जित की गई रचनाओं के ज्ञान को प्रस्तुत करता है। एकल वादन में रचनाओं के क्रम को निश्चित करने पर अध्ययन किया जाएगा। सुन्दर एवं प्रभावशाली एकल वादन हेतु जिन–जिन बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए, उस पर चर्चा की जाएगी। एकल वादन में ताल की मात्रा एवं आवृति हेतु स्वर वाद्य जैसे सारंगी, वायलिन अथवा हारमोनियम पर एक धुन स्थापित की जाती है और यही धुन समान रूप से पूरे एकल वादन में बजाई जाती है। इस धुन को नग्मा या लहरा कहा जाता है।

तबला एकल वादन की प्रस्तुतीकरण में आपने जितनी रचनाएं सीखी हैं उन सभी को व्यवस्थित कर प्रस्तुत करना होता है। प्रभावशाली एकल वादन में मुख्य भूमिका रचनाओं के क्रम की होती है तथा अपने सारे ज्ञान को एकल वादन के माध्यम से श्रोताओं तक पहुंचाना ही कलाकार का मुख्य उद्देश्य होता है। तबला में मुखड़ा, मोहरा, उठान, पेशकार, कायदा, रेला, टुकड़ा, गत, परन एवं चक्करदार रचनाओं के सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक पक्ष का अध्ययन आप पूर्व में कर चुके हैं। इन सब रचनाओं को क्रम में बांधकर एकल वादन प्रस्तुत किया जाता है। सर्वप्रथम जिस ताल में भी एकल वादन प्रस्तुत किया जाना है, उस ताल के निश्चित बोल जिसको ठेका कहते हैं व जिससे ताल की पहचान भी की जाती है, कुछ आवृति में ठेका बजाया जाता है जिससे कलाकार एवं श्रोताओं के मध्य ताल स्वरूप स्थापित हो जाए एवं श्रोता आगे प्रस्तुत होने वाली रचनाओं का पूर्ण आनन्द ले। इसके पश्चात उठान बजाते हैं।

उठान के कोई निश्चित बोल नहीं होते हैं। कुछ बोलों के समूह को आधी आवृति अथवा एक आवृति में बजाकर ठेके पर वापस आया जाता है। बनारस घराने की वादन शैली में लम्बी उठान बजाने की प्रथा है जो कि चार आवृति तक की भी हो सकती है। चूंकि यह आपके वादन की प्रथम रचना है अतः इसके सुन्दर एवं प्रभावशाली होने पर ही आपका वादन सफल होगा, यद्यपि सभी रचनाओं का अपना महत्व है।

उठान के पश्चात तबले पर पेशकार बजाया जाता है। पेशकार मध्य लय की रचना होती है परन्तु बीच–बीच में विभिन्न लयकारीयों के बोल समूह को बजाकर इसको आकर्षक बनाया जाता है। पेशकार वादन से कलाकार के ज्ञान का परिचय प्राप्त होता है एवं कलाकार किस प्रकार का वादन प्रस्तुत करने वाला है, इसका भी आभास हो जाता है। पेशकार को प्रस्तावना अथवा भूमिका के रूप में भी समझा जा सकता है। किसी भी विषय की प्रस्तावना जितनी सुन्दर एवं प्रभावशाली होगी उतनी ही विषय की व्याख्या पाठकों को रूचिकर लगती है, अतः पेशकार यदि सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया जाएगा तो कलाकार एवं श्रोता दोनों ही पूरे वादन का आनन्द लेंगे। अतः प्रस्तावना की भांति ही पेशकार का वादन आरम्भ में किया जाता है।

पेशकार वादन के पश्चात विभिन्न प्रकार के बोलों से निर्मित एवं भिन्न–भिन्न लयकारियों के कायदे बजाए जाते हैं। कायदों का क्रम एवं चयन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे आपके वादन में एकरसता स्थापित ना हो पाए। कायदा, देहली एवं अजराडा घराने की विशेषता है। देहली घराने के कायदे चतुस्त्र एवं अजराडा घराने के कायदे तिस्त्र जाति के लिए प्रसिद्ध हैं। सामान्य भाषा में तिस्त्र जाति के कायदे को आड लय का कायदा एवं चतुस्त्र जाति के कायदे को बराबर लय का कायदा कहा जाता है।

कायदे का प्रस्तार कायदे के बोलों के पल्टो से किया जाता है। सुन्दर पल्टों से श्रोता आकर्षित होते हैं। कायदा वादन में कायदे बोल समूह को दुगुन एवं चौगुन लय में बजाकर इसी लय में पल्टे प्रस्तुत किए जाते हैं एवं अन्त में तिहाई बजाकर कायदा समाप्त किया जाता है। सुन्दर पल्टे कायदे की जान होती हैं एवं इससे तबला वादक की कल्पना एवं उपज अंग का परिचय मिलता है। एक कायदे के पल्टे अलग–अलग वादक द्वारा भिन्न–भिन्न रूप में वादक की शिक्षा, अभ्यास एवं सामर्थ्य के अनुसार प्रस्तुत किए जाते हैं। देहली एवं अजराडा घराने के अतिरिक्त अन्य घरानों में भी कायदा बजाने की प्रथा है परन्तु इनके बोलो का समूह घराने की शैली के अनुसार होता है एवं पल्टे भी उसी शैली के अनुरूप प्रस्तुत किए जाते हैं। कायदे के प्रस्तुतीकरण से कलाकार के घराने का स्पष्ट परिचय हो जाता

है यद्यपि तबले की अन्य रचनाओं में घराने को लेकर विवाद भी रहता है। अतः एकल वादन में कायदा वादन का प्रमुख स्थान है एवं यह अपने आप में एक वादन शैली है।

विभिन्न प्रकार के कायदों के प्रस्तुतीकरण के पश्चात रौ एवं रेले प्रस्तुत किए जाते हैं। कायदों की अपेक्षा रेले एवं रौ की संख्या वादन में कम रहती है। रेले, एक से अधिक भिन्न बोल समूहों से निर्मित कर प्रस्तुत किए जा सकते हैं। रेला सुनने में एक जैसा ही प्रतीत होता है अतः एकल वादन में रेलों का चयन एवं उनके बोलों का चयन करने में गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता होती है अन्यथा वादन में एकरसता आ सकती है जो कि श्रोताओं को ऊबा सकती है। रेला, दो प्रकार का होता है, कायदा से निर्मित रेला एवं स्वतंत्र रेला। कायदे से निर्मित रेले में कायदे के बोलों के वजन के अनुसार रेला बनाया जाता है। चाल, एक छन्दों से भी इसी प्रकार रेला बनाया जाता है जिसको रौ भी कहते हैं। अतः रौ का वादन स्वतंत्र रेला बजाने से पहले किया जाता है। रौ अथवा रेले के एक दो पल्टे प्रस्तुत कर कायदे की भांति ही तिहाई से समाप्त किया जाता है।

रेला बजाने के पश्चात तबले की विभिन्न रचनाएं प्रस्तुत की जाती हैं। रचनाएं जैसे टुकड़ा, गत, परन एवं चक्करदार रचनाएं निश्चित होती हैं एवं इन सभी को सभी वादकों द्वारा समान रूप में बजाया जाता है। प्रत्येक घराने की गत निर्मित हैं। विभिन्न लयकारी एवं यति भेद की गतों की प्रस्तुती से वादक की विद्वता परिलक्षित होती है। तीनताल के एकल वादन में इन रचनाओं की आधार लय मध्य अथवा द्रुत रहती है। कलाकार द्वारा अलग–अलग घरानों की रचना प्रस्तुत करने से एकल वादन आकर्षक हो जाता है। रचनाओं का क्रम छोटी रचना से बड़ी रचना होता है। इन रचनाओं को मुंह से पढ़ने की परम्परा भी एकल वादन में है। अतः रचना को बजाने से पूर्व लहरे अथवा नग्में के साथ रचना के बोलों की पढन्त की जाती है। स्पष्ट एवं सुन्दर पढन्त भी एकल वादन को प्रभावशाली बनाती है।

यदि गत–कायदा की रचना कलाकार के पास होती है तो रेले के पश्चात गत–कायदा बजाया जाता है। गत कायदा को ढाठ, दुगुन लयकारी के पश्चात एक–दो पल्टे बजाने के पश्चात तिहाई से समाप्त करते हैं। तबला एकल वादन में रचनाओं का क्रम निम्न रहता है।

उठान, पेशकार, कायदा, गत कायदा, रेला, रौ, टुकडा, गत, परन, सादी चक्करदार, फरमाइशी चक्करदार, कमाली चक्कदार, किसी रचना से समापन।

3.4 शास्त्रीय गायन के साथ संगत

अभी तक आपने अवनद्य वाद्य तबला के मुक्त एवं स्वतंत्र वादन का अध्ययन किया है। अवनद्ध वाद्य का मुख्य प्रयोजन लय एवं ताल दिखाने के लिए होता है जिसका प्रयोग गायन, वादन एवं नृत्य में संगत के रूप में किया जाता है। इस भाग में हम शास्त्रीय गायन के साथ तबला एवं पखावज की संगत के बारे में जानेंगे।

शास्त्रीय संगीत की इस विधा में राग स्वर एवं लय–ताल का सुन्दर संयोजन कर प्रस्तुत किया जाता है। शास्त्रीय गायन के अन्तर्गत ख्याल गायन एवं ध्रुपद गायन शैली आते हैं। ख्याल गायन के साथ तबला एवं ध्रुपद गायन शैली के साथ पखावज वाद्य की संगत की जाती है।

3.4.1 ख्याल गायन के साथ संगत – ख्याल गायन के अन्तर्गत विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय की रचना गाई जाती है। विलम्बित लय की रचना को बड़ा ख्याल एवं मध्य व द्रुत लय की रचना को छोटा ख्याल कहा जाता है। बड़ा ख्याल, विलम्बित एकताल, झूमरा ताल, तिलवाडा आदि तालों में गाया जाता है। तीनताल, रूपकताल एवं झपताल में भी बड़ा ख्याल सुना जाता है परन्तु इन तालों की लय इतनी विलम्बित नहीं होती है जितनी एकताल, झूमरा एवं तिलवाड़ा ताल की रहती है। बड़े ख्याल की रचना का मुखड़ा एक मात्रा से लेकर चार मात्रा तक का होता है। बड़े ख्याल की लय प्रायः 2 मात्रा में एक मात्रा की ही रहती थी एवं अभी भी आगरा एवं ग्वालियर घरानों में विलम्बित ख्याल की लय भी यही रहती है। अतः इन रचनाओं में मुखड़ा दो मात्रा से चार मात्रा तक का होता है। ख्याल के किराना एवं इन्दौर घराने में बड़े ख्याल की लय अति विलम्बित रहती है, आगरा एवं ग्वालियर घराने की अपेक्षा आधी लय। ग्वालियर एवं आगरा घराने की विलम्बित लय के ठेके को चौबीस मात्रा की एकताल भी सामान्य भाषा में कहा जाता है। तबला वादक को बड़े ख्याल के साथ ताल का ठेका बोलों के भराव के

साथ बजाना होता है। बोलों का भराव ऐसा हो कि ताल की प्रत्येक मात्रा स्पष्ट हो एवं गायक को किसी प्रकार की असुविधा न हो।

गायक के मुखड़े के साथ तबला वादक भी परिस्थिति एवं गायक की इच्छानुसार एक से चार मात्रा तक की तिहाई अथवा बिना तिहाई बोल बजाकर वादक/गायक के साथ सम पर आता है। मुखड़े का बोल भी ऐसा होना चाहिए जिससे गायक को असुविधा न हो। उदाहरण के लिए एक से चार मात्रा तक के बोल गायक के साथ प्रयोग हेतु नीचे दिए जा रहे हैं।

एक मात्रा का बोल – तिरकिटतक तिरकिटतक किरकिट । सम
1

दो मात्रा का बोल –
तिरकिटतक तिरकिटतक तिरकिट तातिरकिटतक तिरकिटधाती । सम
1 2

तीन मात्रा का बोल तिहाई युक्त –
तिरकिटतकतिरकिटकिट तातिराकिटतककिटकिटधाती
1 2
धाडधाती धाडधाती । सम
3

चार मात्रा का बोल तिहाई युक्त –
तिरकिटकिट किरतक तिरकिट तातिरकिटतकतिरटधाती
1 2
धाऽधाती धाडधाती । सम
3 4

ऊपर दिए गए बोलों का उदाहरण अतिविलम्बित लय के लिए दिया गया, ये ही बोल विलम्बित लय में भी बजेंगे। एक मात्रा का बोल दो मात्रा का एवं दो मात्रा का बोल चार मात्रा का तथा चार मात्रा का बोल आठ मात्रा का हो जाएगा। उपरोक्त बोल बजाने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होगी चूंकि ये बोल चौगुन अथवा अठगुन लय के हैं(आधार लय के अनुसार)।

बड़े ख्याल के गायन के पश्चात मध्य व द्रुत की रचनाएं अथवा छोटा ख्याल गाया जाता है। ये रचनाएं तीनताल, एकताल व आडाचारताल आदि में होती हैं। छोटा ख्याल आरम्भ करने के साथ ही तबला वादक एक से चार आवृति तक का बोल बजाकर गायक के साथ सम पर आता है। इसमें गायक केवल छोटे ख्याल की स्थाई की पहली पंक्ति ही गाता है। तबला वादक के इस वादन से कार्यक्रम में स्फूर्ति आती है तथा एक गायक के विश्राम के साथ श्रोता भी आनन्दित होते हैं।

छोटे ख्याल में मुख्य रूप से गायक द्वारा तान का प्रयोग किया जाता है। अतः गायक के द्वारा तान समाप्ति पर गायक की इच्छानुसार तबला वादक कुछ आवृति में बोल बजाता है। बोलों का चयन ऐसा होना चाहिए जिससे गायन का भाव–रस भंग न हो। गायक द्वारा लय के साथ सरगम भी प्रस्तुत की जाती है इसमें यदि गायक चाहे तो तबला वादक सरगम के साथ–साथ ही बोल बजाता है जिसे साथ संगत कहते हैं। इससे गायन में विशेष आकर्षण पैदा होता है एवं तबला वादक के कौशल का भी परिचय होता है।

छोटे ख्याल के पश्चात अति द्रुत लय में तराना की प्रस्तुति भी की जाती है एवं इसको भी ख्याल गायन की श्रेणी में ही रखा गया है। यह आवश्यक नहीं की प्रत्येक गायक अपने कार्यक्रम में तराना की भी प्रस्तुती करे। तराना मुख्य रूप से तीनताल में गाया जाता है यद्यपि एकताल, आडाचारताल, पंचमसवारी आदि तालों में भी गाया जाता है परन्तु इन तालों में तराना अति द्रुत लय में नहीं गाया जाता है। तराने में प्रायः केवल तबले का ठेका ही बजाया जाता है। तराना में तबले के बोलों को भी गाया जाता है जो कि तराना की रचना का अंग होता है अतः इसमें तबला वादक द्वारा साथ–संगत की जाती है। अतिद्रुत लय के तीनताल का शुद्ध ठेका श्रोताओं का मंत्र मुग्ध कर देता है। इसके लिए पं0 अनोखे लाल तबला वादन के क्षेत्र में प्रसिद्ध हुए। शास्त्रीय गायन की संगत करते समय गायक को बड़ी सावधानी से तबला वादक को सुनना चाहिए जिससे वह उचित बोलों का प्रयोग उचित स्थान पर करे। तबला वादक को यदि गायन का भी ज्ञान है तो वह उत्तम संगत करेगा। पहले के

समय में संगीत के विद्यार्थी को गायन एवं तबला दोनों की ही शिक्षा दी जाती थी एवं उसके पश्चात गुरू विद्यार्थी की क्षमता को पहचान एवं परख कर उसको किसी एक विद्या में शिक्षा हेतु प्रेरित करता था। तबला वादक को निरन्तर अभ्यास एवं संगत करने की आवश्यकता होती है। गायक की निरन्तर संगत करने से तबला वादक को गायन का भी ज्ञान हो जाता है चूंकि वर्तमान समय में पूर्व की परिपाटी का निर्वाह करना कठिन हो रहा है। गायन के कार्यक्रम की सफल, सुन्दर एवं प्रभावशाली प्रस्तुती में तबला वादक का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। चूंकि गायन का आधार लय एवं ताल रहती है एवं तबला वादक को स्पष्ट लय एवं ताल दिखाने की आवश्यकता होती है।

ख्याल गायन में प्रयुक्त होने वाली तालें :–

1. एकताल – मात्रा 12

धिं धिं । धागे तिरकिट । तू ना । क ता । धागे तिरकिट । धी ना। धिं

X 0 2 0 3 4 X

2. झूमरा ताल – मात्रा 14

धिं ऽधा तिरकिट । धिं धिं धागे तिरकिट । तिं ऽता तिरकिट। धिं धिं धागे तिरकिट । धिं

X 2 0 3 X

3. तिलवाडा ताल – मात्रा 16

धा तिरकिट धिं धिं । धा धा तिं तिं ।ता तिरकिट धिं धिं । धा धा धिंधिं । धा

X 2 0 3 X

4. झपताल – मात्रा 10

धि ना । धि धि ना । ति ना । धि धि ना । धि

X 2 0 3 X

5. रूपक ताल – मात्रा 7

ति ति ना । धि ना । धि ना । ति

0 2 3 X

6. आड़ाचार ताल – मात्रा 14

धिं तिरकिट । धी ना । तू ना । क ता । तिरकिट धी । ना धी । धीना । धिं

X 2 0 3 0 4 0 X

7. पंचमसवारी ताल – मात्रा 15

धि ना धीधी। कत धीधी नाधी धीना ।तिऽक तीना तिरकिट तूना । कता धीधी नाधी धीना। धि

X 2 0 3 X

8. तीनताल – मात्रा 16

धा धिं धिं धा । धा धिं धिं धा ।धा तिं तिं ता । ता धिं धिं धा । धा

X 2 0 3 X

3.4.2 ध्रुपद गायन के साथ संगत – ध्रुपद गायन गम्भीर एवं जोरदार शैली का गायन है अतः इसके साथ पखावज वाद्य की संगत की जाती है। ध्रुपद गायन में पखावज पर बजने वाली तालें जैसे चारताल, धमार, सूलताल, तीव्रा, गजझम्पा आदि तालों का प्रयोग किया जाता है। चारताल, धमार, गजझम्पा तालों में रचनाएं विलम्बित लय की रहती हैं एवं तीव्रा व सूलताल में प्रायः मध्य एवं द्रुत लय की रचनाएं गाई जाती हैं। ध्रुपद गायन में पहले अनिबद्ध आलाप(बिना ताल के) किया जाता है जिसमें पखावज पर संगत नहीं की जाती है। इसके पश्चात ताल में रचित रचना विलम्बित लय में प्रस्तुत की जाती है। विलम्बित लय की रचना के साथ ख्याल की भांति ही एक से चार मात्रा तक के बोल बजाकर गायक के साथ पखावज वादक सम पर आता है। इस गायन शैली में अतिविलम्बित रचना नहीं गाई जाती है। पखावज पर प्रयोग हेतु एक से चार मात्रा तक के बोलों का उदाहरण नीचे दिया जा रहा है :–

एक मात्रा का बोल :–

तिटकता गदीगिन । सम

1

दो मात्रा का बोल :–

कतिटता ।कनंताकेतिरकतागदीगिन । सम

1 2

तीन मात्रा का बोल :–

कतिटताकिनताके तिरकतागदीगिन धाऽकधाऽकत । सम

1 2 3

चार मात्रा का बोल :–

कतिटताकिनताकेतिटकतागदीगिन धाऽगदीगिन धाऽगदीगिन । सम

1 2 3 4

ध्रुपद गायन मुख्य रूप से लयकारी पर आधारित है एवं गायक के द्वारा ख्याल की भांति सरगम एवं तान का प्रयोग नहीं किया जाता है। वरन इसके स्थान पर विभिन्न लयकारी का प्रदर्शन किया जाता है। इसमें पखावज वादक से यह अपेक्षा रहती है कि वह भी गायक के साथ उसी लयकारी के बोल बजाकर गायक के साथ–साथ संगत प्रस्तुत करे। यदि गायक के द्वारा तिहाई बजाई जा रही है तो वादक भी गायक के साथ तिहाई भी उसी प्रकार की बजाकर सम पर आता है। पखावज वादक को ख्याल गायन की संगत की भांति स्वतंत्र बोलों को बजाने का अवसर नहीं प्राप्त होता है। पखावज वादक को अपने में गायन को भी समाहित करने की आवश्यकता होती है। पूर्व में पखावज वादकों को गायन की रचनाओं का भी ज्ञान होता था। ध्रुपद गायन शैली में प्रयोग होने वाली पखावज की तालें :

1. ध्रुपद अथवा चार ताल, मात्रा – 12

धा धा । दीं ता । किट धा । दीं ता । तिट कता । गदी गिन । धा

x 0 2 0 3 4 x

2. धमार ताल, मात्रा – 14

क धि ट धि ट । धा ऽ । ग ति ट । ति ट ता ऽ । क

x 2 0 3 x

3. सूल ताल, मात्रा – 10

धा धा । दीं ता । किट धा । तिट कता । गदी गिन । धा

x 0 2 3 0 x

4. तीव्रा ताल, मात्रा – 7

धा दीं ता । तिट कता । गदी गिन । धा

X 2 3 x

5. गजझम्पा ताल, मात्रा – 15

धा दीं नग । तक धा दीं नक । तक दीं नक तक । तिट कता गदीगिन । धा

x 2 0 3 x

3.5 स्वर वाद्यों के साथ संगत

स्वर वाद्यों का परिचय – स्वर वाद्यों से तात्पर्य उन वाद्यों से जिनसे स्वर सप्तक एवं स्वरों की श्रुतियां उत्पन्न की जा सकती हैं। भरत ने अपने ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में वाद्यों को वर्गीकृत करते हुए तंत्र वाद्य, सुषिर वाद्य, अवनद्ध वाद्य एवं घन वाद्य बताए हैं। तंत्र वाद्य एवं सुषिर वाद्य से स्वर सप्तक एवं स्वरों की श्रुतियां उत्पन्न की जा सकती हैं। अवनद्ध वाद्य से केवल एक ही स्वर उत्पन्न किया जा सकता है एवं यही स्थिति घन वाद्य की भी है। अवनद्ध वाद्य में तबला, पखावज, ढोलक आदि आते हैं। दाहिने तबले के समूहों से उनके साइज के आधार पर भिन्न–भिन्न वांछित स्वर उत्पन्न किए जाते हैं। इस प्रकार के समूह को तबला तरंग कहा जाता है जिसका प्रयोग नाटक एवं फिल्म संगीत में प्रभाव विशेष

के लिए किया जाता है एवं वाद्य वृन्द में भी इसका प्रयोग किया जाता है। घन वाद्य के अन्तर्गत घण्टा एवं घण्टी आती हैं। तबला की भाँति ही घण्टा तरंग बनाया जाता है जिसका प्रयोग तबला तरंग की भाँति ही किया जाता है। एक तबले से एवं एक घण्टे से केवल एक ही स्वर निकाला जा सकता है। अतः अवनद्ध वाद्य एवं घनवाद्य को स्वर वाद्य की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। स्वर वाद्य की श्रेणी में तंत्र वाद्य एवं सुषिर वाद्य ही रखें जाएंगे व इनके साथ अवनद्ध वाद्य तबला एवं पखावज की संगत का अध्ययन इस इकाई के माध्यम से आप करेंगे। वाद्यों पर बजने वाली वादन शैली के आधार पर ही अवनद्ध वाद्य की संगत की जाती है।

तंत्र वाद्य – ये वे वाद्य हैं जिनमें स्वर तारों के माध्यम से निकाले जाते हैं। तारों को कम्पित करने से स्वर निकलते हैं। तंत्र वाद्यों को भी दो श्रेणी में रखा जाता हैः–

1.तत वाद्य 2.वितत वाद्य

तत् वाद्य – इसके अन्तर्गत तार वाले वाद्य आते हैं जैसे वीणा, सितार, सुरबहार, गिटार, मैन्डोलियन, रबाब, सरोद आदि। वीणा, सितार, सुरबहार वाद्यों में तारों को पीतल के तार का तिकोने आकार को अंगुली में पहनकर आघात किया जाता है जिसको मिजराब कहा जाता है। रबाब एवं सरोद वाद्य को नारियल के उपरी कठोर भाग के टुकड़े की सहायता से बजाया जाता है, जिसे जवा कहते है। रबाब से ही सरोद की उत्पत्ति मानी जाती है एवं इसमें तारों के स्थान पर पशु तंतु प्रयोग में लाई जाती है। वर्तमान में शास्त्रीय संगीत हेतु इसका प्रयोग नहीं हो रहा है एवं इसका स्थान सरोद वाद्य ने ले लिया है।

वितत् वाद्य – इस श्रेणी के वाद्यों में स्वर की उत्पत्ति तार पर रगड़ द्वारा की जाती है। धनुष आकार का, जिसमें डोरी के स्थान पर घोड़े के बाल होते है, तार पर घिसा किया जाता है जिससे स्वर उत्पन्न होते हैं। इसको गज कहा जाता है। इस श्रेणी में सारंगी, वायलिन, दिलरूवा आदि वाद्य आते हैं।

सुषिर वाद्य – इस श्रेणी के वाद्यों में स्वर हवा के द्वारा उत्पन्न होते हैं। हवा, छेदों में मुह से फूंकने से स्वर निकाले जाते है। इसके अन्तर्गत भारतीय संगीत के वाद्य बांसुरी, शहनाई, नफिरी एवं पाश्चात्य संगीत के वाद्य बैगपाइपर(इसको भारतीय लोक भाषा में मसकबीन कहा जाता है एवं इसका प्रयोग उत्तराखण्ड के लोक संगीत में किया जाता है।), कल्नारेट, सैक्सोफोन, ट्रम्पेट, बिगुल आदि आते हैं। बांसुरी एवं शहनाई का प्रयोग शास्त्रीय संगीत में किया जाता है। नफिरी, शहनाई का छोटा रूप है जिसका प्रयोग लोक संगीत में होता है।

उपर दिए गए स्वर वाद्यों के अतिरिक्त भी स्वर वाद्य सन्तूर एवं जल तरंग, हैजिन पर शास्त्रीय संगीत के राग प्रस्तुत किए जाते हैं। सन्तूर वाद्य का शास्त्रीय संगीत में प्रचार शिव कुमार शर्मा द्वारा किया गया है एवं वर्तमान में यह वाद्य लोकप्रिय हो रहा है। प्यालों में पानी भरकर जल तरंग वाद्य बनाया जाता है। इन दोनों वाद्यों का लकड़ी की डंडी द्वारा बजाया जाता है।

तंत्र वाद्य के साथ संगत – तंत्र वाद्यों पर वादन हेतु तंत्रकारी वादन शैली विकसित की गई। इस शैली के अन्तर्गत मिजराब एवं जवा की सहायता से विभिन्न लय की रचना बजाई जाती हैं जिसे गत कहते हैं। इसे गतकारी बाज भी कहा गया। इस बाज को विकसित करने में मसीत खां एवं रजा खां का महत्वपूर्ण योगदान है। मसीत खां द्वारा मिजराब अथवा जवा के लिए तार पर बजाने हेतु बोल निर्धारित किए एवं बोलों के द्वारा तीनताल में विलम्बित गत की रचना की जिसे मसीतखानी गत कहा जाता है। मसीतखानी गत के मिजराव अथवा जवा के बोल निम्न हैं :–

दिर दा दिर दा रा दा दा रा

तीनताल में गत का स्वरूप निम्न प्रकार से है :–

धा धिं धिं धा । धा धिं धिं धा । धा तिं तिं ता । ता धिं धिं धा ।
दा दा रा दिर । दा दिर दा रा । दा दा रा दिर । दा दिर दा रा ।

मसीतखानी गत का मुखड़ा पांच मात्रा का होता है। अतः गत तीनताल की बारहवीं मात्रा से उठती है। इस शैली में पहले कलाकार द्वारा अनिबद्ध आलाप(अर्थात बिना ताल एवं तबले संगत के)

किया जाता है। यह आलाप तीन लय विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय में किया जाता है जिसको क्रमशः आलाप, जोड़ आलाप एवं झाला कहा जाता है। इस अनिबद्ध झाले को ठोक झाला कहा जाता है। झाला तंत्र वाद्य में कार्यक्रम के अन्त में अतिद्रुत लय में तबले के साथ बजाया जाता है। तीनताल के अतिरिक्त भी अन्य ताल जैसे झपताल, रूपक ताल, पंचमसवारी, आडाचारताल आदि तालों में भी विलम्बित गत बजाई जाती है। तंत्र वादक के अनिबद्ध आलाप के बाद भी तबला वादक गत के साथ अपना वादन आरम्भ करता है। तंत्रकार द्वारा तबला वादक को अपना कौशल दिखाने का अवसर दिया जाता है एवं तंत्रकार गत का वादन करता है। तबला वादक प्रभावशाली बोलों की रचना जो लय के अनुरूप होती है, प्रस्तुत करता है। इस वादन से तबला वादक के वादन शैली एवं उसके कौशल का परिचय भी होता है। तबला वादक की सुन्दर प्रस्तुती से आगे होने वाले वादन हेतु सुन्दर वातावरण स्थापित हो जाता है। गत के साथ यह तबला वादन आठ आवृत्ति तक का भी हो सकता है जो कि तंत्र वादक की इच्छा पर निर्भर करता है। अन्य तालों की गतों में इतने लम्बे वादन की आवश्यकता नहीं होती है एवं तबला वादन चार या पांच आवृत्ति तक ही सीमित रहता है। इस तबला वादन से अनिबद्धता की एकरसता भी समाप्त होती है एवं श्रोत्राओं को इस वादन की प्रतीक्षा रहती है जिसका श्रोता भरपूर आनन्द लेते है।

इसके पश्चात तंत्र वादक गत का विस्तार करता है जिसमें पहले छोटे एवं फिर बड़े स्वर विस्तार करता है जो कि मिजराब एवं जवा के बोलों के साथ होता है। इस स्वर विस्तार का स्वरूप तानों की भाँति होता है जिसे तंत्रकारी शैली में तोड़ा कहा जाता है। इन तोड़ों में विभिन्न लयकारी का प्रदर्शन भी किया जाता है। एक प्रकार की संगत में तंत्रवादक के तोड़े बजाते समय तबला वादक केवल ताल का ठेका स्पष्ट रूप से बजाता है एवं तंत्र वादक के तोड़े की समाप्ति के पश्चात तबला वादक तोड़े की लय एवं लयकारी के समरूप बोलों का चयन कर अपना वादन तोड़े के जबाब के रूप में प्रस्तुत करता है। यदि तोड़ा तिहाई युक्त है तो विशेषकर तबला वादक की तिहाई बिल्कुल वैसी ही होनी चाहिए। दूसरे प्रकार की संगत में तंत्र वादक के तोड़े के साथ ही तबला वादक भी अपना वादन आरम्भ करता है एवं तोड़े के समरूप तबला वादक बोलों का चयन कर तोड़े के साथ ही अपना वादन करता है। तंत्र वादक के तोड़े का एवं तबला वादक के वादन का समापन एक साथ ही होता है। मसीतखानी गत में तोड़े एवं लयकारी प्रस्तुत करने के पश्चात मध्य एवं द्रुत लय की रचना प्रस्तुत की जाती है। रजा खां द्वारा मध्य एवं द्रुत लय के लिए मिजराब एवं जावा के बोल निर्धारित कर गतों का निमार्ण किया गया, जिसको रजाखानी गत कहते हैं। यह भी मूलतः तीनताल में रची गई जिसके बोल निम्न प्रकार से है :–

दिरदिर दाऽरदा ऽरदिर दाऽदिर दाऽराऽ दाऽरऽ दाऽराऽ दाऽराऽ

बाद में इन बोलों की सहायता से अन्य तालो में भी रचना की गई। रजाखानी गत में भी तबला की संगत सवाल–जबाब अथवा साथ संगत तंत्रकार की इच्छानुसार की जाती है। रजाखानी गत की लय धीरे–धीरे बढ़कर द्रुतलय एवं अति द्रुतलय हो जाती है। अतिद्रुत लय में वाद्य के प्रथम एवं अन्तिम तार पर झाला बजाया जाता है। इसमें तबला वादक से तीनताल का स्पष्ट ठेका बजाने की अपेक्षा की जाती है। तीनताल का स्पष्ट ठेका बजाने में बनारस घराने के पं0 अनोखेलाल को विशेष सिद्धि प्राप्त थी। शुद्ध तीनताल का ठेका अतिद्रुत लय में बजाना कठिन है इसलिए तबला वादक झाले के साथ अति द्रुत लय में निम्न बोलों को बजाते हैं जो इस लय में तीनताल के ठेके की भाँति ही सुनाई देते हैं।

पहला प्रकार – *धा ती धिं ता । धा ति धिं ता । धा ती तिं ता । ता ती धिं ता।*

'ती' बोल बीच वाली अंगुली से स्याही पर बजाया जाता है।

दूसरा प्रकार – *धा ति ट धा । धा ति ट धा । धा ति ट ता । ता ति ट धा ।*

इसमें 'ति' बोल पहली अंगुली से, 'ट' बोल बीच की अंगुली अथवा बीच की अंगुली एवं तीसरी अंगुली को मिलाकर निकाला जाता है।

इसके लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता होती है। झाला के अन्त में तबला वादक, तंत्र वादक की तिहाई के साथ ही तिहाई बजाता है। झाले के मध्य में भी तंत्र वादक, तबला वादक के साथ सवाल–जवाब प्रस्तुत करता है। इसका प्रचार प्रसिद्ध सितार वादक पं0 रविशंकर द्वारा किया गया है। इसमें तंत्र वादक कुछ स्वर समुह प्रस्तुत करता है जिसका जवाब तबला वादक उसी के अनुरूप बोल बजाकर देता है। इस सवाल–जबाव के दौरान झाले की लय गौण रहती है एवं तंत्र वादक के सवाल

के समय तबला वादक किसी प्रकार का ठेका नहीं बजाता है। बल्कि स्वर समूह को ध्यान से सुनता है जिससे उसका समरूप जवाब तबले पर प्रस्तुत कर सके। कुछ आवृत्ति के सवाल–जबाव के उपरान्त दोनों वादक झाले को पुनः पकड़ लेते हैं एवं कार्यक्रम का समापन दोनों एक साथ तिहाई बजाकर करते हैं। तंत्र वादन के साथ संगत में तबला वादक को कौशल दिखाने का पूर्ण अवसर प्राप्त होता है।

रूद्रवीणा एवं सुरबहार पर ध्रुपद गायन शैली के आधार पर वादन प्रस्तुत किया जाता है। ध्रुपद गायन शैली में तालबद्ध रचना बजाने से पूर्व आलाप, जोड एवं झाला बजाया जाता है, अतः वाद्यों पर भी इसको बजाया जाता है। एक शैली विशेष में पखावज की संगत जोड से आरम्भ हो जाती थी यद्यपि यह ताल की आवृति में नहीं होता था। इसमें आलाप को केवल बिना पखावज की संगत से किया जाता था। रूद्रवीणा एवं सुरबहार पर चारताल, सूलताल, घमार, तीव्रा एवं पखावज की तालों के साथ रचनाओं को बजाया जाता है। इन वाद्यों पर भी मसीतखानी एवं रजाखानी गतें नहीं बजाई जाती हैं। ध्रुपद गायन की भाँति ही वाद्यों पर भी लयकारी प्रस्तुत की जाती है एवं इन वाद्यो के साथ पखावज की संगत उसी प्रकार की जाती है जैसे की ध्रुपद गायन शैली के साथ की जाती है जिसका अध्ययन आप पूर्व में कर चुके हैं।

जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि वितत् वाद्य गज द्वारा बजाए जाते हैं एवं संगीत में इनका प्रयोग मुख्य रूप से गायन की संगत के लिए किया जाता था। परन्तु अब इनका प्रयोग स्वतंत्र वादन के रूप में भी किया जाने लगा है। जिसके साथ तबला वाद्य की संगत की जाती है। वितत वाद्यों की ध्वनि गले की ध्वनि से बहुत अधिक मेल खाती है अतः इन वाद्यों को गायन की स्वर संगत के लिए अधिक उपयुक्त समझा गया है एवं स्वतंत्र वादन में भी ख्याल गायन शैली के आधार पर वादन किया जाता है। मसीतखानी एवं रजाखानी गतों का निर्माण तत वाद्यों के लिए किया गया था। अतः इन पर मसीतखानी एवं रजाखानी गत बजाने की प्रथा नहीं रही। परन्तु इन वाद्यों पर भी मसीतखानी गत बजाई जाने लगी है जिसका प्रचार प्रसिद्ध वायलिन वादक पं0वी.जी.जोग द्वारा किया गया। इन वाद्यों के साथ तबले की संगत वाद्य पर बजाई जाने वाली शैली के अनुसार ही की जाती है। जिसका अध्ययन आप पूर्व में कर चुके हैं।

<u>सुषिर वाद्य के साथ संगत</u> – सुषिर वाद्य शहनाई एवं बांसुरी वाद्य पर शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत किया जाता है। इन दोनों वाद्यों पर वादन हेतु ख्याल गायन शैली का प्रयोग किया जाता है एवं इन पर ख्याल की भाँति ही विलम्बित रचना एवं मध्य/द्रुतलय की रचना प्रस्तुत की जाती है। शहनाई एवं बांसुरी पर भी जीभ की सहायता से दिर दिर ध्वनि के बोल निकाले जाते हैं एवं इनकी सहायता से अति द्रुत लय झाला बजाया जाता है, जो कि तीनताल में ही होता है। इसमें अति द्रुत लय में तीनताल का स्पष्ट ठेका बजाने की आवश्यकता होती है। जिसकी तकनीक के विषय में आपको तंत्र वाद्य के साथ संगत के अन्तर्गत बताया जा चुका है। शहनाई के साथ मूल रूप में नक्कारा बजाया जाता था परन्तु अब नक्कारा के साथ तबला भी बजने लगा है जो कि आप शहनाई वादन के कार्यक्रम एवं प्रसिद्ध शहनाई वादक बिस्मिल्लाह खां के वीडियो रिकार्ड में भी देख सकते हैं। बांसुरी पर शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाने का श्रेय बिस्मिल्लाह खां को है। बांसुरी प्रारम्भ में लोक वाद्य के रूप में ही प्रचलित थी एवं शहनाई शुभ कार्यों में मंगल वाद्य के रूप में ही प्रयोग की जाती थी।

स्वर वाद्यों की संगत हेतु उचित स्वर का तबला चुनने की भी आवश्यकता है। सितार, गिटार का स्वर पहला काला एवं दूसरा काले के मध्य होता है। सितार वादक तबले की संगत के लिए तार सप्तक स्वर का तबला ही चाहते हैं एवं यही सुनने में अच्छा भी लगता है। अतः तबला वादक को इसके लिए पांच इंच मुंह वाले दाहिने तबले की आवश्यकता होगी। सरोद का स्वर, सितार के स्वर से नीचा होता है एवं यह पांचवे काले एवं पहले सफेद के मध्य होता है। इसके लिए साढ़े पांच इंच का तबला ही अच्छी ध्वनि देगा। वायलिन, शहनाई एवं सारंगी का स्वर सितार की भाँति ही होता है।

बांसुरी वादक शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत करने के लिए तीसरे सफेद से लेकर तीसरे काले स्वर तक की बांसुरी का प्रयोग करते हैं। इन स्वरों के तबले सामान्यतया उपलब्ध नहीं होते हैं। अतः इन मन्द्र सप्तक के स्वर हेतु छः इंच अथवा साढ़े छःइंच का दाहिना तबला एवं तार सप्तक के स्वर के लिए पौने पांच अथवा पांच इंच का दाहिना तबला ही सुन्दर ध्वनि देगा। उचित स्वर का तबला होने से तबले का स्वर स्थापित रहता है एवं कार्यक्रम में बाधा उत्पन्न नहीं होती है। सफेद एवं काले स्वर का सन्दर्भ हारमोनियम के स्वर से है।

3.6 नृत्य के साथ संगत

नृत्य – नृत्य के कार्यक्रम में गायन, स्वर व अवनद्य वाद्य की संगत होती है। नृत्य इनकी संगत बिना अपूर्ण रहता है एवं नृत्य के कार्यक्रम की सफलता में संगत करने वाले गायक एवं वादक कलाकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। नृत्य मुख्यतः लय एवं ताल पर ही आधारित रहता है अतः नृत्य में सबसे अधिक महत्वपूर्ण तबला अथवा पखावज वादक रहते हैं। इस इकाई में आप उत्तर भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैली कत्थक के साथ अवनद्ध वाद्य की संगत का ही अध्ययन करेंगे।

कत्थक नृत्य में पद एवं अंगो के संचालन व भाव भंगिमाओं के द्वारा वांछित भाव प्रस्तुत किए जाते हैं, जिसका आधार लय व ताल होते हैं। कत्थक नृत्य में आमद, स्तुती, टुकड़े अथवा तोड़े, चक्करदार टुकड़े, स्तुती परन आदि रचनाओं पर नृत्य किया जाता है। कत्थक के टुकड़े एवं चक्करदार रचनाओं का स्वरूप तबला एवं पखावज के बोल से भिन्न होते हैं। कत्थक नृत्य में थूं, थो, थूंगा, दीगदीग, थेई, तत आदि बोलो की सहायता से रचनाएं बनाई गई हैं। कत्थक नृत्य में सम के लिए प्रायः ता का प्रयोग करते हैं। यद्यपि तबला में सम के लिए धा प्रयोग किया जाता है। नृत्य में खाली को आ से प्रदर्शित करते हैं। धि एवं ति, के स्थान पर थेई का प्रयोग होता है। निम्न उदाहरण से आप नृत्य शैली के बोलों को समझ सकेंगे। तीनताल के ठेके के सापेक्ष कत्थक नृत्य में निम्न बोल प्रयोग किए जाते हैं:–

ता थेई थेई तत । आ थेई थेई तत। ता थेई थेई तत। आ थेई थेई तत ।

झपताल – **ता थेई । ता थेई तत । आ थेई । ता थेई तत।**

नृत्य के साथ संगत – नृत्य के साथ संगत करने के लिए आपको नृत्य के बोलों को तबले पर निकालने का ज्ञान होना आवश्यक है, क्योंकि तभी आप नृत्य के बोलों के समरूप बोल तबले पर बजाने में सक्षम होंगे। नृत्य के बोलों के सापेक्ष तबले पर बजाएं जाने वाले बोलों को आप निम्न सारिणी से समझ सकेंगें :–

नृत्य के बोल	–	तबले पर बोल
ता	–	धा
थेई अथवा थो	–	धिं अथवा तिं अथवा नां
दिग दिग	–	घिट घिट अथवा तिट तिट अथवा तिर किट
थूं	–	दीं
थूंगा	–	दींता
थड ऽग	–	ध ऽ ऽ न अथवा तगऽन
त्राऽगं	–	ताऽन अथवा धाऽन
दिगत	–	धिकिट अथवा धितिट

उपर दी गई सारिणी में नृत्य में प्रयोग होने वाले बोलों के सामान्तर तबले पर बजने वाले बोल दिए गए हैं। इनकी सहायता से आप नृत्य की रचनाओं के साथ तबले पर बोल बजा सकेंगे। इनका आधार मुख्य रूप से ध्वनि से है अतः नृत्य की रचनाओं के समकक्ष तबले पर बोल इस प्रकार बजाते हैं जो कि सुनने में एक जैसे ही लगें। उपर दी गई सारिणी में तबले पर नृत्य के बोल बजाते समय अन्तर भी आ सकता है क्योंकि यह एक दिशा निर्देश ही हैं। आगे नृत्य की रचनाओं के तबले पर बजाने हेतु उदाहरण प्रस्तुत किया जाएगा जिससे आपको अधिक स्पष्ट होगा।

नृत्य की रचनाओं में तबले के बोल भी प्रयुक्त होते हैं, अतः इन बोलों को तबले की ही भाँति बजाया जाता है। परन्तु नृत्य के साथ तबले पर बजने वाले बोलों की ध्वनि जोरदार होने की आवश्यकता होती है। नृत्य की एक प्रसिद्ध रचना का उदाहरण प्रस्तुत है जिसमें केवल थूं, बोल ही नृत्य का बोल है बाकी सभी बोल तबले के हैं। यह रचना तीनताल में निबद्ध है :–

किटतक थूंथूं नाति टता । ऽधा धिंता कऽधाऽ धिंता ।
x 2
कति टधा धिंता कत । धिट धाधिं ताऽ कऽधेऽं ।
0 3

ऽधा धिंता कति टधा । ऽथूं ऽत घाऽ कातिं ।
X 2
टधा ऽथूं ऽत घाऽ । कति टधा ऽथूं ऽतं । धा
0 3 X

इस नृत्य की रचना पर सभी नृत्यकार नृत्य करते हैं। दो अन्य नृत्य की प्रचलित रचना उदाहरण स्वरूप दी जा रही हैं जिसमें नृत्य के बोलों के सामान्तर तबले पर बजाने के लिए बोल भी दिए गए हैं।

नृत्य के बोल – धात कथूं गाऽ धागे । दींगी ताऽ धादीं ताऽ ।
तबले के बोल – धात कदीं ताऽ धागे। दींदीं ताऽ धादीं ताऽ ।
नृत्य के बोल – धिंता कऽधाऽ तका थूंका। तुकिटत काऽ तिटकत गदीकिन ।
तबले के बोल – धिता कऽधाऽ कता दींता। तकिटत काऽ तिटकत गदीगिन ।
नृत्य के बोल – ताथेई ततथेई आथेई ततथेई । थेईतथो ईतथेई थेईथेई तततत ।
तबले के बोल – धाधिं धातिधाऽ ताति धातीधाऽ । धिंऽतधिं ऽतधिंऽ दींदीं धाती ।
नृत्य के बोल – थेई तततत थेई थेई । तततत थेई थेई तततत ।
तबले के बोल – धिंऽ धाती धा धिंऽ । धाती धा धिंऽ धाती ।

उपर के बोलों में आपने देखा कि थेई के लिए धा एवं धिं, दोनों बोलों को प्रयोग किया गया है। अतः रचना की आवश्यकता के अनुसार बोल का चयन किया जाता है। इसके लिए कोई निश्चित नियम नहीं बनाया जा सकता है, यह केवल नृत्य के साथ निरन्तर अभ्यास से आप समझेंगे। तिस्त्र जाति की अन्य रचना उदाहरण स्वरूप नीचे दी जा रही जिसमें नृत्य के बोल अधिक हैं।

नृत्य के बोल – त्रांगऽ त्रांगऽ तकत तकत । तकत थूंऽऽ दिगत थेईऽ ।
तबले के बोल – धाऽान धाऽान तकिट तकिट । तकिट दीं धितिट धाऽऽ ।
नृत्य के बोल – तथेई तथेई दिगत दिगत । तकतकतक थूंथूंथूं नानाना दिगदिगदिग ।
तबले के बोल – तीधाड तीधाड धितिट धितिट । तकतकतक दींदींदीं नानाना घिटघिटघिट ।
नृत्य के बोल – थेई दिगदिगदिग थेई तकतकतक । थूंथूंथूं नानाना दिगदिगदिग थेई ।
तबले के बोल – धा धिटधिटधिट धा तकतकतक । दींदींदीं नानाना धिटधिटधिट धा ।
नृत्य के बोल –दिगदिगदिग थेई तकतकतक थूंथूंथूं। नानाना दिगदिगदिग थेई दिगदिगदिग।
तबले के बोल – धिटधिटधिट धा तकतकतक दींदींदीं। नानाना धिटधिटधिट धा धिटधिटधिट।

नृत्य के कवित्त पर भी भाव के साथ नृत्य किया जाता है। कवित का उदाहरण निम्न है :–

प्रात समय घर से निकसी , अली ओड कसूमे की साडी।
खेलत कूदत जात रही हम, जात रही नन्द लाल के बाडी।
काच कली एक तोड लई, जा कारन बांड मरोडत माली।
आग लगे बृज की गलिया , एक फूलन कारन लाखन गारी।
तिहाई– तिगधाऽतिग धाऽदिगदिग थेईदिगदिग थेईदिगदिग । थेई, ऽ
तिगधाडतिग धाडदिगदिग थेईदिगदिग थेईदिगदिग । थेई, ऽ
तिगधाडतिग धाडदिगदिग थेईदिगदिग थेईदिगदिग । ता (सम)

ऊपर दिए गए कवित्त के उदाहरण को तीनताल की लिपि में निम्न प्रकार से लिपिबद्ध कर बोला जाएगा। इसके साथ तबले के बोलों को भी कवित्त के बोलों के सामान्तर दिया गया है जिससे आप कवित्त के साथ तबला संगत को भी समझ सकेंगे।

नृत्य के बोल – प्राऽतस मयघर सेंऽनिक सीऽअली। ओऽऽक सूऽमेऽ कीऽसाऽ डीऽऽऽ।
तबले के बोल – धाऽनत किटतक दींऽतिट कऽधाती। धऽतिट कंऽताऽ तीऽधाऽ तीऽऽऽ।

नृत्य के बोल – खेऽलत कूऽदत ताऽतर हीऽहम। जाऽतर हीऽनंद लाऽलके बाऽडीऽ ।
तबले के बोल – धिनकट कऽतिट धाऽनत किटतक। ताऽनत किटतक धाऽतक धाऽतीऽ।
नृत्य के बोल – काऽचक, लीऽएक, तोऽऽल, ईऽजाऽ। काऽरन, बांऽहम, रोऽऽत, माऽलीऽ,।
तबले के बोल – ताऽकत कऽतक धिंऽतक, दींऽताऽ। धाऽकत, ताऽकत, दीऽकत, धाऽतीऽ।
नृत्य के बोल – आऽगल गेऽबृज कीऽगली, याऽएक। फूऽलन, काऽरन, लाऽखन, गाऽरीऽ।
तबले के बोल – धाऽनत केऽतक दींऽकत धाऽकत। धेऽतक ताऽतक धाऽतक धाऽतीऽ।
नृत्य के बोल – तिगधाऽतिग, धाऽदिगदिग, थेईदिगदिग, थेईदिगदिग।
तबले के बोल – धिटधाऽधिट, धाऽधिटधिट, धाऽधिटधिट, धाऽधिटधिट।
नृत्य के बोल – ता S तिगधाऽतिग धाऽदिगदिग ।
तबले के बोल – धां S धिटताऽधिट धाऽधिटधिट।
नृत्य के बोल – थेईदिगगिद थेईदिगदिग ता S।
तबले के बोल – धाऽधिटधिट धाऽधिटधिट धा S।
नृत्य के बोल – तिबधाऽतिग धाऽदिगदिग थेईदिगगि थेईदिनदिन।
तबले के बोल – धिटधाऽधिट धाऽधिटधिट धाऽधिटधिट धाऽधिटधिट।

उदाहरण के साथ आपको नृत्य की रचना के समरूप तबले पर बजने वाले बोलों को ज्ञान कराया गया। इससे आप नृत्य के बोल एवं नृत्य में प्रयोग होने वाले कवित्त के साथ तबला की संगत कर सकेंगे। तबला संगतकार को नृत्य की रचनाओं का भी ज्ञान होना भी आवश्यक है जिसका सन्दर्भ आप उपर की रचनाओं से ले पाएंगे।

नृत्य के कार्यक्रम में तबला वादक नृत्यकार की सभी रचनाओं को कंठस्थ कर लेता है। प्रायः तबला वादक इन रचनाओं को बजाने के साथ–साथ मुंह से पढता भी है एवं नृत्यकार इस पर अपना नृत्य प्रस्तुत करता है। तबला वादक को एक साथ बोल बजाने एवं बोलों को पढने के अभ्यास की भी आवश्यकता होती है तभी वह नृत्य के साथ सुन्दर संगत प्रस्तुत कर सकता है। नृत्य में नृत्यकार के द्वारा भी पहले बोलों की पढन्त की जाती है जिसको तबला वादक को बड़े ध्यान से सुनने की आवश्यकता होती है। पढन्त के पश्चात नृत्यकार नृत्य की रचना पर तबला वादक की संगत के साथ नृत्य करता है। नृत्यकार अपने नृत्य का आरम्भ विलम्बित लय से ही करता है जिसमें सर्वप्रथम आमद प्रस्तुत करता है जिसके बोल विलम्बित अथवा मध्यलय के होते हैं। तबला वादक बोल एवं लय के समरूप इसके साथ तबले पर संगत करता है।

विलम्बित एवं मध्य लय में टुकडे, चक्करदार टुकडे, स्तुती परन, कवित्त आदि प्रस्तुत करने के पश्चात मध्यलय में गत–भाव(अर्थात गति के साथ भाव) प्रस्तुत करता है। इसमें पद संचालन कहरवा ताल की चाल पर आधारित होता है। द्रुतलय में ततकार भी नृत्य का अंग है जिसमें दोनों पैरों की सहायता से विभिन्न प्रकार के लय स्वरूप बनाए जाते हैं। इसमें तबला वादक नृत्यकार के साथ–साथ ही संगत करता है। नृत्य में इसी द्रुत लय में ततकार के बीच नृत्यकार एवं तबला वादक के मध्य सवाल–जबाब भी होता है। यह ठीक उसी प्रकार होता है जैसा सवाल–जवाब पं0 रविशंकर द्वारा तंत्र वाद्य में प्रचलित किया गया। सम्भवतः तंत्र वाद्य में सवाल–जबाब नृत्य से प्रेरणा प्राप्त कर किया जाने लगा होगा।

तबला वादक को नृत्य के साथ करने के लिए नृत्यकारों के साथ निरन्तर अभ्यास करने की आवश्यकता होती है एवं नृत्य की रचनाओं को अधिक से अधिक कंठस्थ करने की भी आवश्यकता है। नृत्य की रचनाओं को तबले पर निकालने का भी अभ्यास करने की आवश्यकता है। यह आवश्यक नहीं है कि अच्छा तबला वादक नृत्य के साथ भी सुन्दर संगत कर सके, अतः तबला वादक को नृत्य की रचनाओं का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है।

अभ्यास प्रश्न

क) अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. रूद्र वीणा पर कौन सी वादन शैली प्रयोग की जाती है?
2. सितार वाद्य पर तारों को किस वस्तु की सहायता से बजाया जाता है?
3. सरोद वाद्य पर तारों को किस वस्तु की सहायता से बजाया जाता है?

4. सितार एवं सरोद वाद्य पर बजने वाली वादन शैली का नाम बताइए।
5. वितत वाद्य श्रेणी के किन्हीं तीन वाद्यों के नाम लिखिए।
6. शहनाई कौन सी श्रेणी का वाद्य है?
7. उत्तर भारत के शास्त्रीय नृत्य का नाम बताइए।
8. सुरबहार पर वादन हेतु किस अवनद्य वाद्य का प्रयोग करते हैं?

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

1. तबला एकल वादन में सर्वप्रथम क्या बजाया जाता है?
2. बड़े ख्याल के साथ प्रयोग होने वाली किन्हीं दो तालों के नाम लिखिए।
3. ध्रुपद गायन शैली में प्रयोग होने वाली किन्हीं दो तालों के नाम लिखिए।

3.7 सारांश

इस इकाई में आपने अवनद्य वाद्य तबला एकल वादन एवं शास्त्रीय गायन के साथ संगत के विषय में अध्ययन किया। उपरोक्त अध्ययन को क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत करने पर आप सुन्दर व प्रभावशाली एकल वादन एवं शास्त्रीय गायन के साथ सफल संगत कर सकेंगे। उपरोक्त अध्ययन का प्रयोग आप अपने वादन में दिशा निर्देश के रूप में करेंगे क्योंकि वादन का सम्बन्ध क्रियात्मक प्रस्तुती से है। इस इकाई में एकल वादन हेतु रचनाओं के क्रम को समझाया गया है एवं शास्त्रीय गायन की संगत के कुछ व्यवहारिक नियमों का ज्ञान आपको दिया गया है। सफल संगतकार निरन्तर अभ्यास से ही बनता है। इस इकाई में चर्चा किए गए समस्त बिंदुओं को ध्यान में रखकर आप सुन्दर वादन प्रस्तुत कर सकेंगे एवं श्रोता के रूप में भी आप प्रस्तुती का आनन्द उठाएंगे।

इस इकाई से आप स्वर वाद्यों के साथ संगत एवं कत्थक नृत्य के साथ संगत करने के ढ़ंग को भी समझ चुके होंगे। संगत का कार्य पूर्णतया क्रियात्मक है अतः क्रियात्मक रूप में इसका अध्ययन करना आवश्यक है तभी आप सफल संगतकार बन सकेंगे। इस इकाई के द्वारा आपको संगत के व्यवहारिक सिद्धान्तों से परिचित कराया गया जो आपके क्रियात्मक अध्ययन हेतु सहायक सिद्ध होगा। नृत्य के साथ तबला वादन करने में विशेष बात नृत्य के बोलों को तबले पर बजाना है जिसका ज्ञान आपको इस इकाई के माध्यम से दिया गया है। इससे आप नृत्य के बोलों को तबले पर बजाने में सक्षम होंगे। इस इकाई में आप नृत्य की रचनाओं को भी समझ चुके होंगे, जिसमें नृत्य के प्रसिद्ध बोल एवं कवित्त भी दिया गया है। इसके साथ ही नृत्य के बोल के समरूप तबले पर बजने वाले बोल भी उदाहरण में है। इसका आप क्रियात्मक अभ्यास करने पर नृत्य की अन्य रचनाओं को भी तबले पर प्रस्तुत करने में सक्षम होंगे।

3.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क) अति लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. ध्रुपद 2. मिजराब 3. जवा 4. तंत्रकारी
5. सारंगी, वायलन व दिलरूवा 6. सुषिर वाद्य 7. कत्थक 8. पखावज

ख) एक शब्द में उत्तर दीजिए :–

1. उठान 2. एकताल व तिलवाड़ा 3. चारताल व सूलताल

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय भाग 1,2,3*, संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. सेन, डॉ0 अरुण कुमार, *भारतीय तालो का शास्त्रीय विवेचन,* मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तबला एकल वादन के विषय में लिखिए।
2. शास्त्रीय गायन के साथ संगत पर लिखिए।

इकाई 1 – मार्गी एवं देशी संगीत; दक्षिण भारतीय संगीत का संक्षिप्त परिचय

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मार्गी संगीत
1.4 देशी संगीत
1.5 दक्षिण भारतीय संगीत का परिचय
1.6 सारांश
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के द्वितीय खण्ड की पहली इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत के इतिहास(विशेष रूप से मध्यकाल के बाद से आधुनिक काल तक) के विषय में जान चुके होंगे। आप प्राचीन व मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्यों, तबले की उत्पत्ति एवं विकास के विषय में भी जान चुके होंगे। आप एकल वादन एवं संगत के विभिन्न पहलुओं से भी परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में मार्गी संगीत एवं देशी संगीत के बारे में बताया गया है। प्राचीन काल में वैदिक युग में मार्गी एवं देशी संगीत समानान्तर प्रचलन में थे। वैदिक युग के अध्ययन से संगीत सम्बन्धी अनेक सूत्र प्राप्त होते हैं। उस युग में जनमानस में मार्गी एवं देशी संगीत के प्रति रूचि पर प्रकाश पड़ता है। इस इकाई में दक्षिण भारतीय संगीत पर भी प्रकाश डाला गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप मार्गी और देशी संगीत से संबंधित विभिन्न पहलुओं को समझ सकेंगे। आप यह भी समझ सकेंगे की दोनों संगीत की धाराओं का निरन्तर प्रचलन रहा है, फिर भी यह पूर्ण रूप से भिन्न–भिन्न हैं। इसके साथ आप दक्षिण भारतीय संगीत के स्वरूप को समझ सकेंगे तथा उत्तर एवं दक्षिण भारतीय संगीत के स्वरूप की तुलना कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

1. बता सकेंगे कि प्राचीन काल में प्रचलित सांगीतिक शैलियों का प्रयोग किस रूप में था।
2. समझा सकेंगे कि मार्गी एवं देशी संगीत का प्रचलन किस रूप में था।
3. बता सकेंगे कि वर्तमान गीत विधाओं से मार्गी एवं देशी संगीत किस प्रकार सम्बन्ध रखता है।
4. समझ सकेंगे कि प्राचीन काल में संगीत कला का अत्यधिक प्रचार था तथा उस समय वैदिक एवं लौकिक दोनों संगीत प्रणालियों का समान रूप से प्रचलन था।
5. बता सकेंगे कि दक्षिण भारतीय संगीत का स्वरूप किस प्रकार उत्तर भारतीय संगीत से साम्य एवं क्या भिन्नता लिए हुए है।

1.3 मार्गी संगीत

संगीत और धर्म का आरंभ से ही अटूट संबंध रहा है। संगीत की वह धारा, जिसका प्रयोग प्रभु की भक्ति के लिए किया गया, उसको मार्गी संगीत का नाम दिया गया। मार्गी से भाव मार्ग अर्थात रास्ता, परमात्मा तक पहुंचने का रास्ता। दूसरी तरफ वह संगीत जिसका प्रयोग लौकिक सम्मेलनों पर किया जाता था और उसका उद्देश्य केवल लोकरंजनकारी ही था, उसको देशी संगीत कहा गया।

"मार्गशीयभेदेन द्विधा संगीतमुच्यते।
वेदा मार्गाख्य संगीतं भरतायाब्रवीत्स्वयम्।
गीतं वाद्यं नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते।
मार्गदेशीविभागेन संगीतं द्विविधं मतम्।"

मार्गी संगीत के नियम बहुत कठोर थे और उनमें अपनी इच्छा के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। जबकि देशी संगीत समय के परिवर्तन के साथ ही साथ लोकरूचि के अनुसार भी बदलता रहता था। संगीत की ये दोनों धाराएं समानान्तर रूप से प्राचीनकाल से ही प्रचलित रही और एक–दूसरे को प्रभावित करती रही। इस प्रकार मार्गी एवं देशी संगीत का आपस में आदान–प्रदान आरंभ से चलता रहा। *डॉ. परांजपे लिखते हैं–"मार्गी संगीत की तुलना यदि गंगा नदी के धीर, गंभीर एवं प्रवाह से की जाए तो देशी संगीत की तुलना पहाड़ी देशों में उन्मुक्त रूप से बहते हुए झरनों से की जा सकती है।"*

जिस संगीत का प्रयोग गन्धर्व लोग करते थे, उसको गन्धर्व संगीत कहा जाता था। इसके गायन के साथ वाद्यों की संगति की जाती थी। इसलिए इस काल में गायन तथा वादन इन दोनों का समावेश होता था। भरत काल में गन्धर्व एक शास्त्र का रूप ले चुका था और इसमें स्वर, ताल और पद, इन तीनों अंगों का होना जरूरी था। गन्धर्व संगीत शब्द प्रधान था, मार्गी संगीत गन्धर्व का ही रूप था।

आधुनिक काल में संगीत की किसी भी धारा के लिए मार्गी और देशी शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता। मार्गी के स्थान पर शास्त्रीय संगीत शब्द तथा देशी के स्थान पर लोक शद का प्रयोग किया जाता है। संगीत को तब ही उत्तम समझा जाता है, जब उसमें निम्न प्रकार के पक्ष मौजूद हों–

1. भाव पक्ष 2. कला पक्ष

मार्गी संगीत वह संगीत था जिसका सम्बन्ध मोक्ष–प्राप्ति के लिए ही किया जाता था। मार्गी का शाब्दिक अर्थ है–मार्ग अर्थात् रास्ता और रास्ते से भाव है परमात्मा तक पहुंचने का रास्ता। ऋषियों–मुनियों, पीर–पैगम्बरों और गुरूओं ने यह अनुभव किया कि संगीत में एकाग्र करने की क्षमता है। सत्तव गुणी संगीत मनुष्य के मन को अपने में लीन करके परमात्मा की भक्ति में लीन कर सकता है। तब उन्होंने इस संगीत का सहारा लिया, जिसको मार्गी संगीत का नाम दिया गया। मार्गी संगीत का मुख्य उद्देश्य अध्यात्मवाद ही था। उद्देश्य–पूर्ति के बाद उन्होंने इस संगीत को कठोर नियमों में जकड़ दिया। इस संगीत में लोगों की रूचि के अनुसार कोई भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। प्राचीन काल से संगीत भारतीय संस्कृति एवं जनजीवन का अभिन्न अंग रहा है।

मार्गी संगीत का वास्तवितक रूप क्या था, इसके बारे में स्पष्टीकरण देना कठिन है। आधुनिक युग में यह भी कहा जाता है कि मार्गी संगीत का सम्बन्ध सामवेद की ऋचाओं से माना जाता था अथवा उस संगीत को मार्गी संगीत कहा जाता है जिसका सम्बन्ध अध्यात्मवाद के साथ था। ईश्वर संबंधी चिन्तन के लिए, मोक्ष प्राप्ति के मार्ग पर अग्रसर होने के लिए, नैतिक उत्थान के लिए अथवा 'रसो वै सः' कहकर रस के चरमोतकृष्ट स्वरूप का आस्वादन करने के लिए आध्यात्मवादियों द्वारा जहाँ साधना या योगसाधना को महत्व दिया गया और जीवन की भौतिक सुन्दरताओं से दूर रहकर एकाग्र चिंतन करते हुए समाधि की अवस्था को महत्व दिया गया। वहीं दूसरे मार्ग में जीवन को चार विभागों में विभाजित करके आयु के अनुसार जीवन को सुन्दर व सुखद रूप में व्यतीत करते हुए भी उसमें लिप्त न होकर अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के प्रयत्न को महत्व दिया गया। एकान्तिक साधना में भी और गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी, की जाने वाली साधना में सौन्दर्य का विशेष महत्व होता है। सांसारिक स्तर पर सौन्दर्य शारीरिक व मानसिक

सुख का कारण बन कर आनन्ददायक प्रतीत होता है जबकि यही सौन्दर्य आध्यात्मिक स्तर पर मानव के नैतिक उत्थान का कारण बनकर जिस असीम आनन्द में परिवर्तित होता है उसे हम दिव्यानुभूति कह सकते हैं। यह आध्यात्मिक अनुभूति ही परम सत्य की प्राप्ति का कारण बनती है और नादोपासना या योगियों द्वारा की जाने वाली ब्रह्म की उपासना, उस लक्ष्य प्राप्ति का साधन। सम्भवतः इसी रहस्य को जानते हुए विद्वानों ने नाद को ''तस्मान्नादात्मकं जगत्'' कहकर, रस को 'रसो वै सः' कहकर तथा ब्रह्म को ''अहं ब्रह्मास्मि'' कहकर नाद, रस व ब्रह्म और ब्रह्माण्ड की एकाकारता के रूप में साध्य व साधन की अभिन्नता को सिद्ध करने का प्रयत्न किया।

वैदिक काल में मार्गी संगीत का रूप – वैदिक काल में साम गान शास्त्रीय संगीत के उद्गम स्रोत की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि अपौरूषेय, श्रेयस् की प्राप्ति कराने वाला, भौतिकता से परे ले जाने में सक्षम, साधना के समस्त अंगों को स्वीकार करने वाला, विशिष्ट उद्देश्य से परिपूर्ण एवं विशिष्ट नियमों से अनुशासित होने के कारण जो संगीत मर्यादाबद्ध है वही शास्त्रीय, मार्ग या शिष्ट संगीत है, यदि ऐसा कहा जाए तो सम्भवतः अनुचित न होगा। सामवेद को संगीत का मूल कहा जाता है। साम का गान ऋगवेद की ऋचाओं के आश्रय से किया जाता रहा है। यदि ऋक् को वाणी माना जाए तो साम उसका प्राणभूत है। सामसंहिता में ऋकसंहिता के सभी मन्त्र नहीं हैं। इसमें ऋक् के चुने हुए मन्त्रों का संग्रह है। छान्दोग्योपनिषद के अनुसार साम यानि सा + अम के संवाद से विश्व का संगीत चल रहा है। यदि 'सा' ऋक है तो 'अम' आलाप यानि साम है। यदि 'सा' शब्द है तो 'अम' छंद है। इस प्रकार ऋग्वेद की ऋचाएं सामवेद का आधार कहलाती हैं। अभिप्राय यह है कि सामवेद ने शब्द ऋगवेद से लिया है और स्वर उसका स्वयं का है। अतः साम का अर्थ है ऋचाओं के आधार पर किया गया गान जिसमें मातु या बोल ऋगवेद के हैं और धातु या स्वर साम का है। साम का जो निजी है, स्वयं का है वह स्वर है। इस प्रकार सामवेद अपने गान के पदों को ऋगवेद से लेता है। विशिष्ट नियमों से अनुशासित साम का गान मार्गी संगीत का ही रूप रहा होगा।

सामगान में तीन गायक होते थे जो प्रस्तोता, उद्गाता और प्रतिहर्ता के नाम से जाने जाते थे। मुख्य गायक उद्गाता होता था, प्रस्तोता और प्रतिहर्ता उसके सहायक होते थे।

1. **प्रस्ताव** – प्रस्तोता, उद्गाता और प्रतिहर्ता, ये तीनों गायक मिलकर सबसे पहले 'हुं' का स्वर में उच्चारण करते थे। जिस प्रकार आजकल गायक आरम्भ में आकार का उच्चारण करते हैं, उसी प्रकार उस समय तीनों गायक मिलकर 'हिंकार' का उच्चारण करते थे। उसके साथ ही प्रस्तोता सामगीत के प्रस्ताव भाग को ओंकार सहित गाता था। मन्त्र या गीत के आरम्भ को 'प्रस्ताव' कहते थे। यह गीत का मुखड़ा होता था। 'प्रस्ताव' एक विशेष प्रकार का स्तोत्र था जो ब्राह्मण या प्रस्तोता द्वारा सामगान के आरम्भ में गाया जाता था।
2. **उद्गीत** – इस विभाग को गाने वाला ऋत्विज 'उद्गाता' कहलाता था। ये भाग सामगान में सबसे अधिक महत्वपूर्ण था। 'उद्गीत' विभाग के सभी स्तोत्रों का गान 'ओंकार' से प्रारम्भ किया जाना आवश्यक था। उदगीत्, गीत का मुख्य और अधिकांश भाग होता था। 'उद्गाता' का अर्थ है ऊँचा गाने वाला। प्रायः 'उद्गीत' भाग उच्च स्वरों में होता था।
3. **प्रतिहार** – 'प्रतिहार' भाग के गाने वाले को प्रतिहर्ता कहते थे। प्रतिहर्ता उद्गीत के अन्तिम पद से गाने को पकड़ कर 'प्रतिहार' भाग गाता था। 'प्रतिहार' का अर्थ है दो विभागों को जोड़ने वाला।
4. **उपद्रव** – उपद्रव का गान उद्गाता यानि प्रमुख सामगायक करता था। ये प्रतिहार के अन्त के भाग का गान करता था।
5. निधन – सामगान के अन्तिम भाग को 'निधन' कहते थे। 'ओम्' का उच्चारण कर जब तीनों ऋत्विज यानि प्रस्तोता, उद्गाता और प्रतिहार एक साथ मिलकर सामगान करते थे तब वही भाग निधन कहलाता था।

सामगान भी इसी दृष्टिकोण के अन्तर्गत आलाप आदि नियमों से तथा शैलीगत विशिष्टताओं के कारण मर्यादाबद्ध, ऋक् तथा यजुष से उत्पन्न होने के कारण अपौरूषेय, ऋषियों द्वारा प्रयुक्त होने के

कारण ब्रह्मोन्मुख साधना से परिपूरित, विशिष्ट ऋचाओं को ही गेयात्मकता प्रदान करने के कारण देवताओं की स्तुतियों से परिपूर्ण, शब्दों की अपेक्षा गेयात्मकता एवं प्रवाहात्मकता का अधिक महत्व होने के कारण भावात्मक सूक्षमता पर आधारित एवं शास्त्रोक्त परम्परा से आबद्ध होने के कारण शास्त्रीय परम्परा से परिपूर्ण, मार्गी संगीत का ही द्योतक है। जिस प्रकार प्रत्येक कालखण्ड में लोक संगीत शास्त्रीय संगीत से तथा शास्त्रीय संगीत लोक संगीत से प्रेरित रहा है उसी प्रकार वैदिक काल में भी इन दोनों के एक दूसरे से प्रभावित होना स्वाभाविक है। आधुनिक युग में "मार्गी संगीत" शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता। जो आधुनिक काल में शास्त्रीय संगीत और अशास्त्रीय संगीत प्रचलित है उसका मूल उद्देश्य लोकरंजनकारी और परिवर्तनशील है, उसको गान कहा जाता है। गान को ही देशी संगीत भी कहा जाता है।

मार्गी संगीत की विशेषताएं :–

1. मार्गी संगीत का सम्बन्ध अध्यात्मवाद के साथ था।
2. मार्गी संगीत के नियम कठोर थे और उनमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं किया जा सकता था।
3. मार्गी संगीत शब्द प्रधान था।
4. कहा जाता है कि मार्गी संगीत की रचना बह्मा जी ने खुद की और फिर उसकी शिक्षा भरत को दी।
5. गन्धर्व इस संगीत में बहुत निपुण होते थे। इसलिए इसका प्रयोग गन्धर्व जाति तक सीमित रहा।
6. आधुनिक युग में मार्गी संगीत का स्वरूप नहीं मिलता। मार्गी के स्थान पर शास्त्रीय संगीत प्रचलित है।

1.4 देशी संगीत

देशी गान से भाव उस संगीत से है जिसका प्रयोग साधारण लोगों ने अपने मनोरंजन के लिए किया। अर्थात् देशी संगीत लोगों का संगीत था उसका मुख्य उद्देश्य लोगों का मनोरंजन करना था। जो संगीत, संगीताचार्य और संगीतकारों ने अपनी बुद्धि से और विशेष कलात्मकता से लोक–रूचि अनुसार पेश किया, उसको गान कहा गया। शारंगदेव ने ऐसे संगीत को देशी संगीत कहा। देशी संगीत की परिभाषा देते हुए पं0 शारंगदेव ने कहा है कि भिन्न–भिन्न देशों में जनरूचि के अनुसार मनुष्य इसको गा–बजाकर या नृत्य करके अपने हृदय का मनोरंजन करता है, उसको देशी संगीत कहा जाता है। इसी प्रकार पं0 दामोदर ने भी कहा है कि वह संगीत, जो देश के भिन्न–भिन्न भागों में, वहां के रीती–रिवाजों के अनुसार जनता का मनोरंजन करे, उसको देशी संगीत कहा जाता है। उपर्युक्त कथन से यही कहा जा सकता है कि संगीत की जिस धारा को संगीतकारों और संगीतचार्यों ने जनरूचि के अनुसार समय–समय पर इसमें परिवर्तन करके पेश किया, उसे गान संगीत कहा गया। असल में गान को ही देशी संगीत कहा गया।

वैदिक कालीन जीवन में देशी संगीत का पर्याप्त प्रचलन था। धार्मिक एवं लौकिक समारोहों पर गीत, वाद्य तथा नृत्य के द्वारा लोगों का मनोरंजन किया जाता था। गीत तथा वाद्यों के साथ ढोल, दुन्दुभि जैसे वाद्यों की संगति की जाती थी। चीनी मिट्टी की एक मुद्रा में एक पुरूष को व्याध्र के समक्ष ढोल बजाते हुए अंकित किया गया है। आज भी आदिवासी जातियों में व्याघ्रादि हिंस्र पशुओं के प्रवेश द्वार पर ग्राम के चारों ओर ढोलक के द्वारा भयंकर गर्जना करने की प्रणाली विद्यमान है। हड़प्पा से प्राप्त एक दूसरे मुद्रा में वाद्य के सम्मुख ढोल बजाए जाने का दृश्य है ऐसा प्रतीत होता है कि सिन्धु प्रदेश में ढोल के साथ–साथ तार के वाद्य भी प्रचलित थे। दो मुद्राओं में मृदंग जैसी वस्तुएं अंकित हैं। ढोल का चित्रण भी एक दूसरी मुद्रा पर है। इनमें एक स्त्री ढोल को बगल में दबायए हुए है। तत्कालीन समाज में अनुशासित सामगान रूपी मार्गी संगीत के साथ–साथ देशी संगीत प्रचुर मात्रा में प्रयोजनीय था। खुले प्रांगण में नृत्य कला के कार्यक्रम में नर–नारी दोनों का भाग लेना, वीणा और तुणव की ध्वनि के साथ गान करते जनसमूह का रात्रि जागरण करना, सोमयाग के विशेष अवसर पर सिर पर कलश रख मार्जलीय परिक्रमा करती हुई दासकुमारियों के नाचने गाने का उल्लेख (तै.सं. 7/5/10/3), बुनाई करते हुए मनोविनोद के लिए गाए गए गीत आदि इस बात का प्रमाण है कि सामान्य समाज में भी संगीत का प्रयोग किया जाता था।

अथर्ववेद में उल्लिखित 'गाथा', 'नाराशंसी' तथा 'रैभी' आदि गीत प्रकार जनसामान्य द्वारा प्रयुक्त गीत ही थे, ऐसा विद्धानों का मत है। क्योंकि डा.परांजपे के अनुसार गाथा आदि गीतों का स्वरूप परम्परागत वीरकाव्य की भांति था जिनका गायन व्यवसायी गायकों द्वारा लौकिक समारोहों पर, राजसभाओं में या विवाह आदि अवसरों पर किया जाता था। नाराशंसी गीत प्रकारों में राजाओं की प्रशंसा की जाती थी। विद्वानों का यह भी मत है कि गाथा गीत प्रकार परम्परागत लौकिक पुरूषों से सम्बन्धित होते थे तथा नाराशंसी गीत प्रकार समकालीन राजाओं की स्तुति से परिपूर्ण होते थे। इन गीत प्रकारों को गाने वाले व्यवसायी गायक–वादक सूत व शैलूष आदि जातियों से सम्बन्ध रखते थे जो सम्भवतः उच्च जातियां नहीं थी।

गायन, वादन और नृत्य तीनों का विकास हमें वैदिक युग में मिलता है। वीणा वाद्य का विकास इस युग में हो चुका था। गायन के साथ इसका प्रयोग भी हो चुका था। अधिकतर नारियां वीणा–वादन करती थी। संगीत के विशेष आयोजन होते थे और नर्तकियां उनमें खुलकर भाग लेती थी। समाज में नृत्य–कला काफी विकसित हो रही थी। इसका प्रमाण ऋगवेद के श्लोक (5/33/6) में आया है– **'नृत्यमनों अमृता'।** आर्य जाति स्वभाव से ही संगीतप्रिय थी। वैदिक युग में देशी संगीत आयोजन और प्रतियोगिताओं का एक मनोरंजन रूप 'समन' के नाम से देखने में आता है। यह समन एक प्रकार से सांगीतिक मेला था। जहां आमोद–प्रमोद के लिए युवक–युवतियां जाते थे। कुमार और कुमारियां वहां वर की खोज में जाते थे। इस सांगीतिक उत्सव में कुमारियों कि सांगीतिक प्रतिभा की जांच होती थी और सफल एवं प्रतिभा सम्पन्न कुमारियों का चयन विवाह के लिए हो जाता था। यह 'समन' आगे चल कर 'समज्जा' के नाम से प्रस्फुटित हुआ।

वैदिक काल में देशी संगीत को उच्च सामाजिक मान्यता प्राप्त थी। इसी युग में वीणा का प्रयोग होने लगा था, जो कि पूर्ण सांगीतिक वाद्य यन्त्र था। इस काल में गीत, वाद्य तथा नृत्य तीनों दृष्टियों का पर्याप्त प्रचलन दृष्टिगोचर होता है। गीत के लिए गीर, गातु, गाथा, गायन्न, गीति तथा साम शब्दों का प्रयोग होता है। ऋगवेद की रचनाएं स्वरावलियों में निबद्ध होने के कारण 'स्तोत्र' कहलाती थी। गीत–प्रबन्धों को गाथा कहा जाता था, जो एक विशिष्ट तथा परम्परागत गीत प्रकार है और इन गाथाओं का गायन धार्मिक तथा लौकिक समारोहों पर किया जाता था। इनके गायक 'गायन्नि्' कहलाते थे। भारत धर्म प्रधान देश है। भारतीय विचारधारा सदा से आदर्श की भावभूमि पर प्रवाहित होती रही है तथा उसका प्रयोजन लोक कल्याण रहा है। इसके कण–कण में राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर की आत्मा समाई हुई है। पूजा के अवसरों पर गाए जाने वाले संगीत की पवित्रता और देशी संगीत धुनों की मनोरंजकता ऐसी धूरियां हैं जिनके आस–पास सारा संगीत घूमता है। प्राचीन जातियों का जो साहित्य उपलब्ध है उसमें प्रार्थनाओं, पूजागीतों, स्तुतियों और वंदनाओं की मात्रा अधिक है।

देशी संगीत के दो मुख्य भेद निबद्ध और अनिबद्ध हैं। इसको भरत, मतंग और शारंगदेव ने भी माना है।

1. निबद्ध गायन – जो सांगीतिक रचना तालबद्ध और छंदबद्ध आदि हो उसको निबद्ध गायन के अन्तर्गत माना जाता है। प्राचीन काल में प्रबंध, वस्तुरूपक आदि रचनाएं और आधुनिक युग में ध्रुपद, धमार, ख्याल, टप्पा, ठुमरी, तराना आदि इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

2. अनिबद्ध गायन – जो सांगीतिक सामग्री ताल में न बंधी हो, उसे अनिबद्ध गायन की श्रेणी में रखा जाता है। इस श्रेणी के अन्तर्गत आलाप को माना जाता है। निबद्ध गायन के अन्तर्गत आने वाली रचनाएं, शैलियां, कलात्मकता और भावुकता प्रकट करती हैं। जबकि अनिबद्ध गायन के अन्तर्गत आलाप गायन में(विशेष सांगीतिक शैलियां, रचनाएं आदि को जिस राग में पेश करना हो, उसके विशेष स्वरों की बढ़त करते हुए अपनी भावना अनुकूल) राग स्पष्टीकरण किया जाता है। शारंगदेव ने इसको आलिप्त गान कहा है। आलिप्त का अर्थ है विस्तार करना।

आधुनिक काल में देशी संगीत का रूप – आज का शास्त्रीय संगीत देशी संगीत की ही देन है। शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत जो परिवर्तन समय–समय पर शैलियों के रूप में, उनकी परम्पराओं के रूप में आए, वे देशी संगीत के कारण ही थे। शास्त्रीय संगीत को लोकप्रिय बनाने के लिए उनमें समय के अनुसार नए–नए तत्वों और शैलियों को अपनाया गया। शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत आने वाली शैलियों जैसे–ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी आदि सभी देशी संगीत की ही देन हैं। ये शैलियां अलग–अलग समय में प्रचलित रही हैं जैसे मध्य काल में ध्रुपद का अधिक प्रचार रहा, उसके पश्चात समय के परिवर्तन के साथ लोगों की रूचि अनुसार ख्याल शैली का अविष्कार हुआ। मुहम्मद शाह रंगीले के समय तक सदारंग–अदारंग ने अनेक ख्यालों की रचना की परन्तु वह स्वयं ध्रुपद शैली ही गाते थे क्योंकि उस समय तक ख्याल को नीच वर्ग की शैली माना जाता था। परन्तु धीरे–धीरे ख्याल का अधिक प्रचार हो गया और ध्रुपद का प्रचार कम हो गया। इस प्रकार ख्याल के युग में ठुमरी और गज़ल आदि गीत शैलियों को अशास्त्रीय संगीत माना जाता था। परन्तु धीरे–धीरे ये शैलियां भी लोकप्रिय बन गई। उच्च कोटि के संगीतकार शास्त्रीय संगीत पेश करते समय कई प्रकार की लोकधुनों को गाते और वाद्यों पर बजाते हैं और लोग उनकी प्रशंसा करते हैं। इस प्रकार लोकधुनें रागों का रूप धारण कर लेती हैं। खमाज, खम्भावती, काफी, पीलू, मांड़, सारंग आदि रागों के नाम इस वर्ग में आते हैं।

इस प्रकार मार्गी और देशी का परस्पर एक विशेष सम्बन्ध रहा और समय–समय पर यह एक–दूसरे को प्रभावित करती रही हैं। लोक–संगीत का मौलिक पक्ष बहुत कम मिलता है। उसका मुख्य कारण है कि चित्रपट और शास्त्रीय संगीतकारों ने लोकधुनों को शास्त्रीय संगीत में इस प्रकार सम्मिलित कर दिया है कि लोक–संगीत का मौलिक पक्ष दिन–प्रतिदिन कम होता जा रहा है। आज का शास्त्रीय संगीत और अशास्त्रीय संगीत देशी संगीत का ही रूप है।

देशी संगीत प्रत्येक जाति, प्रत्येक धर्म का असली रूप होता है। इसमें लोक संस्कृति के अंशों का बहुत ही सुंदर ढंग से वर्णन किया गया होता है। देशी संगीत का मुख्य उद्देश्य लोकरंजनकारी था, इसलिए इसमें समय–समय पर परिवर्तन आता रहा है।

देशी संगीत की विशेषताएं :–

1. देशी संगीत का मूल उद्देश्य जनरंजनकारी था।
2. देशी संगीत प्रत्येक देश और प्रांत का अलग–अलग होता है।
3. देशी संगीत स्वर प्रधान होता है।
4. देशी संगीत में लोगों की रूचि अनुसार परिवर्तन होता रहता है।
5. देशी संगीत के नियम मार्गी संगीत की भांति कठोर नहीं होते हैं।
6. आधुनिक युग में देशी संगीत शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता बल्कि उसके स्थान पर लोक संगीत का प्रयोग होता है।

मार्गी संगीत और देशी संगीत में अन्तर :–

1. मार्गी संगीत शब्द प्रधान था जबकि देशी संगीत स्वर प्रधान रहा।
2. मार्गी संगीत का सम्बन्ध अध्यात्मवाद के साथ था जबकि देशी संगीत का सम्बन्ध जनरंजनकारी था।
3. मार्गी संगीत के बारे में यह कहा जाता है कि इसको ब्रह्मा जी ने खुद बनाया जबकि देशी संगीत मनुष्य ने अपनी रूचि के अनुसार बनाया।
4. मार्गी संगीत का क्या स्वरूप था, इसके बारे में कोई विशेष जानकारी नहीं मिलती परन्तु देशी संगीत प्रत्येक प्रांत का अलग–अलग होता है।
5. मार्गी संगीत के नियम बहुत कठोर होते थे परन्तु देशी संगीत में नियमों की कठोरता नहीं होती थी।
6. मार्गी संगीत का दूसरा नाम गन्धर्व था जबकि देशी संगीत का दूसरा नाम गान था।
7. आधुनिक काल में मार्गी संगीत के स्थान पर शास्त्रीय और देशी संगीत के स्थान पर लोक संगीत शब्द का प्रयोग किया जाता है।

1.5 दक्षिण भारतीय संगीत का परिचय

दक्षिण भारतीय संगीत का उद्भव एवं विकास – नाट्यशास्त्र से लेकर संगीतराज ग्रन्थों के अध्ययन से यही पता चलता है कि सम्पूर्ण भारत में एक ही संगीत पद्धति प्रचलित थी। नाट्यशास्त्र में किसी भी विशेष स्थान से सम्बन्धित सांगीतिक संस्कृति का वर्णन नहीं है, जिसे दक्षिण भारतीय संगीत या कर्नाटक संगीत माना जाए। कुछ विद्वानों के अनुसार संगीतरत्नाकर के टीकाकार कल्लिनाथ के कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि उनके समय तक दक्षिण भारतीय संगीत के पृथक रूप का प्रारम्भ हो गया था। कल्लिनाथ द्वारा विभिन्न संज्ञाओं जैसे पंचश्रुतिक, षडश्रुतिक, जन्य–जनक मेल आदि का प्रयोग किया जाना उस समय में दक्षिण भारतीय संगीत के अस्तित्व को दर्शाता है। संगीतरत्नाकर के काल में दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति के बीज अंकुरित हो चुके थे। संगीत की दो प्रणालियाँ प्रचलित है, उनमें से एक को कर्नाटकी और दूसरी को हिन्दुस्तानी प्रणाली कहा जाता है। मद्रास के आस–पास के क्षेत्र में जो संगीत प्रणाली प्रसिद्ध है उसको कर्नाटकी कहा जाता है तथा शेष भारत में सर्वत्र हिन्दुस्तानी प्रणाली प्रचलित है।''

प्राचीन काल से लेकर 1300 ई0 तक पूरे भारत में एक ही शास्त्रीय संगीत का प्रचलन था। मुसलमानों के आने के पश्चात भारतीय संस्कृति में मुस्लिम संस्कृति का प्रभाव पड़ने लगा। भारत का उत्तरी क्षेत्र मुस्लिम(फारस, ईरान इत्यादि) संस्कृति, संगीत, कला आदि से अत्यधिक प्रभावित हुआ। जिसका परिणाम यह हुआ कि जो संगीत ईश्वर की आराधना के लिए किया जाता है वह शासकों को खुश करने एवं भौतिक साधनों की प्राप्ति के साधन के रूप में प्रयोग होने लगा। दक्षिणी क्षेत्र मुसलमानों के आक्रमण से बचा रहा जिसका परिणाम यह हुआ कि वहाँ का संगीत बाह्य संस्कृति से अप्रभावित रहा। इसके परिणामस्वरूप ही भारतीय संगीत में दो अलग–अलग शैली उत्तरी एवं दक्षिणी संगीत पद्धति का निर्माण हुआ।''

दक्षिण भारतीय संगीत के स्वर – दक्षिण भारतीय संगीत में शुद्ध तथा विकृत स्वर मिलाकर कुल 12 स्वर हैं। 'सा' और 'प' अचल स्वर हैं तथा शेष चल स्वर कहलाते हैं। चल स्वर जब अपने स्थान से ऊपर या नीचे हों तो उन्हें क्रमशः तीव्र या शुद्व स्वर कहते हैं। दक्षिण भारतीय संगीत में शुद्ध स्वरों की स्थिति उत्तर भारतीय संगीत के समान ही है। दक्षिण भारतीय संगीत में विकृत स्वरों की स्थिति उत्तर भारतीय संगीत से अलग है तथा इनके नामों में भी भिन्नता है। दक्षिण भारतीय संगीत में स्वर की शुद्ध स्थिति पहले मानी जाती है तथा शुद्व स्वर के बाद विकृत स्वर आते हैं, जो प्राचीन भारतीय संगीत परम्परा के समान है। दक्षिण भारतीय व उत्तर भारतीय संगीत के स्वरों की स्थिति निम्न तालिका से समझी जा सकती है।

उत्तर भारतीय स्वर		दक्षिण भारतीय स्वर
1. षड्ज	–	षड्ज
2. कोमल ऋषभ	–	शुद्ध ऋषभ
3. शुद्ध ऋषभ	–	चतुःश्रुति ऋषभ या शुद्ध गान्धार
4. कोमल गान्धार	–	षट्श्रुति ऋषभ या साधारण गान्धार
5. शुद्ध गान्धार	–	अन्तर गान्धार
6. शुद्ध मध्यम	–	शुद्ध मध्यम
7. तीव्र मध्यम	–	प्रति मध्यम
8. पंचम	–	पंचम
9. कोमल धैवत	–	शुद्ध धैवत
10.शुद्ध धैवत	–	चतुःश्रुति धैवत या शुद्ध निषाद
11.कोमल निषाद	–	षट्श्रुति धैवत या कैशिक निषाद
12.शुद्ध निषाद	–	काकलि निषाद

दक्षिण भारतीय संगीत के थाट – उत्तर भारतीय संगीत में जिसे 'थाट' कहते हैं, दक्षिण भारतीय संगीत में उसे 'मेल' कहा जाता है। मेल के आधार पर राग वर्गीकरण का श्रेय पं0 व्यंकटमुखी को जाता है। दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति में कुल 72 मेल माने गए हैं। दक्षिण भारतीय पद्धति में एक ही मेल(थाट) में एक स्वर के दो रूपों का प्रयोग एक साथ किया जा सकता है, परन्तु उत्तर भारतीय संगीत में यह प्रयोग मान्य नहीं है। उत्तर भारतीय संगीत के दस थाटों के समकक्ष दक्षिण भारतीय संगीत के मेल निम्न तालिका में वर्णित हैं :–

हिन्दुस्तानी थाट		मेलकर्ता
1. भैरवी	–	हनुमत तोड़ी
2. भैरव	–	मायामालवगौड
3. आसावरी	–	नटभैरवी
4. काफी	–	खरहरपिया
5. खमाज	–	हरिकाम्भोजी
6. बिलावल	–	धीरशंकराभरणम्
7. तोड़ी	–	शुभपंतुवराली
8. पूर्वी	–	कामवर्धिनी
9. मारवा	–	गमनप्रिया
10. कल्याण	–	मेचकल्याणी

दक्षिण भारतीय संगीत की रचनाएं :–

1. **पदम्** – दक्षिण भारतीय पद्धति में पदम् का विशेष स्थान है। पदम् में मुख्य रूप से तीन पंक्तियाँ होती है–पल्लवी, अनुपल्लवी व चरणम्। पदम् के रचियताओं में पुरन्दरदास, कनकदास, जगन्नदास, तथा मुट्टु ताण्डव का नाम प्रमुख है। 17वीं सदी के क्षेत्रज्ञ के पदम् अत्यधिक प्रचलित हुए। पदम् के अन्य रचनाकारों में तंजौर के नरेश शाहजी(मराठी व तेलगु भाषा में), स्वाती तिरूनल महाराज(संस्कृत, तेलगू व मलयालम भाषा में) व सुब्बाराय अय्यर का नाम आता है।

2. **कीर्तन/कीर्तनम्** – दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति की महत्वपूर्ण रचनाओं में कीर्तन का नाम आता है। कीर्तन भगवान की उपासना सम्बन्धित रचना है जो राग व ताल मे निबद्व होती है। इसके तीन अंग माने गए हैं–पल्लवी, अनुपल्लवी व चरणम् जो प्राचीन प्रबन्ध के अवयव क्रमशः ध्रुव, अंतरा व आभोग के समान है। कुछ कीर्तन अनुपल्लवी रहित भी होते हैं। कीर्तन में एक से अधिक चरण भी हो सकते हैं। 14वीं–15वीं शताब्दी के तालपाकम्, कीर्तन के प्रथम रचनाकार थे। अन्य रचियताओं में श्री त्यागराज, मुतुस्वामी दीक्षितार, श्यामाशास्त्री, पुरून्दरदास, स्वाति तिरूनाल आदि का नाम आता है।

3. **कृति** – दक्षिण भारतीय संगीत की रचना कृति, कीर्तन का विकसित रूप मानी जाती है। कलात्मक दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण रचना है। कुछ विद्वानों के अनुसार इसकी उत्पत्ति 15वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मानी गई है। कृति में मुख्यतः श्रृंगार, करूण व भक्ति रस की प्रधानता होती है। इसमें भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष की प्रधानता होती है। यह प्रचलित व अप्रचलित दोनों प्रकार के रागों में निबद्ध मिलती है तथा गाई जाती है। कृति में स्वर का प्रमुख स्थान है तथा साहित्य गौण रहता है। इसके तीनों अंगों–पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम् का प्रयोग क्रम से किया जाता है।

4. **वर्णम्** – दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति की रचनाओं में वर्णम् का प्रमुख स्थान है। कर्नाटक संगीत में राग स्वरूप निर्धारण में इसका ज्ञान आवश्यक है। कर्नाटक संगीत में गायक व वादक के लिए वर्णम् की शिक्षा अनिवार्य मानी गई है। राग स्वरूप के निर्धारण व स्पष्टीकरण हेतु हर राग को स्थाई, आरोही, अवरोही और संचारी वर्ण में रचने के कारण इसको वर्णम् नाम दिया गया। सभागान और वादन में सर्वप्रथम वर्णम् ही गाया या बजाया जाता है। वर्णम् के दो भाग हैं – 1. पूर्वांग 2. उत्तरांग।

5. **जावली** – यह दक्षिण के जावल शब्द से बना है जिसका अर्थ होता है श्रृंगारमय गीत। यह आधुनिक गीत का प्रकार है। जावल मुख्यतः श्रृंगार रस प्रधान होती है। इसका विषय मुख्यतः नायक व नायिका के प्रेम सम्बन्धों पर आधारित रहता है। इसका इतिहास 100–200 वर्ष पूर्व से मिलता है। यह उत्तर भारत की

गायन शैली ठुमरी से मिलती जुलती है। जावली में भी अन्य रचनाओं की भाँति पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम् अंग होते हैं। यह मुख्यतः परज, खमाज, काफी, विहाग, झिंझोटी आदि रागों में गाई जाती है तथा इसके साथ प्रायः आदि, रूपक, चापु आदि तालों का प्रयोग किया जाता है। इसके रचनाकरों में स्वाति तिरूनाल, पट्टणम् सुब्रह्मणयम, श्रीनिवास अय्यंगार आदि का नाम प्रमुख रूप से लिया जाता है।

6. **तिल्लाना** – दक्षिण भारतीय संगीत की प्रमुख गायन शैलियों में तिल्लाना का अपना अलग स्थान है। यह उत्तर भारतीय संगीत के तराना के समकक्ष है। भारतीय संगीत पद्धति के तराना नामक गीत का स्वरूप दक्षिणात्य संगीत का तिल्लाना है। इसका प्रयोग दक्षिण भारतीय संगीत में नृत्य के साथ भी किया जाता है। इसमें मुख्य रूप से तोम, तनन, न, दे, धिन् जैसे निरर्थक अक्षर, सोलकट्टु अर्थात् पाटुक्षर(तरिकिट) और स्वर तथा चरणम् में पद रहता है।

7. **रागमालिका** – ऐसी रचना जिसमें भिन्न–भिन्न प्रकृति के रागों का मिश्रण हो उसे रागमालिका कहते हैं। यह एक लम्बी रचना है जिसे भिन्न–भिन्न रागों में अलग–अलग खण्ड़ों में गाया जाता है। इसमें एक बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि समान स्वरों के रागों को पास ना रखा जाए। रागमालिका में प्रयुक्त ताल शुरू से लेकर अन्त तक एक ही रहता है। इसके रचयिताओं को यह स्वतन्त्रता होती है कि वह किन रागों का चुनाव करें व उनका क्रम क्या रखा जाए। इसके भी तीन अंग पल्लवी, अनुपल्लवी व चरणम् होते हैं।

दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति के प्रमुख वाद्य – प्राचीनकाल में उत्तर व दक्षिण संगीत पद्धतियों में वाद्य समान ही थे किन्तु बाद में अलग वातावरण, विभिन्न गायन शैलियों व वाद्यों के विकास के साथ–साथ इनमें भी परिवर्तन होने लगे, इस कारण कुछ नए वाद्य भी अस्तित्व में आए। आज दोनों पद्धतियों में वाद्यों, उनकी बनावट व उनकी वादन शैलियों में काफी अन्तर आ गया है।

1. **बेला वाद्य** – दक्षिण भारतीय संगीत पद्धति में बेला स्वतन्त्र व संगत वाद्य दोनों के रूप में प्रमुख स्थान रखता है। गायन में इसका विशेष प्रयोग आलाप करते समय व तान आदि क्रियाओं का अनुकरण करने में किया जाता है।

2. **दक्षिणात्य वीणा** – वीणा का भी दक्षिण भारतीय संगीत में महत्वपूर्ण स्थान है। इसका प्रयोग स्वतन्त्र वादन व संगत वाद्य दोनों रूप में किया जाता है। प्राचीन काल से ही वीणा का संगीत में महत्वपूर्ण स्थान है। दक्षिण भारतीय संगीत में अभी भी वीणा अत्यन्त लोकप्रिय व विकसित रूप में प्रचलित है। कर्नाटक पद्धति में इसके लोकप्रिय होने के कारण इसको समय के अनुसार लगातार विकसित किया जाता है।

3. **नागस्वरम् या तूर्य** – कर्नाटक संगीत के वाद्य में नागस्वरम या तूर्य का अपना स्थान है। देवालयों में, मांगलिक कार्यक्रमों में, उत्सव आदि अवसरों में इसका प्रयोग किया जाता है। यह आच्चा लकड़ी का बना होता है जिसकी लम्बाई लगभग डेढ़ हाथ होती है। इसमें सात स्वरों के रन्ध्र होते हैं जो चौथाई अंगुल व्यास के बनते हैं। मुख्य नागस्वरम् के अलावा एक अन्य नागस्वरम् का प्रयोग स्वर देने के लिए किया जाता है।

4. **मृदंगम्** – यह कर्नाटकी संगीत का प्रमुख ताल वाद्य है। मृदंगम् में पूड़ी का चमड़ा उत्तर भारतीय पखावज की अपेक्षा मोटा होता है। उत्तर भारत मृदंग की किनार का चमड़ा एक इंच व्यास का रखा जाता है, जबकि दक्षिण भारतीय मृदंगम् में किनारे का यह चमड़ा स्याही के स्थान को छोड़कर पूड़ी का समस्त स्थान घेरता है। इस तरह मृदंगम् में चाँट और स्याही के भाग दिखाई देते हैं जबकि पखावज में पूड़ी, चाँट, लव तथा स्याही इन तीनों भागों में दिखाई देती है।

दक्षिण भारतीय ताल पद्धति – कर्नाटक या दक्षिण ताल पद्धति में 35 तालों का प्रयोग किया जाता है। कर्नाटक ताल पद्धति में सात मुख्य ताल हैं। संगीत के क्रियात्मक पक्ष में तालों की अपर्याप्यता को देखते हुए इन तालों में व्यवहारित अंगों को दुगुना, चौगुना, पंचगुना, छःगुना और नौगुना करके इन सात तालों से ही पैंतीस तालों का निर्माण किया गया है। दक्षिण ताल पद्धति में अंग का बहुत महत्व है। अंग 6 प्रकार के होते हैं। तालों के स्वरूप को प्रकट करने व ताल लिखने या प्रदर्शित करने के लिए इनका प्रयोग किया

जाता है। जो काम उत्तर भारतीय ताल पद्धति में विभागों का है वही दक्षिण में अंगों का है। निम्न तालिका से आप अंगों को समझ सकेंगेः–

क्रम	अंग नाम	मात्रा	चिन्ह
1	अणुद्रुत	1	ु
2	द्रुत	2	0
3	लघु	4	।
4	गुरू	8	ऽ या 8
5	प्लुत	12	3 या 8
6	काकपद	16	+

दक्षिण भारतीय व उत्तर भारतीय संगीत पद्धतियों की समानताएं :–

1. दोनों पद्धतियों में एक सप्तक के अन्तर्गत 22 श्रुतियां और 12 शुद्व और विकृत स्वर होते हैं। स्वर स्थानों में भी लगभग समानता है।
2. दक्षिण संगीत पद्धति में मेलराग वर्गीकरण प्रचलित है तथा उत्तर भारत में थाट–राग वर्गीकरण। मेल व थाट दोनों शब्दों का मतलब एक ही है। दोनों पद्धतियों में थाट/मेल को जनक तथा राग को जन्य माना गया है। थाट राग वर्गीकरण का श्रेय पं0 भातखंडे जी को तथा मेल राग वर्गीकरण का श्रेय पं0 व्यंकटमुखी को जाता है।
3. दोनों पद्धतियों की कुछ तालें भी समान हैं। जैसे उत्तर भारत की चारताल व एकताल, दक्षिण की चतस्त्र जाति की अठ ताल के समकक्ष है।
4. दोनों पद्धतियों में विभाग की प्रथम मात्रा पर ताली देने का प्रावधान है।
5. दोनों पद्धतियों में कुछ राग भी समान हैं। जैसे हंसध्वनि, चारूकेशी, नारायणी, आभोगी, किरवाणी, कलावती आदि। खमाज व विहाग दक्षिण में उत्तर भारत के समान ही गाए जाते हैं। हिंडौल राग उत्तर के मालकौंस के समकक्ष है।
6. दोनों पद्धतियों की कुछ गायन शैलियों में भी समानता पाई जाती है। जैसे तराना–तिल्लाना, ठुमरी–जावलि, ख्याल–वर्णम् आदि।

दक्षिण भारतीय व उत्तर भारतीय संगीत पद्धतियों की असमानताएं :–

1. दक्षिण में स्वर के कम्पन पर तथा उत्तर में स्वर की स्थिरता पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
2. दक्षिण में एक ही स्वर को दो नामों से भी जाना जाता है, जैसे चतुःश्रुति ऋषभ, साधारण गांधार, चतुःश्रुति धैवत और कौशिक निषाद को क्रमशः शुद्ध गान्धार, षट्श्रुति ऋषभ, शुद्ध निषाद और षट्श्रुति धैवत जैसे अन्य नामों से भी जाना जाता है। उत्तर में स्वरों के दो नाम नहीं होते।
3. दक्षिण में बन्दिशों में परिवर्तन नहीं किया जाता है। बंदिश की मौलिकता पर विशेष बल दिया जाता है। उत्तर में रचनाओं में इतना बंधन नहीं है। गायक रचना में परिवर्तन कर सकता है।
4. उत्तर में बड़े ख्याल व छोटे ख्याल में रचना(साहित्य) एक से दो पंक्तियों का होता है तथा गायक उसी पर अधिक समय तक राग–विस्तार करता रहता है। दक्षिण की कृतियों में पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरणम् होते हैं तथा इनमें उत्तर की अपेक्षा साहित्य अधिक रहता है।
5. एक मतानुसर कर्नाटक संगीत में विलम्बित लय नहीं होती। रचनाएं प्रायः मध्य व द्रुत लय में होती हैं। उत्तर में 10 थाट माने गए हैं तथा दक्षिण में 72 मेल माने गए हैं।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्न :–

(क) देशी संगीत के विषय में संक्षेप में बताईए।

(ख) दक्षिण संगीत की शैली जावली के विषय में संक्षेप में समझाइए।

(ग) मार्गी संगीत के अन्तर्गत आने वाली गायन शैली का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
(घ) दक्षिण भारतीय संगीत के स्वरों की तुलना उत्तर भारतीय स्वरों के साथ कीजिए।

ख) सत्य/असत्य बताइए :–

(क) मार्गी संगीत स्वर प्रधान था जबकि देशी संगीत शब्द प्रधान रहा।
(ख) दक्षिण भारतीय संगीत एवं संस्कृति पर मुसलमानों का प्रभाव कम रहा है।
(ग) देशी संगीत के नियम मार्गी संगीत की भांति कठोर नहीं होते हैं।
(घ) उत्तर भारतीय स्वर कोमल ऋषभ, दक्षिण के षट्श्रुति ऋषभ के समान है।

ग) रिक्त स्थान की पूर्ति :–

(क) मार्गी संगीत का दूसरा नाम गन्धर्व था जबकि देशी संगीत का दूसरा नाम _____था।
(ख) तिल्लाना गायन शैली उत्तर भारतीय _____गायन शैली के समान है।
(ग) हिन्दुस्तानी थाट पूर्वी, दक्षिण के _____थाट के समान है।
(घ) सामगान में उद्गीत गायन प्रस्तुत करने वाले को _____कहते थे।

1.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप बता सकेंगे कि प्राचीन काल में प्रचलित सांगीतिक शैलियों का प्रयोग किस रूप में था। आप मार्गी एवं देशी संगीत के विषय में भी समझ चुके होंगे। भारतीय संगीत अति प्राचीन है जिसकी जानकारी हमें पौराणिक ग्रंथों से प्राप्त होती है। भारतीय ऋषियों, मनीषियों ने सृष्टि की उत्पत्ति नाद ब्रह्म से मानी है। भारतीय संगीत प्रारम्भ से ही दो धाराओं में प्रवाहित होता रहा है। एक वह जिसका प्रयोग धार्मिक समारोहों पर परमार्थिक दृष्टि से किया जाता रहा है और दूसरा वह जिसका लौकिक समारोहों पर केवल मनोरंजन की दृष्टि से प्रयोग किया जाता रहा है। वैदिक काल में इन दोनों धाराओं का प्रचलन समानान्तर रूप से उपलब्ध होता है। मध्यकालीन परिभाषा के अनुसार एक मार्गी रहा है तो दूसरा देशी। प्रथम को सामगान कहा गया तो दूसरे को गन्धर्व नाम दिया गया। वह गन्धर्व संगीत रामायण तथा महाभारत काल तक मार्गी संगीत का स्वरूप बन गया। सामवेद एक ऐसा वेद है जिसके मंत्र यज्ञों में देवताओं की स्तुति के लिए गाए जाते थे। ऋचाओं के ही संगीतमय परायण से सामगान का प्रथम विकास ऋषियों द्वारा हुआ था। सामगान में स्वर का विशेष महत्व था। साम का आरम्भ 'ओम' स्वर से करने की प्रथा थी, साथ ही सामगान का अन्त भी 'ओम' से ही होता था। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप बता सकेंगे कि दक्षिण भारतीय संगीत का स्वरूप किस प्रकार उत्तर भारतीय संगीत से साम्य एवं क्या भिन्नता लिए हुए है। भारतवर्ष के दक्षिण भाग में कर्नाटक संगीत परम्परा का चलन है। कर्नाटक संगीत के स्वरूप में प्राचीन समय से बहुत कम अन्तर आया है। परन्तु उत्तर भारतीय संगीत में मुगलों के शासन के पश्चात पर्याप्त अन्तर आ चुका है।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

ख) सत्य असत्य बताइए :–

(क) मार्गी संगीत स्वर प्रधान था जबकि देशी संगीत शब्द प्रधान रहा। **असत्य**
(ख) दक्षिण भारतीय संगीत एवं संस्कृति पर मुसलमानों का प्रभाव कम रहा है। **सत्य**
(ग) देशी संगीत के नियम मार्गी संगीत की भांति कठोर नहीं होते हैं। **सत्य**
(घ) उत्तर भारतीय स्वर कोमल ऋषभ दक्षिण के षट्श्रुति ऋषभ के समान है। **असत्य**

ग) रिक्त स्थान की पूर्ति :–

(क) मार्गी संगीत का दूसरा नाम गन्धर्व था जबकि देशी संगीत का दूसरा नाम **गान** था।
(ख) तिल्लाना गायन शैली उत्तर भारतीय **तराना** गायन शैली के समान है।
(ग) हिन्दुस्तानी थाट पूर्वी, दक्षिण के **कामवर्धिनी** थाट के समान है।
(घ) सामगान में उद्गीत गायन प्रस्तुत करने वाले को **उद्गाता** कहते थे।

1.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे, (1969), भारतीय संगीत का इतिहास, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी।
2. वसन्त,(1997), *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
3. शान्ति गोबर्धन (1989), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2*, पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. चौधरी, डॉ0 सुभद्रा, भारतीय संगीत में निबद्ध, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली।
5. चौधरी, डॉ0 सुभद्रा(व्याख्या एवं अनुवादकर्त्री), संगीत रत्नाकर, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली।
6. परांजपे, डॉ0 शरतचन्द्र श्रीधर, संगीत बोध।
7. देवांगन, तुलसीराम, भारतीय संगीत शास्त्र।
8. शास्त्री, के0 वासुदेव, संगीत शास्त्र।
9. सेन, डॉ0 अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन।
10. चक्रवर्ती, डॉ0 इन्द्राणी, संगीत मंजूषा।
11. जौहरी, सीमा, संगीतायन, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली।
12. Sambmurti, P., South Indian Music.

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. डॉ0 रमा सर्राफ (2004) *भारतीय संगीत सरिता,* कनिष्का पब्लिशर्स नई दिल्ली
2. डॉ0 भगवन्त कौर,(2002), *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. दक्षिण भारतीय संगीत के अन्तर्गत विभिन्न गायन विधाओं को विस्तार से समझाइए।
2. प्राचीन मार्गी संगीत के अन्तर्गत आने वाली गायन शैली एवं उसमें प्रयुक्त वाद्यों के विषय में विस्तार से समझाइए।

इकाई 2 – संगीतज्ञों(उ0 आबिद हुसैन, उ0 शेख दाउद, उ0 आफाक हुसैन, उ0 अमीर हुसैन खां, पं0 गुदई महाराज, उ0 लतीफ अहमद खां व पं बीरू मिश्र) का जीवन परिचय

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 उ0 आबिद हुसैन
2.4 उ0 शेख दाउद
2.5 उ0 आफाक हुसैन
2.6 उ0 अमीर हुसैन खां
2.7 पं0 गुदई महाराज
2.8 उ0 लतीफ अहमद खां
2.9 पं0 बीरू मिश्र
2.10 सारांश
2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के द्वितीय खण्ड की दूसरी इकाई है। इस इकाई से पूर्व आपने प्राचीन एवं मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य तथा तबले की उत्पत्ति व विकास के विषय में जाना। आप मार्गी संगीत, देशी संगीत एवं दक्षिण भारतीय संगीत के विषय में भी जान चुके हैं।

प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आप तबला वादकों के जीवन से जुडे विभिन्न पहलुओं को जानेंगे, जिसमें लखनऊ, फरूखाबाद तथा देहली घराने के कलाकारों का जीवन परिचय प्रस्तुत किया जाएगा।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जानेंगे कि किन–किन परिस्थितियों में इन महान तबला वादकों ने अपने को प्रतिष्ठित किया। इनका जीवन सभी के लिए प्रेरणादायक है, अतः सभी तबला के विद्यार्थी इन तबला वादकों के जीवन परिचय से प्रेरित हो सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :–

1. तबला वादकों के जीवन वृत से परिचित होंगे।
2. तबला वादकों के जीवन परिचय से प्रेरणा ले सकेंगे।
3. तबला वादकों द्वारा दिखाए गए धैर्य, निष्ठा तथा कठिन परिश्रम के लिए प्रेरित होंगे।

2.3 उ0 आबिद हुसैन

जन्म – उ0 आबिद हुसैन का जन्म लखनऊ में सन् 1867 को हुआ।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – उ0 आबिद हुसैन का सम्बन्ध लखनऊ घराने से है तथा आप खलीफा आबिद हुसैन के नाम से प्रसिद्ध हुए। उ0 आबिद हुसैन, उ0 मोहम्मद खां के पुत्र थे। मोहम्मद खां, उ0 मम्मन खां उर्फ मम्मू खां के पुत्र तथा बख्शू खां के पौत्र थे। उ0 मोहम्मद खां की मृत्यु अल्प आयु में हो गई थी। उ0 मोहम्मद खां के दुसरे पुत्र उ0 मुन्ने खां थे जो उ0 आबिद हुसैन से बडे थे, अतः उ0 आबिद हुसैन के पिता उ0 मोहम्मद खां की मृत्यु के पश्चात उ0 आबिद हुसैन की तबले की शिक्षा अपने बडे भाई मुन्ने खां से हुई। मुन्ने खां नवाज वाजिद अली शाह के दरबार में नियुक्त थे तथा वहां पर कत्थक नृत्य सम्राट महाराज कालिका प्रसाद तथा महाराज बिन्दादीन के साथ नृत्य की संगति किया करते थे। उ0 आबिद हुसैन प्रतिभा के धनी तथा परिश्रमी थे। इनके तबला वादन में एक विशेष प्रकार का आर्कषण था। लखनऊ बाज को नचकरन बाज भी कहा जाता है। जिसमें नृत्य के साथ संगति हेतु लखनऊ बाज से रचनाएं की गई थी। नचकरन बाज के नाम से लखनऊ बाज, उ0 आबिद हुसैन के समय में ही प्रचलित हुआ जिसका मुख्य श्रेय इनके बड़े भाई उ0 मुन्ने खां को जाता है। लखनऊ में मैरिस म्युजिक कालेज की स्थापना हुई जिसमें उ0 आबिद हुसैन खां को तबला विभाग की जिम्मेदारी सौंपी गई। बाद में मैरिस कॉलेज का नाम बदल कर भातखण्डे संगीत महाविद्यालय हो गया जो कि वर्तमान में भी इसी नाम से जाना जाता है। संगीत शिक्षा हेतु भारत वर्ष का यह प्रतिष्ठित संस्थान है। वर्तमान भातखण्डे संगीत महाविद्यालय को समविश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। उ0 आबिद हुसैन ने लखनऊ बाज को बहुत समृद्ध किया तथा कहा जाता है कि लाल किला परन की रचना उ0 आबिद हुसैन ने ही की थी।

शिष्य परम्परा – उ0 वाजिद हुसैन, उ0 आबिद हुसैन के दामाद, भतीजे व शिष्य थे तथा इनके द्वारा ही मुख्य रूप से उ0 आबिद हुसैन की परम्परा को आगे बढ़ाया गया। इसके अतिरिक्त इनके प्रमुख शिष्यों में बनारस के पं. बीरू मिश्र, देवी प्रसन्ना घोष, मेहंदी हुसैन खां, अली कादिर खां, हिरेन्द्र किशोर राय चौधरी, राजीव लोचन डे, वासुदेव प्रसाद, शेर खां, अजीम बख्श(बम्बई), जहांगीर खां(इन्दौर), चुन्नी लाल गांगुली, क्षितिज लहरी, शिशिर भूषण भट्टाचार्य, उमेश दास, राय बहादुर, केशव दास बनर्जी, सुघान खां(ढाका), हीरेन्द्र कुमार गांगुली, गंगा प्रसाद रहे। इनकी परम्परा में आफाक हुसैन के पुत्र उ0 इल्मास खां लखनऊ में तबला की शिक्षा देकर परम्परा का निर्वाह कर रहे हैं।

मोहम्मद खां

↓

आबिद हुसैन(पुत्र)

↓

उस्ताद वाजिद हुसैन (भजीता, दमाद)

मृत्यु – उ0 आबिद हुसैन की मृत्यु लखनऊ में सन् 1936 मे हुई।

2.4 उ0 शेख दाउद

जन्म – उ0 शेख दाउद का जन्म शोलापुर (महाराष्ट्र) में 1916 में हुआ।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – आपके पिता हासिम साहिब पी0डब्लू0डी0 में ड्राफ्टमैन थे। इनका सम्बन्ध संगीत के परिवार से नहीं था। ऐसे परिवार में जन्म लेने के बावजूद उ0 शेख दाउद ने अपने समय के खानदानी तबला वादकों में अपना विशेष एवं सम्मानजनक स्थान बनाया था। गायक उ0 अब्दुल करीम खां(किराना), शेख दाउद के पिता हासिम साहिब के अच्छे मित्र थे तथा शेख दाउद की संगीत में रूचि देखकर हासिम साहिब उनको उ0 अब्दुल करीम खां के पास ले

जाने लगे। इस प्रकार संगीत तथा तबले की प्रारम्भिक शिक्षा उ0 अब्दुल करीम खां से हुई। शोलापुर के जमींदार मोहम्मद कासिम को तबला वादन की शिक्षा प्राप्त थी अतः उन्होंने उ0 शेख दाउद को तबला वादन की विधिवत शिक्षा देनी आरम्भ की।

उ0 शेख दाउद को 1936 में हैदराबाद के रेडियो स्टेशन में तबला वादन के लिए आमंत्रित किया गया। इसके बाद 1939 में वे हैदराबाद में ही बस गए जहां पर इन्होंने हैदराबाद रेडियो स्टेशन में स्टाफ कलाकार के रूप में नौकरी की।

हैदराबाद में देहली घराने के उ0 बोली बख्श के भतीजे उ0 अलादियां खां थे। अतः शेख दाउद उ0 अलादिया खां के शिष्य हो गए। उ0 शेख दाउद को उ0 अलादिया के पिता उ0 बोली बख्श से भी सीखने का अवसर मिलता रहा। इस प्रकार शेख दाउद को देहली बाज की शिक्षा प्राप्त हुई। उ0 अल्लादिया खां की मृत्यु के पश्चात् उ0 शेख दाउद ने उ0 अल्लादिया खां के पुत्र छोटे खां, मोहम्मद खां से तबला वादन की शिक्षा ली।

उ. शेख दाउद ने लखनऊ घराने के उ0 जहांगीर खां, जो कि उस्ताद आबिद हुसैन के शिष्य थे, का भी शिष्यत्व ग्रहण किया। आपको इस प्रकार लखनऊ घराने की वादन शैली की शिक्षा भी प्राप्त हुई। उस्ताद महबूब खां मिरजकर, उस्ताद जहांगीर के शिष्य थे तथा शेख दाउद के मित्र थे परन्तु कुछ खास बन्दिशों के लिए उस्ताद शेख दाउद, उस्ताद महबूब खां मिरजकर के भी शिष्य हो गए थे जो कि शेख दाउद के तबला के प्रति विशेष प्रेम को दर्शाता है। उस्ताद जहांगीर खां ने हाजी विलायत अली के प्रसिद्ध शिष्य मुबारक अली तथा उस्ताद खां(बरेली) से तबला वादन की शिक्षा ली थी। हाजी विलायत अली फरूखाबाद घराने के संस्थापक थे अतः उ0 शेख दाउद को उस्ताद जहांगीर खां एवं उस्ताद महबूब खां मिरजकर के माध्यम से फरूखाबाद घराने का तबला प्राप्त हुआ। मृदंगाचार्य नाना पानसे के शिष्य बामनराव चांदवडकर ने हैदराबाद में पखावज वादन की परम्परा को आगे बढ़ाया अतः उस्ताद शेख दाउद के पास नाना पानसे की रचनाओं का भी भण्डार था। इस प्रकार उस्ताद शेख दाउद की वादन शैली में देहली, लखनऊ, फरूखाबाद घराने का समावेश था जो कि वह अपने एकल वादन में एक गुलदस्ते के रूप में प्रस्तुत करते थे। उस्ताद शेख दाउद ने स्वयं तबले के टुकड़े, मुखड़े, तथा गतों की रचना की जिसमें उनके उस्तादों की झलक भी मिलती है।

उस्ताद शेख दाउद के एकल वादन में उनकी विद्वता का परिचय मिलता है। उस्ताद शेख दाउद ने आल इण्डिया रेडियो हैदराबाद में सन् 1954 में पन्द्रह दिन तक रोज आधा घण्टे का प्रदर्शन व्याखान किया था जिसमें उन्होंने प्रत्येक दिन नई ताल प्रस्तुत की थी। इन तालों में सात मात्रा से लेकर 21 मात्रा तक की तालें थी। उस्ताद शेख दाउद बड़े सरल व्यक्तित्व के थे तथा छोटे से छोटे कलाकार के साथ संगति करने में भी परहेज नहीं करते थे। देश के सभी प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के साथ आपने तबला संगति की थी। इनमें कुछ कार्यक्रम जैसे सितार वादक उस्ताद विलायत खां के साथ बम्बई में पं0 रविशंकर द्वारा आयोजित कार्यक्रम में संगत, उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां के साथ बम्बई में संगत, उस्ताद अली अकबर खां के साथ रेडियो के राष्ट्रीय कार्यक्रम में संगत अविस्मरणीय है। हैदराबाद में उस्ताद नजाकत अली–सलामत अली के साथ अति द्रुत एकताल के तराने के साथ संगत कर अपने श्रोताओं को आश्चर्य चकित कर दिया था। उ0 शेख दाउद को संगीत नाटक एकेडमी अवार्ड भी प्राप्त हुआ था।

तबले के अतिरिक्त आपको रागों का भी ज्ञान था। उ0 अब्दुल करीम खां के सानिध्य में रहने के कारण आपको गायन की बहुत सी रचनाएं भी याद थी।

शिष्य परम्परा – उ0 शेख दाउद के शिष्यों की एक लम्बी सूचि है। इनके पहले शिष्य हैदराबाद के नवाब जहीर जार जंग थे। उसके बाद शंकर(संगीत निर्देशक) जिनकी युगल जोड़ी शंकर–जयकिशन फिल्मी संगीत निर्देशक के नाम से मशहूर हुई थी। हैदराबाद के अतिरिक्त शेख दाउद के पास देहली, देहरादून, भोपाल आदि से तबला सीखने के लिए शिष्य आए। जिनमें नन्दकुमार(देहली), किरण देशपाण्डे(भोपाल), विजयकृष्ण(देहरादून, वर्तमान में नैनीताल), प्रभाकर देशपाण्डे आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। वर्तमान में उस्ताद शेख दाउद के पुत्र शब्बीर दाउद(हैदराबाद) उनकी परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

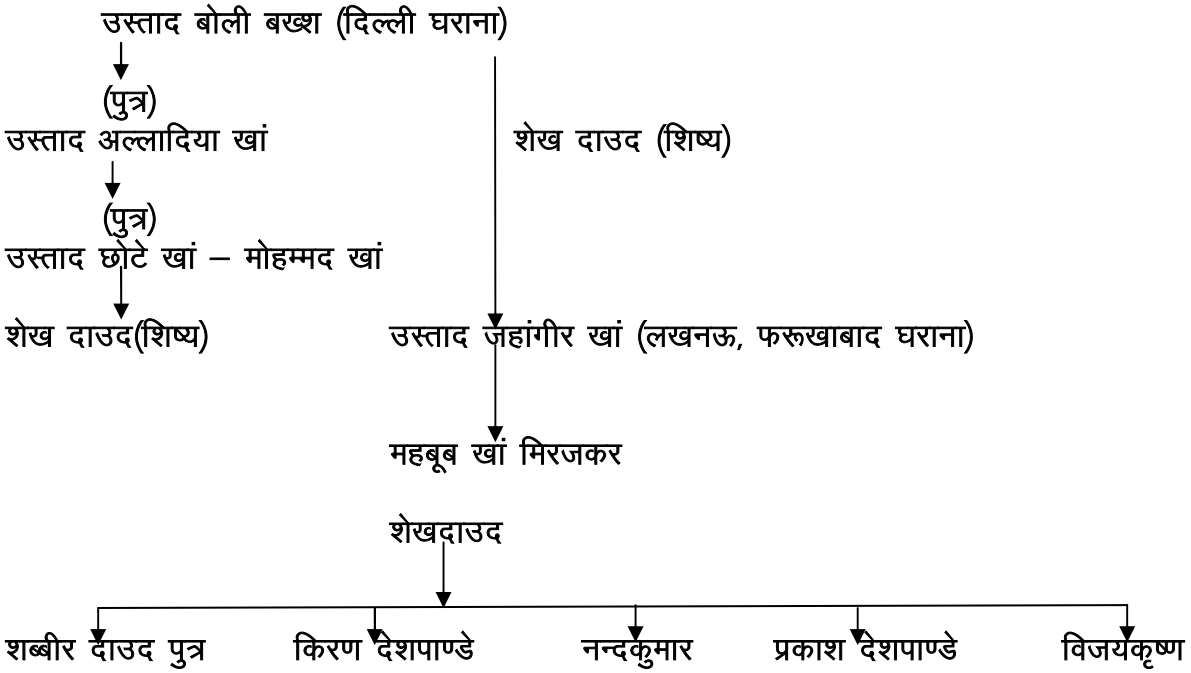

मृत्यु – शेख दाउद ने 21 मार्च 1992 को हैदराबाद में अन्तिम सांस ली।

2.5 उ0 आफाक हुसैन

जन्म – उस्ताद आफाक हुसैन खां का जन्म 12 जुलाई 1930 को हुआ।

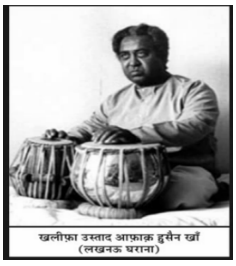
खलीफ़ा उस्ताद आफ़ाक़ हुसैन खाँ (लखनऊ घराना)

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – आप उस्ताद वाजिद हुसैन खां के पुत्र तथा उस्ताद आबिद हुसैन के पौत्र थे। आपकी तबले की शिक्षा अपने पिता उस्ताद वाजिद हुसैन खां तथा दादा उस्ताद आबिद हुसैन खां के द्वारा हुई जिससे आपने लखनऊ बाज की समस्त बारीकियों को समझा। आपने देश के सभी प्रतिष्ठित संगीतज्ञों के साथ तबले की सफल संगति की। उस्ताद आफाक हुसैन पन्द्रह वर्ष की आयु से सार्वजनिक रूप से तबला वादन करने लगे थे। आपको एकल वादन तथा तबला संगति दोनों में पूरा अधिकार प्राप्त था तथा विशेषकर नृत्य के साथ संगति करने का हुनर तो आपको विरासत में प्राप्त हुआ था। पं0 लच्छू महाराज तथा उनके शिष्यों के साथ अक्सर आप तबला संगति किया करते थे।

उस्ताद आफाक हुसैन ने देश के अतिरिक्त बाहरी देशों में भी आपकी तबला वादन कला का सफल प्रदर्शन किया। जिसमें 1962 में अफगानिस्तान तथा 1985 में भारत महोत्सव पेरिस के कार्यक्रम विशेष उल्लेखनीय हैं। युवावस्था में आप कलकत्ता में रहे तथा 1972 में आप लखनऊ आ गए। उस्ताद आफाक हुसैन खां ने एक वर्ष तक लखनऊ के आकाशवाणी में विभागीय कलाकार के रूप में कार्यक्रम किया। इसके पश्चात् 1973 से 1977 तक आप उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी लखनऊ के कत्थक केन्द्र में कार्यरत रहे। 1977 से जीवन के अन्तिम दिनों तक उस्ताद आफाक हुसैन खां ने लखनऊ दूरदर्शन केन्द्र में अपनी सेवाएं दी।

आप सरल स्वभाव के व्यक्ति थे एवं तबला वादन का प्रचार–प्रसार अपने शिष्यों को तबला की शिक्षा देकर किया। उस्ताद आफाक हुसैन को उनकी तबले की उत्कृष्ट सेवा के लिए सन 1988 में उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी द्वारा अवार्ड दिया गया।

शिष्य परम्परा – आपके शिष्यों की लम्बी सूची है। आपके शिष्यों में आपके पुत्र इल्मास खां के अतिरिक्त शकूर हुसैन, शरीफ अहमद, मृणाल कांतिपाल, तिमिर राय चौधरी(कोलकत्ता), पी.बी. नन्द्रश्री(श्रीलंका), अरूण ताल्लुकदार(आसाम) आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

आबिद हुसैन खां
↓
वाजिद हुसैन खां (भतीजा तथा दामाद)
↓
आफाक हुसैन खां (पुत्र)
↓
इल्मास हुसैन खां (पुत्र)

मृत्यु – 14 फरवरी 1990 को उस्ताद आफाक हुसैन खां का लखनऊ में निधन हुआ।

2.6 उ0 अमीर हुसैन खां

जन्म – उ0 अमीर हुसैन खां का जन्म हैदराबाद में सन 1895 में हुआ।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – उ0 अमीर हुसैन खां का सम्बन्ध फरूखाबाद घराने से था। आपके पिता अहमद बख्श प्रसिद्ध सारंगी वादक थे तथा हैदराबाद निजाम के दरबार में नियुक्त थे। उ0 अमीर हुसैन के पिता को तबले का भी ज्ञान था, अतः उस्ताद अमीर हुसैन की प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता अहमद बख्श के द्वारा ही हुई। उस्ताद अमीर हुसैन खां का सम्बन्ध फरूखाबाद घराने के संस्थापाक उ0 हाजी विलायत अली के पुत्र हुसैन अली खां से है। उ0 मुनीर खां, उ0 हुसैन अली खां के शिष्य थे एवं उस्ताद अमीर हुसैन खां, मुनीर खां के भान्जे तथा शिष्य थे। उ0 मुनीर खां के पश्चात् उस्ताद अमीर हुसैन खां को इस घराने का खलीफा कहा जाता था।

हाजी विलायत खां
↓
हुसैन अली खां (पुत्र)
↓
मुनीर खां (शिष्य)
↓
अमीर हुसैन खां (भान्जे, शिष्य)
↓
पापा खां (पुत्र)

उस्ताद अमीर हुसैन खां मुख्यत तबला एकल वादन प्रस्तुत किया करते थे तथा आपने अपनी वादन शैली को उस समय के तबला वादकों से बिल्कुल अलग बना लिया था, जो कि आपकी एच.एम. वी. के रिकार्ड पर सुनने से लगता है। आपके समकालीन उस्ताद अहमदजान थिरकवा, हबीबूद्दीन, समसुद्दीन आदि थे जो आपके गुरू भाई भी थे। आकाशवाणी बम्बई से भी आपने कार्यक्रम दिए तथा एच. एम. वी. द्वारा भी आपके रिकार्ड निकाले गए जो आज भी उपलब्ध हैं। आपका तबले पर तिरकिट तथा धिरधिर किटतक का बोल बहुत ही सुन्दरता से निकलता था। आपने कई लयकारी के कायदों की भी रचना की थी।

शिष्य परम्परा – उस्ताद अमीर हुसैन बाद में बम्बई में आकर रहने लगे तथा इनके भाई गुलाम हुसैन हैदराबाद में रह गए। उस्ताद अमीर हुसैन ने बम्बई में रहकर फरूखाबाद बाज को बहुत प्रचलित किया तथा अनेक शिष्यों को तबले की शिक्षा प्रदान की। इनकी शिष्य परम्परा में इनके पुत्र पापा खां के अतिरिक्त पं निखिल घोष, तुफैल, पन्डरीनाथ नागेश्कर, शेर खां(नागपुर), विनायक कुलकर्णी, बाबा साहेब मिरजकर, अरविन्द मुलगावंकर, श्रीचंद नागेश्कर, दामू अन्ना वाडेगोनकर, अन्ना साहेब टारे, सुधीर संसारे, इकबाल हुसैन, शरीफ खां, माणिक राव पोपटकर, अब्दुल सतार आदि विशेष उल्लेखनीय हैं।

मृत्यु – 5 अगस्त 1969 को मुम्बई में आपका निधन हो गया।

2.7 पं0 गुदई महाराज

जन्म – पंडित गुदई महाराज का जन्म बनारस के कबीर चौरा मोहल्ले में 20 जुलाई सन 1921 को हुआ था।

Pandit Samta Prasad

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – इनकी तबले की शिक्षा आरम्भ में अपने पिता बाचा मिश्र से तीन वर्ष तक हुई। पांच वर्ष की आयु से पं0 गुदई महाराज ने तबले की शिक्षा लेना आरम्भ कर दिया था। पिता की मृत्यु के उपरान्त आठ वर्ष की आयु में पं0 गुदई महाराज दरगाही के पुत्र एवं शिष्य विक्रमादित्य मिश्र उर्फ बिक्कू जी महाराज के पास चले गए तथा वहीं पर निरन्तर आठ वर्ष तक आपने बिक्कू जी महाराज से तबला वादन की शिक्षा प्राप्त की।

पं0 गुदई महाराज का नाम सामता प्रसाद था परन्तु वे संगीत के क्षेत्र में गुदई महाराज के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके बाएं तबले से गुदगुदाने की ध्वनि निकलती थी अतः इस कारण इनको गुदई महाराज कहा जाने लगा। पं0 गुदई महाराज का सम्बन्ध बनारस घराने के संस्थापक पं0 रामसहाय मिश्र के शिष्य प्रताप महाराज उर्फ परतप्पूजी से है। पं0 गुदई महाराज के पिता श्याम सुन्दर मिश्र उर्फ बाचा मिश्र परतप्पूजी के पौत्र तथा जगन्नाथ महाराज के पुत्र थे। अतः पं0 गुदई महाराज परतप्पूजी के प्रपौत्र हुए।

पं0 रामसहाय मिश्र(संस्थापक बनारस घराना)

↓

जगन्नाथ मिश्र(पुत्र)

↓

श्याम सुन्दर महाराज उर्फ बाचा मिश्र(पुत्र)

↓

सामता प्रसाद उर्फ गुदई महाराज(पुत्र)

↓

कुमारलाल(पुत्र), कैलाश

पं0 गुदई महाराज ने बनारस बाज की पारम्परिक शिक्षा प्राप्त की थी परन्तु इन्होंने अपनी वादन शैली को नया रंग दिया था जो कि बनारस के समकालीन तबला वादकों से अलग था। पं0 गुदई महाराज बाएं को घुमाकर रखते थे जिससे उन्होंने बाएं की ध्वनि के साथ नए–नए प्रयोग किए थे। बाएं में लम्बी मीड़ निकालना आपकी विशेषता थी जिसका प्रयोग आपने फिल्मी गीत 'नाचे मन मोरा मगन तीधा दिगी दिगी' में बड़ी सुन्दरता से किया था। यह फिल्मी–गीत फिल्म मेरी सूरत तेरी आखें का था। बनारस घराने के अतिरिक्त देहली घराने के कायदे बजाने में भी आपको कोई परहेज नहीं था तथा आपने देहली बाज के दो प्रसिद्ध कायदे धातीधागे नधातिरकिट धातीधागे तिनाकिन तथा धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिनाकिन, एक एच0एम0वी0 के ई0पी0 रिकार्ड में बड़ी सुन्दरता से बजाए हैं।

पं0 गुदई महाराज को तबला एकल वादन तथा तबला संगति दोनों में पूर्ण अधिकार प्राप्त था। पूर्व में सितार वादक पण्डित रविशंकर के साथ आपकी जोड़ी बहुत प्रसिद्ध हुई तथा आपने पं0 रविशंकर के साथ विदेश यात्रा की तथा विदेशों में तबला वादन के क्षेत्र में ख्याति अर्जित की। बाद में आपकी एवं उस्ताद विलायत खां की जोड़ी ने भारत में खूब धूम मचाई। बनारस में कत्थक नृत्य का भी प्रचार था अतः कत्थक नृत्य के साथ भी आप संगति करने में माहिर थे। आपने अपने समय के सभी नृत्यकार पं0बिरजू महाराज, गोपी किशन, सुश्री सितार देवी के साथ कार्यक्रम प्रस्तुत कर श्रोताओं को रोमांचित किया। उसी समय में बनी शास्त्रीय नृत्य पर आधारित फिल्म झनक झनक पायल बाजे में पं0 गुदई महाराज ने तबला वादन किया। इसके अतिरिक्त आपने बसन्त बहार तथा शोले फिल्म में भी तबला वादन किया। सन् 1979 में गुदई महाराज को संगीत नाटक अकादमी अवार्ड से सम्मानित किया गया।

गुदई महाराज तन्त्र वाद्य तथा नृत्य की संगत कर कार्यक्रम में आकर्षण पैदा कर दिया करते थे। पं0 गुदई महाराज को तबला वादन में उत्कृष्ट सेवा हेतु सन् 1979 में पदमश्री से तथा 1991 में पदमभूषण से सम्मानित किया गया।

शिष्य परम्परा – आपने अपनी वादन शैली को शिष्यों में प्रसारित किया। आपके प्रमुख शिष्यों में आपके दो पुत्रों कुमार लाल तथा कैलाश के अतिरिक्त आरडी वर्मन(फिल्म निर्देशक), जै मैसी, जयकृष्ण महन्त,

मणीलाल दास, सत्य नारायण वशिष्ठ, गजानन्द तोडे, श्याम लाल बनर्जी, माणिक राव पोपटकर, शंकर राव पोपटकर, कन्हैया लाल भट्ट, गणेश भारद्वाज(भोपाल), देवेन्द्र शर्मा, रमेश सांवत(पूना), चन्द्रकान्त(पूना), श्रीधर शर्मा(कानपुर) विशेष उल्लेखनीय हैं।

मृत्यु – मई माह सन 1994 में पं. गुदई महाराज को नाद रूप संस्था द्वारा पूना में तबला शिक्षण कार्यशाला के लिए आमंत्रित किया गया था। कार्यशाला बहुत सफल हुई भी परन्तु वहीं पर आपकी हृदय गति रूकने से निधन हो गया।

2.8 उ0 लतीफ अहमद खां

जन्म – उस्ताद लतीफ अहमद खां का जन्म देहली के संगीत परिवार में सन् 1942 में हुआ, अतः आपका सम्बन्ध देहली घराने से हो गया।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – प्रसिद्ध सारंगी वादक उस्ताद बुन्दू खां आपके नाना थे। लतीफ अहमद की तबला वादन की शिक्षा आरम्भ में उस्ताद गामी खां साहब से हुई जो कि मियां काले बख्श उर्फ छोटे काले खां के पुत्र थे। इसके पश्चात् लतीफ अहमद खां ने उस्ताद गामी खां के पुत्र उस्ताद इनाम अली से तबले की शिक्षा प्राप्त की।

उ0 लतीफ अहमद खां का तबला वादन बहुत मधुर था। इन्होंने 'तिट' एवं 'तिरकिट' बोल पर कठिन परिश्रम कर पूर्ण अधिकार प्राप्त किया था तथा इनके द्वारा बजाया गया देहली का प्रसिद्ध कायदा 'धातिटधा तिटधाधा तिटधागे तिनाकिन' में विशेष आकर्षण था। देहली कोमल एवं बन्द बाज माना जाता है जिसको नृत्य की संगति के लिए अधिक उपयुक्त नहीं समझा जाता है। परन्तु उस्ताद लतीफ अहमद खां देहली घराने के प्रथम ऐसे तबला वादक थे जो कत्थक नृत्य की कुशल संगति किया करते थे। इनके समय के नृत्यकार पं0 बिरजू महाराज, दुर्गालाल, पं0 देवीलाल, सुश्री उमा शर्मा, सितारा देवी आदि के साथ आपने देश विदेश में कार्यक्रम प्रस्तुत किए। उस्ताद लतीफ अहमद खां, तबला बायां को भी दाहिने तबले स्वर के साथ मन्द्र सप्तक के 'सा' स्वर से मिलाया करते थे जिससे दाएं तथा बाएं तबले के बोलों में मधुरता आया करती थी। उस्ताद लतीफ अहमद खां तबला वादन की चारों विधाओं–एकल वादन, गायन संगति, वाद्य संगति तथा नृत्य की संगति में निपुण थे। इन्होंने अपने समय के प्रसिद्ध संगीतज्ञों सितार वादक पं0 निखिल बनर्जी, सितार वादक उस्ताद इमरत खां, सरोद वादक उस्ताद अमजद अली खां, पं भीमसेन जोशी के साथ तबला संगति की। विदेशों में भी आपके एकल वादन तथा तबला संगति के कार्यक्रम हुए। विदेशों में समय–समय पर आप तबला वादन की शिक्षा भी दिया करते थे। उस्ताद लतीफ खां पारम्परिक तबला वादन के अतिरिक्त तबला वादन को वर्तमान परिपेक्ष में सोचते थे। इसी क्रम में इन्होंने सवा पांच मात्रा की लतीफ ताल की रचना भी की थी तथा सभी सम एवं विषम मात्रओं की तालों को भी सुगमता से प्रस्तुत करते थे।

उस्ताद लतीफ अहमद खां से उस समय के सभी युवा कलाकारों ने प्रेरणा प्राप्त की। इनमें मुख्य रूप से देहली के उस्ताद छम्मा खां के पुत्र उस्ताद शफात हुसैन थे जिन्होंने अपनी वादन शैली को उ0 लतीफ अहमद खां की वादन शैली को आदर्श मानकर विकसित की थी तथा उस्ताद शफात हुसैन भी उस्ताद लतीफ अहमद की तरफ चौमुखी तबला वादक प्रतिष्ठित हुए थे।

शिष्य परम्परा – इनके प्रमुख शिष्यों में ग्लैडविन चार्ल्स का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उस्ताद लतीफ अहमद खां के दो पुत्र अकबर खां तथा बाबर खां उनकी परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

मृत्यु – उस्ताद लतीफ अहमद खां को बहुत लम्बे समय तक संगीत की सेवा का अवसर नहीं मिल पाया तथा मात्र सैंतालिस वर्ष की उम्र में ही सन 1989 में आपका देहान्त हो गया। देहली घराने के ऐसे कलाकार के निधन से संगीत जगत को अपूर्णीय क्षति हुई।

2.9 पं0 बीरू मिश्र

जन्म – पं0 बीरू मिश्र का जन्म बनारस में सन् 1896 में हुआ था।

परिवार, संगीत शिक्षा एवं संगीत यात्रा – आपके पिता पं0 भगवानदास, पं0 विश्वनाथ के पुत्र थे। पं0विश्वनाथ, गौरी सहाय के शिष्य थे जो कि बनारस घराने के संस्थापक पं0 राम सहाय के पुत्र थे। अतः पंडित बीरू मिश्र का सम्बन्ध पण्डित गौरी सहाय की परम्परा से था। पं0 बीरू मिश्र की तबला वादन की शिक्षा अपने पिता भगवादास से आरम्भ हुई। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात आप लखनऊ के उस्ताद आबिद हुसैन के शिष्य हो गए जहां उन्हें लखनऊ बाज का ज्ञान प्राप्त हुआ। पं0 बीरू मिश्र की तबला सीखने की जिज्ञासा के कारण आप बाद में उस्ताद छन्नू खां(बरेली) के भी शिष्य हुए। उस्ताद छन्नु खां फरूखाबाद घराने के संस्थापक उस्ताद हाजी विलायत अली के शिष्य थे। इस प्रकार बीरू मिश्र को उस्ताद छन्नू खां से फरूखाबाद बाज का भी ज्ञान प्राप्त हुआ तथा आपको सम्पूर्ण पूरब पर अधिकार प्राप्त हो गया। लखनऊ, फरूखाबाद तथा बनारस घराने, पूरब घराने के अन्तर्गत ही आते हैं। पंडित बीरू मिश्र एक ऐसे कलाकार थे जिन्होंने लखनऊ, फरूखाबाद तथा बनारस घराने की विधिवत शिक्षा प्राप्त की थी। उस्ताद जहांगीर खां(इन्दौर), उस्ताद छन्नू खां के शिष्य थे एवं पण्डित बीरू मिश्र के गुरू भाई भी थे। पंडित बीरू मिश्र उस्ताद जहांगीर खां से भी समय–समय पर तबले की रचनाएं प्राप्त करते रहते थे।

पंडित बीरू मिश्र का हाथ बहुत तैयार तथा मीठा था। प्रत्येक संगीतज्ञ इनके साथ गाने–बजाने के सहज एवं गर्व महसूस किया करते थे। नेपाल के महाराज ने इनके तबला वादन से प्रभावित होकर इनको नेपाल दरबार में आंमत्रित किया था तथा बाद में सभासद नियुक्त कर दिया।

शिष्य परम्परा – इनके प्रमुख शिष्यों में इनके दामाद पन्ना, नन्दजी, मास्टर मोहन, नरोत्तम प्रसाद, वासुदेव प्रसाद, कालीपाद शर्मा, बंचन प्रसाद, रवि मोहत्त, जालया मिश्र आदि विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

मृत्यु – संगीत जगत को पण्डित बीरू मिश्र के तबला वादन का अधिक समय तक लाभ नहीं मिल सका। पं0 बीरू मिश्र की चालीस वर्ष की अल्प आयु में सन् 1936 में नेपाल में देहान्त हो गया।

अभ्यास प्रश्न–

1. उस्ताद आबिद हुसैन के पिता का नाम क्या था?
2. उस्ताद आबिद हुसैन का सम्बन्ध किस घराने से था?
3. उस्ताद आबिद हुसैन के भतीजा व दामाद का नाम क्या था?
4. उस्ताद शेख दाउद का जन्म कहाँ और कब हुआ?
5. उस्ताद शेख दाउद का सम्बन्ध किन–किन घरानों से था?
6. उस्ताद शेख दाउद का निधन किस सन में हुआ?
7. उस्ताद अमीर हुसैन के गुरू का नाम क्या था?
8. उस्ताद अमीर हुसैन का सम्बन्ध किस घराने से था?
9. उस्ताद अमीर हुसैन का जन्म कब और कहां हुआ?
10. उस्ताद आफाक हुसैन के पिता का नाम क्या था?
11. उस्ताद आफाक हुसैन किस घराने के थे?
12. पं0 गुदई महाराज का असली नाम क्या था?
13. पं0 गुदई महाराज के पिता का नाम क्या था?
14. पं0 गुदई महाराज का जन्म कब और कहां हुआ था?
15. पं0 गुदई महाराज के पिता के अतिरिक्त अन्य गुरू कौन थे?
16. किन्हीं दो फिल्मों के नाम बताइए जिनमें गुदई महाराज ने तबला वादन किया था।
17. पं0 गुदई महाराज को भारत सरकार ने किन सम्मान से सम्मानित किया था?
18. उस्ताद लतीफ अहमद खां किस घराने के थे?
19. उस्ताद लतीफ अहमद खां के गुरू कौन थे?
20. उस्ताद लतीफ अहमद खां का जन्म तथा मृत्यु कब हुई?

21. प0ं बीरू मिश्र के पिता का नाम क्या था?
22. पं0 बीरू मिश्र के पिता के अतिरिक्त और कौन गुरू था?
23. पं0 बीरू मिश्र का निधन कहां और कब हुआ?

2.10 सारांश

इस इकाई के माध्यम से आप तबला वादकों के जीवन के विभिन्न पहलुओं से अवगत हुए। इस इकाई में आपने लखनऊ, फरूखाबाद, देहली, बनारस आदि घरानों के तबला वादकों के जीवन वृत के बारे में जानकारी प्राप्त की। ये सभी कलाकार प्रेरणा के स्त्रोत हैं जिन्होंने कठिन परिश्रम से तबला वादन में ऊंचाइयों को प्राप्त किया था। इन सबके जीवन वृत से इनके धैर्य से तबला सीखने तथा अपने गुरू के प्रति निष्ठावान होने का भी परिचय मिलता है, जो कि वर्तमान तबला विद्यार्थियों के लिए एक संदेश है। इस इकाई के माध्यम से आपने तबला वादकों के जीवन परिचय से जाना कि इन्होंने किस प्रकार संघर्ष करके तबला वादन की शिक्षा ग्रहण की तथा कठिन परिश्रम तथा लगन के कारण ही उनको प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। उ0 शेख दाउद को छोड़कर सभी ने संगीत परिवार में जन्म लिया था परन्तु इसके बावजूद उस्ताद शेख दाउद ने अपनी प्रतिभा को संगीत जगत में प्रतिष्ठित कराया जो की उनकी कठिन परिश्रम एवं लगन का परिणाम था। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप उपरोक्त तबला वादकों के जीवन से प्रेरणा लेंगे तथा औरों को भी प्रेरित करेंगे।

2.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. मोहम्मद खां	2. लखनऊ	3. उस्ताद वाजिद हुसैन खां
4. शोलापुर (महाराष्ट्र) 1916	5. देहली, लखनऊ, फरूखाबाद	6. 1992
7. उस्ताद मुनीर खां	8. फरूखाबाद	9. 1895 हैदराबाद
10 उस्ताद वाजिद हुसैन खां	11. लखनऊ	12. सामता प्रसाद
13. श्याम सुन्दर उर्फ बाचा मिश्र	14. बनारस 20 जुलाई 1921	
15. पण्डित विक्रमादित्य मिश्र उर्फ बिक्कू जी महाराज		
16. मेरी सूरत तेरी आंखें, झनक झनक पायल बाजे		17. पद्मश्री, पद्म भूषण
18. देहली	19. उस्ताद गामी खां, उस्ताद इनाम अली	
20. जन्म 1942, मृत्यु 1989	21. पण्डित भगवान दास	
22. उस्ताद आबिद हुसैन, उस्ताद छन्नू खां(बरेली)		23. नेपाल, सन् 1936

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. हमारे संगीत रत्न, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. मिस्त्री, आबान ई0, पखावज और तबला के घराने एवं परम्पराएं, स्वर साधना समिति, एनेक्स जम्बुलबाडी, मुम्बई।

2.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. उ0 आबिद हुसैन, उ0 शेख दाउद, उ0 अमीर हुसैन, पं0 गुदई महाराज के योगदान पर विस्तृत चर्चा कीजिए।

इकाई 3 – संगीत संबंधी विषयों पर निबन्ध लेखन

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 निबन्ध की व्याख्या
3.4 निबन्ध के अवयव
3.4.1 भूमिका
3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय की भूमिका
3.4.2 विषय वस्तु
3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.2 संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा
3.4.2.3 विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत शिक्षा
3.4.3 उपसंहार – संगीत शिक्षा विषय पर
3.5 सारांश
3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के द्वितीय खण्ड की तीसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप मार्गी, देशी एवं दक्षिण भारतीय संगीत से परिचित हो चुके होंगे। आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में निबन्ध लेखन के विषय में आपको कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों से अवगत कराया जाएगा। निबन्ध लिखते समय किन–किन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप निबन्ध लेखन की विधि तथा निबन्ध लेखन के अवयवों से परिचित होंगे। आप किसी भी विषय पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- निबन्ध लेखन के अवयवों का सही प्रयोग कर सकेंगे।
- अपनी लेखन शैली का विकास कर सकेंगे।
- किसी भी विषय में आप व्यवस्थित रूप से निबन्ध प्रस्तुत कर सकेंगे।

3.3 निबन्ध की व्याख्या

निबन्ध के विषय में आपने पूर्व में काफी सुना है तथा प्राथमिक कक्षाओं से ही निबन्ध लेखन का अभ्यास कराया जाता है। प्रत्येक स्तर पर निबन्ध का स्तर भी पृथक होता है। निबन्ध किसी विषय विशेष की समग्र रूप में व्यवस्थित व्याख्या है। निबन्ध में विषय से सम्बन्धित समस्त पहलुओं पर विचार प्रस्तुत किए जाते हैं। अतः निबन्ध में विषय की व्याख्या का स्वरूप व्यापक हो जाता है। विषय से सम्बन्धित पूर्व की उपलब्ध जानकारी को निबन्ध में समाहित कर उसका विश्लेषण किया जाता है और लेखक समालोचना के लिए भी स्वतंत्र रहता है। निबन्ध के माध्यम से लेखक व्याप्त भ्रान्तियों को भी दूर करने की चेष्टा करता है। इसी सन्दर्भ में निबन्ध और लेख के अन्तर को भी समझने की आवश्यकता है।

लेख प्रायः समस्या को लेकर आरम्भ किया जाता है एवं समस्या का निराकरण ही किसी लेख का मूल उद्देश्य रहता है। विद्यालय स्तर पर आपको दृश्यों का आंखों देखा वर्णन निबन्ध के रूप में लेखन का अभ्यास करवाया गया है। परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर निबन्ध, विषय से ही सम्बन्धित रहता है और उस विषय के बारे में आपको समस्त जानकारी और यदि आवश्यक हो तो गुण–दोष के साथ प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। लेख सामान्य विषय पर वक्तव्य रूप में रहता है। निबन्ध लेखन अभ्यास से ही आप लेख लिखने एवं शोध पत्र लिखने में भी सक्षम होते हैं। अतः निबन्ध लेखन के अभ्यास से आपकी लेखन क्षमता बढ़ती है और आप अपने विचारों को कलम के माध्यम से प्रस्तुत करने की तकनीक भी विकसित कर पाते हैं। इस इकाई में स्नातकोत्तर स्तर के विषयों के निबन्ध की लेखन विधि पर चर्चा की जाएगी।

3.4 निबन्ध के अवयव

किसी भी विषय पर निबन्ध को प्रायः निम्न भागों में बांटकर विषय की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं।

1. भूमिका **2. विषयवस्तु** **3. उपसंहार**

3.4.1 भूमिका – इसके अन्तर्गत विषय के बारे में जानकारी देते हुए व्याख्या के अन्तर्गत आने वाले सन्दर्भों के बारे में बताते हैं। भूमिका के माध्यम से निबन्ध का स्वरूप पता चल जाता है। व्याख्या किन–किन बिन्दुओं पर केन्द्रित होनी है इसका संक्षिप्त परिचय भी भूमिका के माध्यम से दिया जाता है। भूमिका में विषय प्रवेश प्रस्तुत किया जाता है अर्थात विषय क्या है एवं विषय पर निबन्ध के माध्यम से हम विषय के सन्दर्भ में क्या–क्या चर्चा करेंगे।

उदाहरण के रूप में संगीत शिक्षा विषय के माध्यम से आपको निबन्ध की लेखन शैली से परिचित कराएंगे।

3.4.1.1 संगीत शिक्षा विषय पर भूमिका – प्राचीन काल से ही संगीत का सन्दर्भ हमें सामवेद से प्राप्त होता है तथा वैदिक समय में ऋचाओं के गान की शिक्षा गुरूमुख से देने की परम्परा थी और इस परम्परा का निर्वाह काफी समय तक रहा। संगीत का वास्तविक स्वरूप क्रियात्मक है। अतः इसकी शिक्षा भी क्रियात्मक रूप में देने से ही संगीत का स्वरूप स्पष्ट हो पाता है। यद्यपि संगीत से सम्बन्धित अवयवों की व्याख्या समय–समय पर विभिन्न संगीत मनीषियों के द्वारा दी जाती रही है परन्तु संगीत को क्रियात्मक स्वरूप में प्रस्तुत करने के लिए शिष्य को गुरूमुख से ही शिक्षा ग्रहण करना होती थी जिसके लिए गुरूकुल की व्यवस्था रहती थी। वर्तमान में संगीत शिक्षा का स्वरूप बदल चुका है जिसकी चर्चा आगे की जाएगी। संगीत को विषय के रूप में समझा जाने लगा है जिससे उसकी शिक्षा भी उसी के अनुरूप होने लगी है। जबकि संगीत को कला के रूप में ही समझने की आवश्यकता है। वर्तमान में संगीत हेतु शिक्षा के विभिन्न माध्यमों का अध्ययन कर उनके गुण दोष पर इस निबन्ध के माध्यम से विचार किया जाएगा।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध की भूमिका उदाहरण स्वरूप आपके लिए प्रस्तुत की गई है जिससे आप किसी भी विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका लिखने में सक्षम हो पाएंगे।

3.4.2 विषयवस्तु – भूमिका के पश्चात निबन्ध के विषय की विषय वस्तु प्रस्तुत की जाती है जिसमें विषय से सम्बन्धित सभी सन्दर्भों को प्रस्तुत किया जाता है। किसी विषय पर विषयवस्तु किस प्रकार लिखी जाती है इसका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत विषयवस्तु से जान सकेंगे।

संगीत शिक्षा विषय की विषयवस्तु – पहले संगीत की शिक्षा गुरूमुख से ही प्राप्त की जाती थी। परन्तु बाद में संगीत शिक्षा के नए स्वरूप भी स्थापित हुए। संगीत शिक्षा स्वरूप निम्न प्रकार हैः–

1. गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा।
2. संगीत संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षा।
3. विद्यालयों एव विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा।

3.4.2.1 गुरूमुख द्वारा संगीत शिक्षा – संगीत की शिक्षा शिष्य द्वारा गुरू के पास रहकर ही प्राप्त की जाती थी। इस शिक्षा पद्धति में शिष्य को अनुशासित होकर शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की लगन, धैर्य आदि को परखकर शिष्य को स्वीकार किया जाता था। गुरू द्वारा शिष्य को स्वीकार करने के पश्चात शिष्यत्व की औपचारिक घोषणा 'गंडा रस्म' अदायगी के साथ होती थी। इसमें गुरू और शिष्य एक दूसरे को 'धागा' बाँधकर प्रतिबद्धता का संकल्प लेते थे। इस प्रकार की शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता था और न ही संगीत शिक्षा की समयावधि निश्चित होती थी। गुरू द्वारा शिष्य की क्षमता के आधार पर ही शिक्षा दी जाती थी। एक ही गुरू के कई शिष्य होते थे। परन्तु यह आवश्यक नहीं था कि सबको एक ही शिक्षा दी जाए। दी हुई संगीत शिक्षा का अभ्यास भी गुरू के निर्देशन में ही होता था। संगीत शिक्षा के अतिरिक्त संगीत सुनने का मार्ग निर्देशन का उद्देश्य यह था कि शिष्य अपना विवेक एवं धैर्य न खो बैठे। इस प्रकार की शिक्षा में धैर्य का बहुत महत्व था और लगन से गुरू द्वारा दिए गए अभ्यास के नियमों से कठिन अभ्यास करने की आवश्यकता होती थी। गुरू जब तक शिष्य को कार्यक्रम प्रस्तुत करने के अनुकूल नहीं समझता था तब तक शिष्यों को कार्यक्रम प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं होती थी। बल्कि शिष्य को कार्यक्रम के योग्य समझने के पश्चात शिष्य को संगीतकारों के मध्य प्रस्तुत किया जाता था जिससे वह सभी संगीतज्ञों का आशीर्वाद प्राप्त करें। इस प्रकार की संगीत शिक्षा में शिष्य, गुरू के सानिध्य में संगीत के गूढ़ रहस्यों को जानता था। संगीत में घराने स्थापित हुए एवं घरानों की शिक्षा इस संगीत शिक्षा पद्धति में ही सम्भव थी। शिष्य अपने गुरू के घराने से सम्बन्धित हो जाता था और उस घराने का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में अपना गौरव समझता था।

3.4.2.2 संगीत संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षा – आधुनिक समय में संगीत संस्थानों का महत्व बढ़ गया है। पंडित विष्णुनारायण भातखण्डे एवं विष्णुदिग्बर पलुस्कर ने संगीत शिक्षा का प्रचार इस प्रकार किया जिससे संगीत क्रियात्मक रूप में विकसित होने लगा। गुरूमुख शिक्षा पद्धति में बहुत कम लोग ही शिक्षा प्राप्त कर पाते थे। अतः दो संगीत मनीषियों ने संगीत के अधिक प्रचार एवं प्रसार हेतु संगीत संस्थानों की कल्पना कर पंडित विष्णु नारायण भातखण्डे द्वारा लखनऊ में 'मैरिस कालेज आफ म्यूजिक' एवं विष्णुदिगम्बर पलुस्कर द्वारा पूना में 'गन्धर्व मंडल' की स्थापना की गई जिसके अन्तर्गत देश के कई शहरों में 'गन्धर्व संगीत महाविद्यालय' के नाम से संगीत शिक्षण संस्थान खोले गए। यह संगीत शिक्षण की औपचारिक व्यवस्था का आरम्भ था। इन संस्थानों में प्रत्येक वर्ष के लिए पाठ्यक्रम निश्चित किए गए तथा वर्ष के अन्त में परीक्षा की भी व्यवस्था की गई। इन संस्थानों में संगीत के गुणीजन, गुरू अथवा उस्तादों को संगीत शिक्षा हेतु आमंत्रित किया गया और इनके लिए किसी प्रकार के औपचारिक प्रमाण–पत्रों की बाध्यता नहीं रखी गई ।

संगीत के विद्यार्थियों को परीक्षा में सफल होने पर औपचारिक प्रमाण–पत्र देने की व्यवस्था भी की गई। संगीत की हर विधा और हर अंग के लिए विशेषज्ञ रखे गए। प्रतिदिन संगीत शिक्षा का समय भी निर्धारित किया गया तथा अन्य संस्थानों की भाँति इन संस्थानों में भी उत्सव एवं त्यौहारों पर अवकाश का प्राविधान था। जबकि गुरूमुख शिक्षा पद्धति में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं रहती थी और शिष्य को गुरू के पास रहकर ही सीखना होता था और गुरू द्वारा शिष्य को किसी समय भी शिक्षा के लिए बुला लिया जाता था जिसमें शिष्य को उपस्थित होना आवश्यक होता था। संगीत संस्थानों की शिक्षा में शिष्य गुरू के सानिध्य में निश्चित समय के लिए ही रहता है और प्राप्त की गई शिक्षा का अभ्यास स्वयं घर पर ही करता है। संगीत संस्थानों की शिक्षा पद्धति में गुरू का शिष्य के ऊपर नियंत्रण गुरूमुखी शिक्षा पद्धति की अपेक्षा कम रह पाता है। प्रारम्भ में इन संस्थानों में संगीत की शिक्षा हेतु पाँच से छः वर्षों का पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। संस्थानों में पाँच, छः वर्ष की शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त भी यह माना गया कि इसके पश्चात भी शिष्य को गुरू के सानिध्य की निरन्तर आवश्यकता रहती है। इन दो संस्थानों की स्थापना के पश्चात प्रयाग(इलाहाबाद) में 'प्रयाग संगीत समिति' एवं पंजाब के चंडीगढ़ क्षेत्र में प्राचीन कला संगीत संस्थान की स्थापना हुई। इन सभी संस्थानों ने देश के भिन्न–भिन्न शहरों में अपने केन्द्र स्थापित किए। यद्यपि इन केन्द्रों पर शिक्षा का प्रचार हुआ एवं विद्यार्थियों को प्रमाण–पत्र मिलने लगे।

गुरूमुखी शिक्षा में गुरू एवं शिष्य दोनों का ही लक्ष्य कलाकार बनना तथा बनाना होता था जिसके लिए शिष्य द्वारा अनुशासित अभ्यास किया जाता था और संगीत ही एकमात्र लक्ष्य रहता था। संगीत संस्थानो में ऐसे भी विद्यार्थी शिक्षा लेते थे जिनका लक्ष्य केवल संगीत ही नहीं होता था बल्कि संगीत की शिक्षा शौकिया रूप में लेते थे। अतः संगीत संस्थानों में संगीत के विद्यार्थियों को समूह में एकरूपता नहीं रहती थी। गुरू द्वारा भी एक ही कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को लगभग एक जैसी ही शिक्षा दी जाती थी जो कि संस्थानों के शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता एवं सीमा भी थी। अतः संगीत संस्थानों से शिष्य उस प्रकार की शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते थे जिस प्रकार की शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में प्राप्त होती थी। संगीत संस्थानों का उद्देश्य संगीत शिक्षा के माध्यम से संगीत का प्रचार एवं प्रसार था और यह सामान्य रूप से संस्थानों के उदेद्श्य के बारे में कहा जाता था कि संस्थान तानसेन नहीं तो कानसेन तो बना ही देते हैं। अर्थात संगीत कलाकार न भी बन पाएं तो एक संगीत का अच्छा श्रोता तो बन ही जाता है। इन संगीत संस्थानों ने विभिन्न शहरों में अपने परीक्षा केन्द्र खोले जहाँ पर संगीत शिक्षा देने का भी प्रावधान किया गया तथा विद्यार्थी इन केन्द्रों से संगीत सीखकर प्रमाण–पत्र प्राप्त करने लगे। इन प्रमाण–पत्रों को सरकार के शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता प्रदान की गई।

विद्यालयों में बिना इन संस्थानों के प्रमाण–पत्र के नियुक्तियाँ नहीं होती हैं। विद्यालय स्तर पर शिक्षक के लिए अन्य विषयों में बी. एड. अनिवार्य अर्हता है परन्तु संगीत विषय में शिक्षक होने के लिए बी.एड. के स्थान पर 'संगीत विशारद' एवं 'संगीत प्रभाकर' होना आवश्यक है जो कि इन संस्थानों द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र है। इस व्यवस्था से इन केन्द्रों पर संगीत के प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों की भीड़ बढ़ गई। इन संगीत संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात कलाकार बनने के इच्छुक विद्यार्थियों को गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत ही शिक्षा लेना अनिवार्य रहता है इन संस्थानों द्वारा सामान्य संगीत के जिज्ञासु एवं विद्यार्थियों ने संगीत के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

3.4.2.3 विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों द्वारा संगीत शिक्षा – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय अन्य विषयों की भाँति संगीत विषय पाठ्यक्रम में शामिल किया गया। विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में संगीत विषय का पाठ्यक्रम तैयार कर समय–सारिणी में वादन (पीरियड) शिक्षण के लिए निश्चित किया गया। इनमें शिक्षण पाठ्यक्रम के अनुसार ही दिया जाता है और अध्यापक द्वारा सब विद्यार्थियों को समान रूप से ही अध्यापन कराया जाता है। स्नातक स्तर तक एक वादन प्रायः 45 मिनट का होता है जो कि संगीत की व्यवहारिकता के अनुकूल नहीं है क्योंकि 45 मिनट के अन्दर ही वाद्यों को स्वर में करना सम्भव नहीं हो पाता है। अतः देखा जा रहा है कि

विश्वविद्यालय स्तर पर भी संगीत की मूल आवश्यकता वाद्यों को स्वर में करना विद्यार्थी पूर्ण से नहीं सीख पाते हैं। स्नातक स्तर तक विद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों को संगीत विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का भी अध्ययन करना होता है। अतः विद्यार्थी संगीत के प्रति पूर्ण समर्पित नहीं हो पाता है। संगीत की आवश्यकता होती है, जिसमें अधिक से अधिक समय देने से ही संगीत कला को समझा जा सकता है।

विद्यालय, विश्वविद्यालय में संगीत विषय प्रारम्भ होने से संगीतज्ञों को व्यवसाय तो प्राप्त हुआ परन्तु इससे संगीत शिक्षा की गुणात्मकता पर प्रभाव पड़ा। यद्यपि विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में संगीत के विद्वान भी नियुक्त हुए परन्तु इन संस्थानों की व्यवस्था में उतने समय के लिए संगीत शिक्षक भी सीमा में बँध गए। संगीत संस्थानों में गुरू परम्परा पद्धति में शिष्य पूर्ण रूप से संगीत के वातावरण में रहता था और संगीत संस्थानों में भी जितने समय के लिए वह संस्थान में है उतने समय तक वह संगीत के वातावरण में रहता था। परन्तु विद्यालय और विश्वविद्यालय में विद्यार्थी केवल संगीत के वादन (पीरियड) में ही संगीत के वातावरण से जुड़ा रहता है। विद्यालयों, विश्वविद्यालयों से उपाधि सामान्य रूप में मिलती है जिसमें संगीत एक विषय के रूप में रहता है जबकि संगीत संस्थानों में मिलने वाली उपाधि एवं प्रमाण पत्र केवल संगीत का ही मिलता है और गुरू–शिष्य परम्परा में तो कोई औपचारिक प्रमाण–पत्र नहीं होता है। इसमें शिष्य स्वयं अपनी शिक्षा का प्रमाण प्रस्तुत करता है। विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों में संगीत विषय शिक्षा, स्नातकोत्तर उपाधि के लिए दी जाने लगी है, जिसमें केवल संगीत विषय का ही अध्ययन विद्यार्थी को करना होता है।

विश्वविद्यालय स्तर पर केवल स्नातकोत्तर कक्षाओं में ही विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है जो मात्र दो वर्ष के पाठ्यक्रम में निबद्ध होता है। संगीत की शिक्षा गुणात्मकता के साथ स्नातकोत्तर स्तर पर ही हो पाती है जिसका स्वरूप संगीत संस्थानों की शिक्षा जैसा रहता है। स्नातकोत्तर कक्षाओं में विद्यार्थियों को संगीत के अध्ययन और अभ्यास का समय प्राप्त होता है। विश्वविद्यालय स्तर पर स्नातक की कक्षाओं में संगीत विषय का विद्यार्थी सीमित समय जो कि उसके लिए समय सारिणी में निश्चित किया गया उसमें ही संगीत शिक्षक के सम्पर्क में रहता है। इसी उपलब्ध समय में शिक्षक का उद्देश्य निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करने का भी होता है। अतः गुरू शिष्य परम्परा पद्धति एवं संगीत संस्थान द्वारा शिक्षा पद्धति की तुलना में विश्वविद्यालय द्वारा दी जाने वाली संगीत शिक्षा की गुणवत्ता में कमी रहती है। स्नातकोत्तर में भी यही स्थिति रहती है परन्तु इसमें विद्यार्थी तथा शिक्षक के पास संगीत विषय के लिए अधिक समय रहता है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थी विश्वविद्यालय शिक्षा के अतिरिक्त संगीत संस्थानों एवं गुरू की सहायता भी प्राप्त करते हैं। संगीत में शिक्षक बनने हेतु विश्वविद्यालय प्रमाण–पत्र की आवश्यकता होती है अतः विद्यार्थी संगीत हेतु विश्वविद्यालय में प्रवेश लेता है। केवल विश्वविद्यालय की संगीत शिक्षा से विद्यार्थी का कलाकार बनना कठिन है और न ही विश्वविद्यालय का यह उद्देश्य ही है। विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को संगीत पढ़ाने का उद्देश्य है कि विषय से सम्बन्धित आयामों से विद्यार्थी को परिचित कराया जा सके जिससे वह भविष्य के लिए अपने विकल्प चुन सके।

विश्वविद्यालय की उपाधि प्रमाण–पत्र का महत्व संगीत की शिक्षक अर्हता के रूप में ही है। व्यवसायिक कलाकार बनने में इसका कोई महत्व नहीं है। विद्यालय एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं एवं विश्वविद्यालय स्तर पर संगीत शिक्षक हेतु अर्हताएं व्यवहारिक नहीं हैं जिससे इनमें सदैव योग्य संगीत शिक्षक नियुक्त नहीं हो पाते हैं। संगीत विषय मुख्य रूप से क्रियात्मक विषय है परन्तु नैट की परीक्षा जो कि विश्वविद्यालय में संगीत शिक्षक के लिए पास करना अनिवार्य अर्हता है। परन्तु इस परीक्षा में संगीत विषय हेतु विद्यार्थी के क्रियात्मक ज्ञान को नहीं परखा जाता है जबकि संगीत विषय के शिक्षक के लिए क्रियात्मक ज्ञान होना आवश्यक है।

अभी तक आपने संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध हेतु भूमिका एवं विषय वस्तु का अध्ययन किया जो कि निबन्ध लेखन के लिए उदाहरण स्वरूप आपको बताया गया। किसी विषय के निबन्ध पर उपसंहार लिखने के विषय में संगीत शिक्षा विषय निबन्ध पर नीचे लिखे गए उपसंहार से समझेंगे।

3.4.3 उपसंहार संगीत शिक्षा विषय पर – संगीत शिक्षा गुरू शिष्य परम्परा, संगीत संस्थानो के माध्यम से विद्यालय एवं विश्वविद्यालय में एक विषय के रूप में दी जाती है। गुरू शिष्य परम्परा में गुरू और शिष्य के मध्य अटूट सम्बन्ध बन जाता है और शिष्य गुरू के सानिध्य में रहकर संगीत के गूढ़ रहस्यों को सीखता है। इसमें गुरू एवं शिष्य दोनों का उद्देश्य कलाकार बनाना तथा बनना होता है। संगीत संस्थानों में भी केवल संगीत शिक्षा दी जाती है जिसमें विद्यार्थी सीमित समय के लिए ही गुरू के सम्पर्क में रहता है और विश्वविद्यालय शिक्षा में स्नातक स्तर पर तो बहुत ही कम समय के लिए विद्यार्थी संगीत के वातावरण में रहता है। परन्तु संगीत शिक्षक बनने हेतु संस्थानों एवं विश्वविद्यालय में प्रमाण–पत्रों की आवश्यकता होती है।

संगीत के जिज्ञासु विद्यार्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वह संस्थानों की शिक्षा अथवा विश्वविद्यालय की शिक्षा के साथ गुरू शिष्य परम्परा पद्धति में भी किसी गुरू से शिक्षा प्राप्त करे जिससे उसके पास संगीत शिक्षक का व्यवसाय अथवा व्यवसायिक कलाकार बनने का विकल्प रहेगा। उपरोक्त कथन से यह निष्कर्ष न निकाला जाए कि विश्वविद्यालय संगीत शिक्षा से ही अच्छा संगीत शिक्षा बन सकता है जबकि संगीत की सही शिक्षा प्राप्त ही अच्छा शिक्षक बनेगा। वर्तमान व्यवस्था में संगीत शिक्षक हेतु सभी माध्यमों का अपना महत्व है अतः विद्यार्थी को अपने निश्चित उद्देश्य के लिए इनका चयन करने की आवश्यकता है।

संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध के माध्यम से आपने निबन्ध लेखन के विषय में अध्ययन किया। कुछ अन्य संगीत सम्बन्धित विषयों की सूची दी जा रही है।

अभ्यास हेतु निबन्ध के विषय

1. फिल्मो में संगीत	**2. संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान**
3. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत	**4. भक्ति एवं संगीत**
5. संगीत एवं अध्यात्म	**6. संगीत एवं संचार माध्यम (रेडियो व टी0वी0)**
7. संगीत में अवनद्य वाद्यों की भूमिका	**8. संगीत गोष्ठी**

जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि प्रत्येक विषय के निबन्ध का आरम्भ भूमिका से किया जाता है और निबन्ध का समापन उपसंहार से किया जाता है। उपरोक्त विषयों की विषयवस्तु नीचे दी जा रही है जिसके आधार पर आप इन विषयों पर निबन्ध लिख सकेंगे।

1. **फिल्मों में संगीत**
   - विषयवस्तु
   - फिल्म में संगीत का प्रयोग
   - पार्श्व गायन
   - फिल्म में वाद्यों का प्रयोग
   - गायन के साथ वाद्यों का प्रयोग
   - पार्श्व संगीत में वाद्यों का प्रयोग
   - फिल्मों में संगीत का स्थान एवं उपयोगिता

2. **संगीत में इलक्ट्रोनिक उपकरणों का योगदान**
   - विषयवस्तु
   - संगीत में प्रयोग होने वाले इलक्ट्रोनिक उपकरण

     (अ) – इलक्ट्रोनिक तानपुरा

     (ब) – इलक्ट्रोनिक तबला

     (स) – इलक्ट्रोनिक लहरा मशीन
   - संगीत के संरक्षण एवं शिक्षा में सहायक इलक्ट्रोनिक उपकरण

     1. ग्रामोफोन 2. टेपरिकार्डर

3. **लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत**
   - विषयवस्तु
   - लोक संगीत की पृष्ठभूमि
   - शास्त्रीय संगीत का परिचय
   - लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत का सम्बन्ध

4. **भक्ति एवं संगीत**
   - विषयवस्तु
   - भक्ति की व्याख्या
   - विभिन्न धर्मों में भक्ति हेतु संगीत का प्रयोग
     1. हिन्दू 2. मुस्लिम 3. सिख 4. इसाई

5. **संगीत एवं आध्यात्म**
   - विषयवस्तु
   - संगीत की उत्पत्ति
   - वैदिक कालीन संगीत
   - आध्यात्म में संगीत का महत्व

6. **संगीत एवं संचार माध्यम**
   - विषयवस्तु
   - रेडियो में संगीत
   - टेलीविजन में संगीत
   - रेडियो तथा टेलीविजन का संगीत के प्रचार–प्रसार में भूमिका

7. **संगीत में अवनद्य वाद्य की भूमिका**
   - विषयवस्तु
   - संगीत का परिचय
   - संगीत के तत्व
   - संगीत के अवनद्य वाद्य
   - संगीत में अवनद्य वाद्यों का प्रयोग

8. **संगीत गोष्ठी**
   - विषयवस्तु
   - संगीत गोष्ठी का परिचय
   - संगीत गोष्ठी में कलाकार की भूमिका
   - विभिन्न प्रकार की संगीत गोष्ठी
   - संगीत गोष्ठी के श्रोता

उपरोक्त कुछ विषय आपके निबन्ध लेखन के अभ्यास के लिए दिए गए हैं। इन सभी विषयों पर आप निबन्ध लिखने का अभ्यास ऊपर अध्ययन कराई विधि के अनुसार करेंगे। सभी विषयों पर निबन्ध के अवयव का क्रम भूमिका, विषयवस्तु एवं उपसंहार रहेगा। उपसंहार एवं भूमिका के प्रभावशाली होने से आपका निबन्ध उच्चस्तर का होता है यद्यपि विषय वस्तु भी महत्वपूर्ण है। उपसंहार में विषय

वस्तु में की गई चर्चाओं अथवा विवरणों से प्रकट तथ्यों को परिणाम स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। आप को इन सबका ज्ञान संगीत शिक्षा विषय पर उदाहरण स्वरूप निबन्ध के माध्यम से दिया गया है। अतः उसी आधार पर आप उपरोक्त विषयों पर निबन्ध लेखन का अभ्यास करें।

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप निबन्ध लेखन की शैली से परिचित हो चुके होंगे। संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन की शैली एवं विद्या से आपको इस इकाई के माध्यम से परिचित कराया गया। निबन्ध लेखन से आप अपने विचारों को लेखन के माध्यम से प्रकट करने की तकनीक विकसित करते हैं जो बाद में आपको शोधपत्र, लेख एवं शोध कार्य में सहायक सिद्ध होगी। उदाहरण स्वरूप दिए गए संगीत शिक्षा विषय पर निबन्ध से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लेखन के विषय जान गए हैं एवं संगीत विषय पर लिखने में सक्षम होंगे। संगीत के गहन अध्ययन एवं संगीत के सन्दर्भों के अध्ययन से आप संगीत विषयों पर निबन्ध लिखने में सक्षम हो गए होंगे।

3.6 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. गर्ग, श्री लक्ष्मीनारायण, *निबन्ध संगीत*, संगीत कार्यालय, हाथरस।

3.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. इकाई में दिए गए अभ्यास हेतु निबन्ध विषयों में से किसी एक विषय पर निबन्ध लिखिए।

इकाई 1 – ताल रचना के सिद्धान्त एवं समान मात्राओं की विभिन्न तालों का औचित्य

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 ताल
1.4 मार्गी ताल की रचना
1.5 देशी ताल की रचना
1.6 वर्तमान ताल की रचना
1.7 समान मात्राओं की विभिन्न तालों का औचित्य
1.7.1 लय भेद के कारण समान मात्राओं की विभिन्न तालें
1.7.2 संगीत की विभिन्न शैलियों के कारण समान मात्राओं की विभिन्न तालें
1.8 सारांश
1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्ताना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी–301) के तृतीय खण्ड की प्रथम इकाई है। इस इकाई से पूर्व आपने प्राचीन एवं मध्य काल में प्रयुक्त होने वाले भारतीय अवनद्य वाद्य तथा तबले की उत्पत्ति व विकास के विषय में जाना। आप मार्गी संगीत, देशी संगीत एवं दक्षिण भारतीय संगीत के विषय में भी जान चुके हैं।

इस इकाई में आप तालों की रचना का आधार, ताल रचना के सिद्धान्त के विषय में जानेंगे। संगीत के जन्म से ही ताल की रचना आरम्भ हो गई थी। प्रारम्भ में प्राचीन मार्गी ताल, उसके बाद देशी ताल तथा देशी तालों से प्रेरित होकर वर्तमान की तालों की रचना की गई। इन सभी तालों की रचना के विषय में इस इकाई में चर्चा की गई है। वर्तमान में समान मात्राओं की विभिन्न तालें प्रयोग में हैं अतः इन तालों के औचित्य के बारे में भी इस इकाई में चर्चा की गई।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप ताल एवं उसकी रचना को भली–भांति समझ पाएंगे। समान मात्राओं की विभिन्न तालों के औचित्य को भी आप समझ सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

1. ताल को समझ सकेंगे।
2. ताल की रचना कैसे और किन परिस्थितियों में हुई, यह जान सकेंगे।
3. समान मात्रओं की विभिन्न तालों के औचित्य को भी समझ सकेंगे।

1.3 ताल

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड लय में बंधा है। समय अथवा काल अखण्ड है जिसको घण्टों, मिनट, सैकेन्ड, प्रहर, दिनों, महीनों एवं वर्षों में विभाजित किया है। पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा चौबीस घण्टों में करती है। साठ सेकेण्ड के एक चक्कर के बाद एक मिनट, साठ मिनट के एक चक्कर के बाद एक घण्टा, चौबीस घण्टे के एक चक्कर के बाद एक दिन, तीस दिन अथवा 31 दिन के बाद एक महीना तथा बारह महीने का एक चक्कर एक वर्ष कहलाता है। समय का यह निश्चित क्रम ही संगीत में ताल कहलाता है जो कि संगीत को स्थायित्व प्रदान करता है। ताल की उत्पत्ति, संगीत में ताल की आवश्यकता के आधार पर हुई।

ताल शब्द तल से बना है तथा तल का अर्थ बुनियाद है। ताल की बुनियाद पर ही संगीत की प्रतिष्ठा होती है जो कि संगीत रत्नाकर के तालाध्याय में दिए गए निम्न श्लोक के द्वारा दिया गया है:–

तालस्तल प्रतिष्ठायामिति घातीधन्नि स्मृतः
गीतं वाद्यं तथा नृत्यं यतस्ताले प्रतिष्ठातिम्।

प्रतिष्ठा का अर्थ एक सूत्र में बांधना, व्यवस्थित करना, आधार प्रदान करना तथा स्थिरता प्रदान करना है। संगीत में विभिन्न तत्वों को एक व्यवस्था प्रदान करके स्थिर एवं आधार देने वाला तत्व ताल है। लय पूरे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। एक क्रिया एवं दूसरी क्रिया के बीच का काल जो पहली क्रिया का विस्तार है वह लय है। विस्तार कम या अधिक होने पर क्रमशः लय अधिक एवं कम हो जाती है। क्रिया के साथ होने वाली विश्रान्ति लय है। विश्रान्ति के बिना क्रिया का अस्तित्व नहीं है।

लय का ज्ञान प्रकृति से प्राप्त हुआ तथा सभ्यता के विकास के साथ जब अंकों का ज्ञान हुआ तो ताल की कल्पना हुई। भारतीय ताल रचना में दो का अंक विशेष महत्व का है। 2 में मूल अंक 1 जोड़ने से तीन अंक प्राप्त होता है जिसको ताल के सन्दर्भ त्रयश्र से प्रकट करते हैं। 2 अंक में 2 जोड़ने से चतुरत्र हो जाता है। अंक 1 एवं 2 लघु एवं गुरू के घोतक है तथा 3 का अंक प्लुत का। लघु, गुरू तथा प्लुत के विभिन्न संयोगों से विभिन्न तालों की कल्पना की गई। लघु हेतु । , गुरू हेतु ऽ तथा प्लुत हेतु ऽ' चिन्ह निश्चित हुए।

ताल का आधार आवर्तन है जिसमें वर्त अथवा गोल आकार निहित है। ताल के एक आवर्तन में वर्त का स्वरूप हैं। एक आवर्तन में क्रियाओं से ताल रचना होती है। मूल अंक एक के अतिरिक्त अंक दो एवं तीन से सभी अंक प्राप्त हो जाते हैं। अंक दो को दुगुना करने पर चार अंक प्राप्त होते हैं तथा 3 को दुगुना करने पर छः का अंक प्राप्त होता हे। ताल रचना का आधार दो एवं तीन अंक ही है।

1.4 मार्गी तालों की रचना

प्राचीन मार्गी ताल की रचना काल में प्रारम्भ में मार्गी तालों का निर्माण हुआ जिसका आधार चतुरश्र तथा त्रयश्र था। इनकी प्रतिनिधि तालें चच्चत्पुट तथा चाचपुट थी। इन दोनों में क्रम से चार एवं तीन गुरू थे। चच्चपुट तथा चाचपुट से तीन अन्य मार्गी तालों षटपितापुत्रक, समप्क्वेष्टाक तथा उदघट्ट बनी। देवों एवं ऋषियों ने महादेव के सम्मुख जिस संगीत का प्रदर्शन किया था उसे मार्गी संगीत कहा गया तथा इस हेतु जिन तालों का निर्माण हुआ वे मार्गी तालें कहलाई। मार्गी संगीत हेतु पांच मार्गी तालें बनी। ये पांच मार्गी तालें लघु, गुरू एवं प्लुत के विभिन्न संयोगों से प्राप्त हुई। अतः तालों का निर्माण संगीत की आवश्यकता के आधार पर हुआ। इन पांच मार्गी तालों के बाद में देशी संगीत के आवश्यकतानुसार तालों का निर्माण होता गया। पांच मार्गी तालें निम्न है :–

चच्चत्पुट	–	ऽ ऽ । ऽ'
चाचपुट	–	ऽ । । ऽ
षटापितापुत्रक	–	ऽ' । ऽ ऽ । ऽ'
सम्पक्वेष्टाक	–	ऽ' ऽ ऽ ऽ ऽ'
उदघट्ट	–	ऽ ऽ ऽ

मार्गी तालों में मौलिक इकाई गुरू मानी गई है। चचत्पुट के तीन रूपों में क्रमशः चार, आठ तथा सोलह गुरू हुए अर्थात आठ, सोलह तथा बत्तीस मात्रा होती हैं। पाद माग जिसको वर्तमान में विभाग कहा

जाता है, के परिवर्तन से ताल निर्माण किया जाता था। चच्चत्पुट तथा चाचपुट दोनों में अक्षर क्रिया तथा पादभाग समान हैं परन्तु क्रियाओं के काल में अन्तर होने से दो भिन्न तालें हैं।

षटपितापुत्रक ताल की रचना समझने के लिए इसके नाम को समझने की आवश्यकता है जिसमें तीन शब्द है – षट, पिता, पुत्रक। इसमें कुल 6 अक्षर, 6 क्रियाएं तथा 6 विभाग हैं। ताल में दो खण्ड ऽ'।ऽ और ऽ।ऽ' है। दूसरा खण्ड पहले का प्रतिबिम्ब है। पुत्र पिता का ही प्रतिबिम्ब होता है अतः इसका नामकरण सार्थकता सिद्ध करता है।

सम्पक्वेष्टाक ताल की उत्पत्ति षटपितापुत्रक से हुई। आरम्भ तथा अन्त में प्लुत की कल्पना षटपितापुत्रक ताल से हुई जिसके आरम्भ एवं अन्त में प्लुत है। आरम्भ तथा अन्त प्लुत होने के कारण इसको भरत ने गम्भीर प्रकृति की ताल माना जिसका प्रयोग पूर्वांग के गीतकों में किया जाता था। इन गीतकों की आवश्यकता के अनुसार सम्पक्वेष्टाक ताल की रचना हुई प्रतीत होती है। इन गीतकों का प्रयोजन श्रोताओं को नाट्य की ओर एकाग्र करके मुख्य नाटक हेतु तैयार करना होता था।

उदघट्ट ताल की रचना सम्पक्वेष्टाक ताल के आधार पर हुई, जिसमें आरम्भ एवं अन्त के प्लुत को हटाकर की गई। देखने में यही त्रयश्र जाति की ताल लगती है परन्तु फिर भी चाचपुट ताल ही मूल त्रयश्र ताल मानी गई क्योंकि इसका प्रयोग पूरे गीतक में न होकर केवल छोटे से खण्ड में होता था।

इस प्रकार हमने पांच मार्गी ताल की रचना प्रक्रिया को समझा।

1.5 देशी ताल की रचना

ताल की रचना का आधार मूल रूप से बौद्धिक है तथा संगीत की आवश्यकता इसका आधार है। संगीत में आधार लय एवं ताल से ही प्रतिष्ठित किया जाता है। जिस प्रकार का संगीत निर्माण होता गया उसी प्रकार तालों का निर्माण होता गया। मानसोल्लास ग्रन्थ में 30, संगीत चूड़ामणी में 96, संगीत रत्नाकर में 120 तथा संगीतराज में 138 तालों को उनके लक्षण एवं अवयवों के साथ दिया गया है। देशी तालों की रचना मार्गी तालों से हुई तथा इनके तीन भेद बताए गए तथा इन भेदों के आधार पर देशी तालों का निर्माण हुआ।

1. शुद्ध ताल – जिसमें किसी ताल की छाया न हो।
2. सालग ताल – जिनमें दो तालों का मिश्रण हो।
3. संकीर्ण ताल– जिनमें कई तालों का मिश्रण हो।

सोमनाथ कवि ने 108 देशी तालों का वर्णन किया है। जिसमें आरम्भ की सात तालों को प्रथम ताल, 27 तालों को शुद्ध ताल तथा शेष तालों का मिश्र ताल कहा है। मिश्र ताल के अन्तर्गत सालग एवं सकीर्ण दोनों प्रकार की तालों को रखा गया है।

संगीत रत्नाकर में शारंगदेव ने 120 देशी तालों का उल्लेख किया है जो द्रुतादि अवयवों के संयोग से बनी है। ताल की रचना एक से अधिक अवयवों अथवा अंगों के संयोग से होती है परन्तु रत्नाकर में अपवाद स्वरूप तीन निम्न तालें एक–एक अंग की हैं।

आदि ताल	**1**	**एक लघु**
करण ताल	**S**	**एक गुरू**
एक ताल	**0**	**एक द्रुत**

दक्षिण भारतीय संगीत की सात तालों में एकताल भी एक अंग की ताल है परन्तु यह एक अंग लघु का है जो रत्नाकर में वर्णित एक ताली से भिन्न है।

मार्गी तालों की रचना में लघु, गुरू, द्रुत अंग ही प्रयोग किए जाते थे। परन्तु देशी तालों की रचना लघु विराम तथा द्रुत विराम आदि अंगों के संयोग से भी हुई। लघु विराम का संकेत चिन्ह । तथा द्रुत विराम का संकेत चिन्ह ŏ है। लघु विराम के संयोग से तथा द्रुत विराम के संयोग से बनने वाल तालें निम्न हैं:–

लघु विराम के संयोग की तालें		द्रुत विराम के संयोग की तालें	
लघु शेखर	|̆	तृतीय	0 0 0̆
हंस लील	| |̆	क्रीडा	0̆ 0̆
गजलील	| | |̆	प्रताप शेखर	0̆ 0 0̆
निः सारूक	|̆ |̆	षटताल	0 0̆ 0 0̆
मग्नताल	0 0 0 0 | | |̆	तुरंग लील	0̆ 0̆ 0 0
		गारूगी	0 0 0 0̆
		विषम	0 0 0 0̆ 0 0 0̆
		सम	| | 0̆ 0̆
		मल्ल ताल	| | | | 0 0̆
		लक्ष्मीरा	0 0̆ | S′
		चच्चरी	0 0̆ 0 0̆ 0 0̆ 0 0̆ 0 0̆ 0 0̆ 0 0̆ 0 0̆
		मिश्रवर्ण	0 0 0 0̆ 0 0 0 0̆ 0 0 0 0̆ S′ S 0 0 S| S

मिश्रवर्ण ताल पांच अंगों – द्रुत विराम, द्रुत, लघु, गुरू एवं प्लुत के संयोग से बनी ताल है। देशी तालों में द्रुत, लघु, गुरू, प्लतु तथा काकपद के संयोग बनी तालें भी हैं जो संगीत रत्नाकर की 120 तालों में हैं, जो निम्न हैं :–

1. मण्ठ ताल | | S + + + +
2. सिंहनन्दन S S | S | S′ 0 0 S S | S′ | S′ S | | + + + +

देशी तालों में सिंहनन्दन ताल सबसे अधिक मात्रा की ताल है जिसकी मात्राएं 44 हैं।

संगीत दर्पण में देशी तालों की संख्या 224 तथा मन्नू जी महाराज ने तालदीपिका में देशी तालों की संख्या 223 दी है।

दक्षिण भारतीय संगीत जिसे कर्नाटक संगीत भी कहा जाता है, में कर्नाटक ताल पद्धति वर्तमान में भी प्रचलन में है। जिसकी ताल पद्धति तथा ताल व्यवहार उत्तर भारतीय ताल पद्धति से भिन्न है तथा प्राचीन ताल पद्धति के अधिक निकट है। इसमें भी तालों की रचना विभिन्न अंगों के संयोग से होती है। इनकी मूल तालें सात हैं जिनमें लघु, द्रुत तथा अणुद्रुत अंगों का ही संयोग है जो निम्न प्रकार हैः–

नाम	संकेत	विभाग	मात्रा
ध्रुवताल	| 0 | |	4	4+2+4+4= 14
मठताल	| 0 |	3	4+2+4 = 10
रूपकताल	| 0	2	4+2 = 6
झम्प ताल	| ∪ 0	3	4+1+2 = 7
त्रिपुट	| 0 0	3	4+2+2 = 8
अठताल	| | 0 0	4	4+4+2+2 = 12
एकताल	|	1	4 = 4

इस ताल पद्धति में लघु अंग का विशेष महत्व है क्योंकि इन सात मूल तालों में लघु की मात्रा संख्या पांच जाति भेद के आधार पर परिवर्तित हो जाती है। मूल तालों की रचना का आधार अंग तथा जाति भेद के आधार पर 3 तालों की रचना होती है। प्रत्येक ताल की पांच जाति भेद की ताल हैं, जिनसे 3 तालें प्राप्त होती हैं। सात मूल तालें चतुरश्र जाति की मानी गई हैं। त्रयश्र जाति में लघु की 3 मात्रा, खण्ड

जाति में लघु की मात्रा 5, मिश्र जाति में लघु की मात्रा 7 तथा संर्कीण जाति में लघु की मात्रा 9 होगी। जाति भेद के आधार पर ध्रुव ताल के पांच भेद निम्न प्रकार हैंः–

ताल	जाति	लघु की मात्रा	संकेत चिन्ह	मात्रा
ध्रुवताल	चतुरश्र	**4**	। 0 । ।	**14**
ध्रुवताल	त्रयश्र	**3**	। 0 । ।	**11**
ध्रुवताल	खण्ड	**5**	। 0 । ।	**17**
ध्रुवताल	मिश्र	**7**	। 0 । ।	**23**
ध्रुवताल	संकीर्ण	**9**	। 0 । ।	**29**

इस प्रकार ध्रुवताल चतुश्र में 14, त्रयश्र में 11, खण्ड में 17, मिश्र में 23 तथा संर्कीण में 29 मात्रा की ताल होगी।

पांच जाति भेदों में केवल लघु की मात्रा परिवर्तित होती है परन्तु अन्य अंगों की मात्रा संख्या उनकी मूल संख्या ही रहती है। उक्त प्रकार से ही अन्य तालों के जाति भेद करके प्रत्येक ताल की पांच तालें प्राप्त होंगी, इस प्रकार कुल तालें 35 हो जाएंगी। इन 35 तालों के नाम भिन्न हैं। 35 तालों की रचना जाति भेद के आधार पर होती है तथा इन 35 तालों के गति भेद के आधार पर प्रत्येक ताल के अन्य पांच भेद प्राप्त होंगे। इस प्रकार 35 × 5 = 175 तालों की रचना की जा सकेगी। गति भेद भी जाति से ही सम्बन्धित है, परन्तु इससे लघु की संख्या नहीं बदलती। परन्तु चतुरश्र में चार गुना, त्रयश्र में तीन गुना, खण्ड में पांच गुना, मिश्र में सात गुना तथा संर्कीण में ताल को नौ गुना करते हैं। ध्रुव ताल की पांच जाति भेद की तालें निम्न प्रकार से होगी। चतुरश्र ध्रुवताल की मात्रा 14 होती है। ध्रुवताल चतुरश्र जाति के पांच गति भेद।

चतुश्र जाति ध्रुवताल	गति भेद
। 0 ।।	14× 4 = 56
। 0 ।।	14× 3 = 42
। 0 ।।	14× 5 = 70
। 0 ।।	14× 7 = 98
। 0 ।।	14× 9 = 126

मूल ध्रुवताल की चतुरश्र जाति में मात्रा 14 रहती हैं तथा इसको चौगुना, तीगुना, पांच गुना, सात गुना तथा नौ गुना कर क्रमशः 56, 42, 70, 98, 126 मात्राओं की पांच तालें प्राप्त होती हैं। एक अन्य उदाहरण – ध्रुवताल त्रयश्र जाति के पांच गति भेद – ध्रुवताल त्रयश्र जाति में मात्रा 11 होती हैं।

त्रयश्र जाति ध्रुवताल	गति भेद
। 0 ।।	11× 4 = 44
। 0 ।।	11× 3 = 33
। 0 ।।	11× 5 = 55
। 0 ।।	11× 7 = 77
। 0 ।।	11× 9 = 99

इस प्रकार सात मूल तालों से जाति भेद के आधार पर 35 तालें तथा गति भेद के आधार पर प्रत्येक 35 तालों से अन्य पांच तालों की रचना होती है तथा इस प्रकार कुल 175 तालें प्राप्त होती हैं।

1.6 वर्तमान तालों की रचना

वर्तमान संगीत के सन्दर्भ में शास्त्रीय संगीत को मार्गी संगीत के तथा लोक संगीत को देशी संगीत के अन्तर्गत वर्गीकृत कर सकते हैं। संगीत में समय—समय पर नवीन शैलियों का विकास होता रहा जो कि संगीत में विभिन्न शैलियों के रूप में प्रतिष्ठित है। वर्तमान में प्रतिष्ठित संगीत की विभिन्न शैलियों ध्रुपद—धमार गायन शैली, ख्याल, ठुमरी, दादरा, तराना, टप्पा का चलन एक दूसरे से भिन्न था तथा इसको पूर्णता प्रदान करने के लिए विभिन्न शैलियों के अनुरूप तालों का निर्माण होता गया। साहित्य में जो कार्य छन्द ने किया संगीत में वही कार्य ताल का रहा। जिस प्रकार छन्द के बिना साहित्य अधूरा समझा जाता है उसी प्रकार ताल के बिना संगीत। संगीत यद्यपि अनिबद्ध भी रहा परन्तु श्रोता निबद्ध संगीत का ही अत्यधिक आनन्द लेते हैं। अनिबद्ध संगीत को संरक्षित करना कठिन था इसके विपरीत निबद्ध संगीत को स्वर एवं ताल में लिपिबद्ध कर संरक्षित किया गया। लिपिबद्ध किए गए संगीत का प्रयोग आजतक किया जा रहा है।

ध्रुपद गायन शैली के अन्तर्गत भी विभिन्न रचनाओं के साथ विभिन्न तालों की आवश्यकता हुई। इन विभिन्न रचनाओं से विभिन्न रस प्रतिपादित किए गए तथा उसी के अनुसार ताल की रचना हुई। इसके साथ ही संगीत की भिन्न रचना हेतु उसकी प्रकृति के अनुसार अवनद्य वाद्य तथा उस पर बजाए जाने वाले बोल भी निश्चित किए गए। ध्रुपद गायन शैली में प्रयुक्त होने वाली तालों को अन्य शैलियों में प्रयुक्त नहीं किया जा सकता, चूंकि वे शैलियों की प्रकृति के अनुरूप नहीं हैं। ताल की प्रकृति उसकी रचना पर आधारित होती है, जिसके निश्चित अंग होते हैं।

1. ताल में मात्रा की संख्या
2. ताल के विभाग
3. ताल की मात्राओं पर बल

उपरोक्त को प्रदर्शित करने के लिए निश्चित बोल दिए गए जिससे उस ताल की पहचान बनी।

ताल रचना में पहले मात्राएं निश्चित की जाती हैं उसके पश्चात इन मात्राओं को ताल के निश्चित चलन के अनुसार विभागों में बांटा जाता है। ताल के दो खण्ड होते हैं तथा दूसरा खण्ड पहले खण्ड का प्रतिबिम्ब होता है। मात्राओं को विभागों में बांटने के पश्चात अवनद्य वाद्य पर प्रस्तुत करने के लिए मात्राओं पर बोल निश्चित किए जाते हैं, जिसको ठेका कहते हैं। ठेका ताल की पहचान भी होती है तथा इससे ताल को स्थायित्व भी मिलता हैं।

ताल की रचना संगीत की रचनाओं के अनुसार होती गई। वर्तमान में संगीत में प्रयुक्त होने वाली सबसे कम मात्रा की ताल छः मात्रा की दादरा ताल है तथा सबसे अधिक मात्रा की ताल ब्रह्मताल है जो अठाईस मात्रा की है। दादरा ताल तबले पर तथा ब्रह्म ताल पखावज पर बजाई जाने वाली ताल है।

ख्याल तथा तन्त्र वाद्य पर गतकारी बाज से पूर्व ध्रुपद—धमार गायन शैली ही प्रचलित थी। गायन तथा तन्त्र वाद्य वीणा, सुरबहार, सरोद वाद्य पर इसका प्रयोग होता था तथा इसके साथ पखावज वाद्य की संगत की जाती थी। ख्याल गायन तथा गतकारी वादन शैली के साथ इसके लिए पखावज एवं तबला वाद्यों के लिए पृथक—पृथक तालों का निर्माण हुआ। भिन्न मात्रा, भिन्न विभाग तथा भिन्न ठेके के कारण भिन्न—भिन्न तालों का निर्माण हुआ। मात्रा समान होने पर तथा विभाग की संख्या पृथक होने पर ताल भिन्न हो जाती है अतः ताल रचना में मुख्य, मात्राओं को विभाग में बांटना है। विभाग की संख्या बदल जाने पर ताल का स्वरूप बदल जाता है। मात्रा समान तथा विभाग समान होने पर केवल ठेके के बोल बदलने से भी ताल पृथक हो जाती है, जो कि निम्न उदाहरणों से स्पष्ट हो जाएगा।

आड़ाचार ताल, दीपचन्दी तथा झूमरा सभी चौदह मात्रा की ताल हैं परन्तु इनके विभागों की संख्या बदलने पर तथा इनके बोल बदलने पर ये तालें पृथक हो गई तथा इनका उपयोग भी पृथक हो गया।

<u>आड़ाचार ताल मात्रा—14, विभाग—7</u>

धिं	तिरकिट	धि	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धी	ना	धी	धी	ना	धिं
×		2		0		3		4		0		5		×

दीपचन्दी ताल मात्रा–14, विभाग–4

धा	धिं	ऽ	धा	धा	तिं	ऽ	ता	तिं	ऽ	धा	धा	धिं	ऽ	धा
×			2				0			3				×

झूमरा ताल मात्रा–14, विभाग–4

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

आड़ाचार ताल में सात विभाग हैं जबकि दीपचन्दी तथा झूमरा ताल में चार विभाग हैं। दीपचन्दी तथा झूमरा ताल के विभाग समान हैं परन्तु मात्राओं के दिए गए बोल अथा ठेका भिन्न है जिससे इन तालों का चलन भी भिन्न है। आड़ाचार ताल, दीपचन्दी तथा झूमरा ताल की प्रकृति भिन्न है तथा चलन में एक दूसरे से अलग।

ताल रचना में ताली तथा खाली का भी महत्व होता है। ताली जिसको अंक से प्रदर्शित करते हैं इस पर बल अधिक होता है तथा खाली की मात्रा पर बल कम दिया जाता है। ताल की पहली मात्रा सम होती है जो संगीत रचना के समय से ताल आरम्भ हो जाती है। ताली तथा खाली को सम के बाद वाले क्रमशः अंक से तथा खाली को 0 से प्रदर्शित करते हैं जिसको भातखण्डे ताललिपि कहते हैं। ताल को लिपिबद्ध करने के लिए विष्णु दिगम्बर पद्धति भी प्रचलन में है। चौदह मात्रा की अन्य ताल धमार है परन्तु यह ताल पखावज पर प्रयोग करने हेतु है। तालों की रचना लय भेद के आधार पर भी हुई। विलम्बित लय हेतु अलग तालें तथा मध्य व द्रुत लय में प्रयोग हेतु अलग तालें थी। सोलह मात्रा की तिलवाड़ा ताल तथा चौदह मात्रा की झूमरा विलम्बित लय में प्रयोग हेतु निश्चित की गई। इन्हीं की समान मात्रा की ताल क्रमशः तीनताल तथा आड़ाचार ताल को मध्य तथा द्रुत लय में प्रयोग हेतु माना गया। तीनताल को तो तराना तथा तन्त्र में झाले के साथ अतिद्रुत लय में प्रयोग किया जाता है। समान मात्राओं की भिन्न–भिन्न तालों की रचना हुई जिसके औचित्य पर आगे चर्चा होगी।

1.7 समान मात्राओं की विभिन्न तालों का औचित्य

समान मात्राओं की विभिन्न तालों की आवश्यकता का आधार संगीत की विभिन्न शैलियां हैं। संगीत में ध्रुपद–धमार शैली में पखावज का प्रयोग होता है तथा जिससे पखावज की तालों का निर्माण हुआ। पखावज की ताल के सापेक्ष तबले की समान मात्रा की ताल हैं। जैसे पखावज की बारह मात्रा की चार ताल तथा तबले की बारह मात्रा की एकताल एवं पखावज की दस मात्रा की ताल सूलताल एवं तबले की झपताल। इन समान मात्राओं का औचित्य तो स्पष्ट है कि चारताल का निर्माण पखावज वाद्य पर बजाने के लिए तथा एकताल का निर्माण तबले हेतु किया गया। यही स्थिति सूलताल एवं झपताल की है। पखावज पर बजने वाली ताल में पखावज के वर्ण तथा तबले पर बजने वाली तालों में तबले के वर्ण ठेके में प्रयुक्त होते हैं। तबले पर बजाई जानी वाली समान मात्राओं की तालें निम्न हैं–जैसे सोलह मात्रा की तालें।

तिलवाड़ा – मात्रा 16, विभाग – 4

धा	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा
×				2				0				3				×

तीनताल – मात्रा 16, विभाग – 4

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	ता	धिं	धिं	धा	धा
×				2				0				3				×

पंजाबी ताल – मात्रा 16, विभाग – 4

धा	ऽधी	ऽक	धा	धा	ऽधी	ऽक	धा	ता	ऽती	ऽक	ता	धा	ऽधी	ऽक	धा	धा
×				2				0				3				×

ऊपर लिखी सोलह मात्रा की तालों में सभी की ताल रचना सामान्य है। सभी में चार विभाग हैं, सभी में ताली–खाली की स्थिति समान पर है परन्तु ठेके के बोलों में परिवर्तन से तालें अलग हो गई। इन तालों का निर्माण इनके पृथक प्रयोग के कारण हुआ।

1.7.1 लय भेद के कारण समान मात्रओं की विभिन्न तालें – संगीत में विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय का प्रयोग गायन तथा वादन दोनों में ही होता है। यहां पर हम तबले पर प्रयोग होने वाली समान मात्राओं की तालों पर चर्चा करेंगे। शास्त्रीय गायन शैली ख्याल में तबला वाद्य का प्रयोग किया जाता है। ख्याल गायन के अर्न्तगत विलम्बित ख्याल रचना, मध्य लय तथा द्रुत लय की रचना प्रस्तुत करते हैं। विलम्बित ख्याल को बड़ा ख्याल तथा मध्य एवं द्रुत लय की रचना का छोटा ख्याल कहा जाता है। ख्याल गायन के अन्तर्गत ही तराना जो कि द्रुत एवं अति द्रुत लय की रचना है, प्रस्तुत किया जाता है। अतः विलम्बित ख्याल रचना हेतु सोलह मात्रा की तिलवाड़ा, चौदह मात्रा की झूमरा तथा बारह मात्रा की एकताल निश्चित की गई। तिलवाडा तथा झूमरा तालों को मध्य तथा द्रुत लय में प्रयोग करने से इसका स्वरूप बदल जाता है अतः सोलह मात्रा एवं चौदह मात्रा की मध्य लय तथा द्रुत लय में प्रयोग हेतु क्रमशः तीनताल तथा आड़ाचार ताल अधिक उपयुक्त पाई गई। एकताल का प्रयोग विलम्बित, मध्य एवं द्रुत तीनों लयों में किया जा सकता था अतः बारह मात्रा की अन्य ताल के विषय में सोचने की आवश्यकत नहीं हुई। तिलवाड़ा, झूमरा तथा एकताल इन सब तालों में प्रथम खण्ड एवं द्वितीय खण्ड में तिरकिट का बोल रखा गया है जिससे इन तालों के विलम्बित स्वरूप को कायम रखने से सहायता मिलती है। तिरकिट बोल के आधार पर उक्त तालों को अति विलम्बित लय में बजाना भी सरल हो जाता है। वर्तमान में अति विलम्बित लय के ख्याल का प्रचलन भी है जिसमें तिरकिट बोल ति, र, कि, ट वर्ण का स्वतंत्र अस्तित्व हो जाता है जिससे अतिविलम्बित लय स्थिर हो जाती है। झपताल को मध्य लय में ही बजाने पर झपताल की गज गामिनी वाला चाल स्वरूप रह पाता है। दस मात्रा को द्रुत लय में बजाने के लिए सूलताल का प्रयोग वांछनीय है जो कि संगीत रचना के अनूकूल होता है।

झपताल

धी	ना	धी	धी	ना	ती	ना	धी	धी	ना	धी
×		2			0		3			×

सूलताल

धा	धा	दिं	ता	किट	धा	तिट	कता	गदि	गन	धा
×		0		2		3		0		×

सूल ताल पखावज में बाजाई जाती है।

लय भेद के कारण ताल का स्वरूप नष्ट ना हो इस कारण विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय के लिए अलग–अलग तालों का निर्माण हुआ।

1.7.2 संगीत की विभिन्न शैलियों के कारण समान मात्राओं की विभिन्न तालें – संगीत के अन्तर्गत विभिन्न शैलियों का प्रचलन रहा जैसे ध्रुपद–धमार शैली, ख्याल शैली, ठुमरी, दादरा, टप्पा, गजल, भजन, गीत तथा विभिन्न प्रान्तों की लोक शैलियां। इन शैलियों की प्रकृति के अनुसार समान मात्राओं की पृथक तालों का निर्माण हुआ। ध्रुपद, धमार शैली के साथ पखावज की तालों का प्रयोग पखावज पर किया जाता था। ख्याल शैली की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। ख्याल शैली के साथ बजने वाली तालों का प्रयोग अन्य किसी शैली में उपयुक्त नहीं पाया गया। ठुमरी शैली हेतु पृथक तालों की रचना हुई। ठुमरी व दादरा को उपशास्त्रीय संगीत की श्रेणी में रखा जाता है। सोलह मात्रा में ठुमरी हेतु जत ताल तथा चौदह मात्रा में ठुमरी हेतु दीपचन्दी ताल का प्रयोग होता है। जत ताल को सामान्य भाषा में चौदह मात्रा की दीपचन्दी भी कहते हैं। इन दोनों को विलम्बित लय में ठुमरी के साथ प्रयोग करते हैं। ठुमरी के साथ सोलह मात्रा की पंजाबी ताल का प्रयोग भी होता है, जो कि मध्य लय में होता है। पंजाबी ताल का प्रयोग मुख्यतः बोल बांट

की ठुमरी तथा नृत्य के साथ गाई जाने वाली ठुमरी के साथ होता है। सोलह मात्रा की समान मात्राओं की तालों में परिवर्तन उनके ठेके के बोल के कारण, जिससे सोलह मात्राओं की पृथक–पृथक तालों में एक विशेष झोल है एवं इसी झोल के कारण इन तालों को पृथक–पृथक शैलियों के साथ प्रयोग किया जाता है। तिलवाड़ा तथा तीनताल का प्रयोग ठुमरी गायन शैली के साथ करना वांछनीय नहीं है। टप्पा संगीत रचना के साथ पंजाबी ताल का प्रयोग ही विशेष रूप से होता है यद्यपि मध्य तीनताल में भी टप्पे सुने जाते हैं, परन्तु तिलवाड़ा एवं जत में नहीं। ठुमरी की प्रकृति चंचल है तथा इसमें स्वर ठुमकते हुए चलते हैं अतः इसके लिए दीपचन्दी, जत तथा पंजाबी ताल का चलन अत्यधिक उपयुक्त है।

आठ मात्रा की मूल ताल कहरवा ताल है जिसमें भजन, गजल एवं गीत गाए जाते हैं। परन्तु ठेके के बोलों में परिवर्तन कर इसको अलग–अलग शैलीयों के साथ प्रयोग किया जाता है। आठ मात्रा की विभिन्न तालों के ठेके निम्न हैः–

कहरवा

धा	गे	न	ति	ना	के	धिं	न	धा
×				0				×

धुमाली

धा	धिं	धागे	तिरकिट	ता	तिं	धागे	तिरकिट	धा
×				0				×

अद्धा तीनताल

धा	धिं	धाधा	तिं	ता	तिं	धाधा	धिं	धा
×				0				×

गजल एवं गीत के साथ प्रयोग होने वाला कहरवा का ठेका

धा	तिरकिट	तिं	ति	ता	तिरकिट	धिं	धिं	धा
×				0				×

भजन के साथ प्रयोग होने वाला कहरवा का ठेका

धिंऽ	धातिं	ऽतिं	ताता	तिऽ	तातिं	ऽधिं	धाधा	धिं
×				0				×

कहरवा ताल के मूल ठेके का प्रयोग कम हो गया तथा प्रत्येक संगीत रचना में उसके चलन के स्वरूप ठेका उपरोक्त ठेकों के अतिरिक्त भी कलाकार द्वारा बना लिया जाता है। धुमाली ताल का प्रयोग मध्य लय में पुरानी गजल गायकी के साथ किया जाता था। ठुमरी के साथ भी इसका प्रयोग किया जाता था। पंजाब अंग की ठुमरी में धुमाली तथा अद्धातीनताल का प्रयोग होता था। इसको तीनताल का आधा स्वरूप माना गया जिस कारण इसका नामकरण अद्धा ताल हो गया। भजन के साथ उपर दिया गया ठेका ही प्रयोग किया जाता है जिसको भजन का ठेका ही कहा जाने लगा। पं0 कुमार गन्धर्व अपने भजन गायन के साथ विशेष प्रकार का ठेका का प्रयोग करवाते थे। इस प्रकार आठ मात्रा की विभिन्न तालों तथा ठेकों के प्रकार, विभिन्न शैलियों में रस–भाव उत्पन्न कर देते हैं। फिल्म संगीत में आठ मात्रा तथा छः मात्रा की आवृत्ति में प्रत्येक गाने के लिए अलग ठेका प्रयोग किया जाता है जो कि गाने की प्रकृति के अनुरूप होता है। पारम्परिक ठेकों का प्रयोग बहुत कम होता है। आठ मात्रा तथा छः मात्रा के ठेकों के प्रकार क्रमशः कहरवा तथा दादरा ताल के अन्तर्गत ही आते हैं।

संगीत में समान मात्राओं की विभिन्न तालें विभिन्न लय भेद के प्रयोग तथा संगीत की विभिन्न शैलियों की आवश्यकता के कारण अस्तित्व के आई एवं इनकी ताल संरचना का सिद्धान्त, इसी पर आधारित है।

अभ्यास प्रश्न

क) लघु उत्तरीय प्रश्नः–

1. मार्गी तालों की संख्या कितनी थी?
2. चतुश्र जाति की मार्गी ताल के नाम लिखिए।
3. लघु, गुरू तथा प्लुत के चिन्हों को बताइए।
4. संगीत रत्नाकर में देशी तालों की संख्या बताइए।
5. प्राचीन तालों के भेदों की संख्या तथा उनके नाम लिखिए।
6. चौदह मात्राओं की तीन तालों के नाम लिखिए।
7. तीनताल के अतिरिक्त सोलह मात्रा की किन्हीं दो तालें के नाम लिखिए।

1.8 सारांश

संगीत में लय तथा ताल महत्वपूर्ण अंग हैं। संगीत नैसर्गिक है, ताल असीमित काल तथा लय को स्वामित्व तथा प्रतिष्ठा प्रदान करती है। प्रस्तुत इकाई में ताल की विस्तृत व्याख्या के अध्ययन से आप ताल के विषय में पूर्ण रूप से जान गए होंगे। ताल संगीत की आवश्यकता है एवं इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु समय–समय पर तालों की रचना होती गई। इन तालों की रचना का आधार तथा सिद्धान्त आप इस इकाई के अध्ययन से जान गए होंगे। समान मात्राओं की विभिन्न तालों का भी निर्माण हुआ, इन तालों की क्या आवश्यकता थी एवं क्या औचित्य था आदि प्रश्न का उत्तर भी इस इकाई के माध्यम से आप प्राप्त कर चुके होंगे।

1.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. पांच
2. चच्चपुट
3. । ऽ ऽ
4. 1 2 0
5. तीन–शुद्ध, सालग, संर्कीण
6. झूमरा, दीपचन्दी एवं आड़ाचार ताल
7. जतताल एवं तिलवाड़ा

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बसन्त, संगीत विशारद, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. सेन, अरूण कुमार, भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन, मध्य प्रदेश हिन्दी अकादमी, रायपुर।
3. चौधरी, सुभद्रा, भारतीय संगीत में ताल और रूप विधान, कृष्ण बदर्स, अजमेर।

1.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1. संगीत में ताल की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
2. मार्गी एवं देशी तालों की रचना पर प्रकाश डालिए।
3. लय भेद के कारण समान मात्राओं की विभिन्न तालों के औचित्य पर प्रकाश डालिए।
4. संगीत में विभिन्न शैलियों के आधार पर समान मात्राओं की विभिन्न तालों के औचित्य पर प्रकाश डालिए।

इकाई 2 – पाठ्यक्रम की तालों का परिचय एवं बोल समूह द्वारा ताल पहचानना; पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों को दुगुन, तिगुन, चौगुन और आड में लिखना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 तालों का परिचय
- 2.3.1 पंचमसवारी ताल का परिचय
- 2.3.2 आडाचार ताल का परिचय
- 2.3.3 बसंत ताल का परिचय
- 2.3.4 रूपक ताल का परिचय
- 2.3.5 तिलवाडा ताल का परिचय
- 2.3.6 झूमरा ताल का परिचय

2.4 तालों को लयकारीयों में लिखना
- 2.4.1 पंचमसवारी ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना
- 2.4.2 आडाचार ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना
- 2.4.3 बसंत ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना
- 2.4.4 रूपक ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना
- 2.4.5 तिलवाडा ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना
- 2.4.6 झूमरा ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना

2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के तृतीय खण्ड की दूसरी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप विद्वान संगीतज्ञों के महत्वपूर्ण योगदान तथा उनकी संगीत साधना के प्रति लगन एवं परिश्रम को जान चुके होंगे। आप ताल रचना के सिद्धान्त एवं समान मात्राओं की विभिन्न तालों के औचित्य को भी जान चुके होंगे।

इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों का परिचय व उनके ठेकों को विभिन्न लयकारी(दुगन, तिगुन, चौगुन व आड) में लिपिबद्ध करने के विषय में बताया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों के ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने के विषय में जान सकेंगे। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

1. लयकारी का ज्ञान प्राप्त होगा।
2. तबले की ताल के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन एवं संगत) करने में सक्षम होंगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा।

2.3 तालों का परिचय

2.3.1 पंचमसवारी ताल का परिचय – इस ताल को सिर्फ सवारी ताल के नाम से भी जाना जाता है। यह सवारी ताल के प्रकारों में से एक है। 'भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन' के लेखक डॉ0 अरूण कुमार ने 18 प्रकार की सवारी बताई हैं–कैद सवारी, कुर्क सवारी, तृतीय सवारी, चतुर्थ सवारी, पंचम सवारी, षष्ठ सवारी, सप्तम सवारी, चंपक सवारी, शेर की सवारी, बड़ी सवारी, मर्दानी सवारी, जनानी सवारी, सीता सवारी, छोटी सवारी, बसारी सवारी और मंजरी सवारी आदि। किन्तु किसी भी ग्रन्थ में पंचमसवारी, जिसे सवारी के नाम से भी जाना जाता है को छोड़कर अन्य किसी भी सवारी के प्रकारों का विशेष उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। विषम ताल होने के कारण इसकी गिनती कठिन तालों में की जाती है। यह तीनताल, एकताल, झपताल आदि तालों की अपेक्षा कम लोकप्रिय है। शास्त्रीय संगीत की विलम्बित रचनाओं के साथ पंचम सवारी प्रयोग की जाती है। पंचमसवारी द्रुत व अति द्रुत लय में भी बजाई जाती है अतः इसका प्रयोग गायन में द्रुत ख्याल व वादन में द्रुत गत में किया जाता है। तबले पर एकल वादन हेतु भी इसका प्रयोग किया जाता है। इस ताल में उठान, पेशकार, कायदे, रेला, गत, परन, चक्करदार, टुक्ड़े, तिहाईयां आदि बजाए जाते हैं।

पंचमसवारी के ठेके के भिन्न–भिन्न प्रकार मिलते हैं। यह चार विभाग की 15 मात्रा की विषम पदीय ताल है। इसमें पहले विभाग में तीन एवं अन्य विभाग चार चार मात्राएं हैं। इसकी संरचना निम्न प्रकार हैः–

मात्रा – 15, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 12 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धी ना धीधी	कत धीधी नाधी धीना	तीक तीना तिरकिट तूना
×	2	0

कता धीधी नाधी धीना	धि
3	×

2.3.2 आडाचारताल का परिचय – आडाचारताल चौदह मात्रा की तबले पर बजने वाली ताल है जिसका प्रयोग विलम्बित एवं मध्य लय में किया जाता है। एकताल की भांति अति विलम्बित लय में इसका प्रयोग नहीं होता है। इसमें गायन एवं वाद्यों पर मुख्य रूप से मध्यलय की रचना ही गाई व बजाई जाती है। चारताल पखावज पर बजाने वाली बारह मात्रा की ताल है परन्तु आडाचारताल का पखावज पर बजने वाली ताल से कोई सम्बन्ध नहीं है यद्यपि नाम से सम्बन्ध का भ्रम होता है। इसमें एकल वादन भी तबला वादकों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसका स्वरूप मध्य लय में ही स्थापित होता है। द्रुत एवं अति द्रुत लय में प्रायः इस ताल का प्रयोग नहीं किया जाता है। चौदह मात्रा की ही तबले पर बजने वाली झूमरा ताल, दीपचन्दी ताल एवं कैद फरोदस्त ताल हैं जिनका स्वरूप एवं ताल संरचना आडाचारताल एवं एक दूसरे से भिन्न है एवं इन तालों का संगीत में प्रयोग भी भिन्न रूप में होता है। यही समान मात्रा की तबले पर बजने वाली भिन्न तालों का औचित्य भी है। झूमरा ताल का प्रयोग विलम्बित स्थान की रचना के लिए ही किया जाता है एवं इसका प्रयोग मध्य एवं द्रुत लय हेतु नहीं किया जाता है। दीपचन्दी ताल मध्यलय में भी प्रयोग की जाती है जो बृज की होली एवं चैती गायन के साथ भी बजाई जाती है। दीपचन्दी ताल को चांचर भी कहा जाता है। कैद फरोदस्त ताल मध्य लय में गायन एवं वादन की रचनाओं हेतु प्रयोग की जाती है। आडाचार ताल की संरचना निम्न प्रकार है :–

मात्रा – 14, विभाग – 7, ताली – 1,4,7 व 11 पर, खाली – 5,8 व 13 पर

ठेका

धिं तिरकिट	धिं ना	तू ना	क ता	तिरकिट धि	ना धि	धि ना	धिं
×	2	0	3	0	4	0	×

2.3.3 बसंत ताल – नौ मात्रा की बसन्त ताल पखावज पर बजाई जाने वाली ताल है। यह ताल ध्रुपद शैली की गायन एवं वादन की रचनाओं के साथ प्रयोग की जाती है। इस नौ मात्रा की ताल में नौ विभाग होते हैं एवं प्रत्येक विभाग एक–एक मात्रा का होता है। विभाग मात्रा का समूह होता है अतः एक मात्रा का विभाग होना तर्क संगत नहीं लगता है। इसकी संरचना निम्न प्रकार हैः–

मात्रा – 9, विभाग – 9, ताली – 1,2,3,4,6 व 8 पर, खाली – 5,7 व 9 पर

ठेका

धा	धेत्त	धेत्त	थुं	थुं	तिट	कता	गदी	गिन	धा
×	2	3	4	0	5	0	6	0	×

इसमें पहली मात्रा पर सम, दूसरी, तीसरी, चौथी मात्रा पर ताली, पांचवी मात्रा पर खाली, छः पर ताली, सात पर खाली, आठ पर ताली एवं नौ पर खाली है।

पखावज वादकों द्वारा इस ताल में एकल वादन प्रस्तुत किया जाता है। तबला वादकों द्वारा भी एकल वादन नौ मात्रा में प्रस्तुत किया जाता है जिसके लिए तबला वादकों द्वारा तबले पर बजाने के लिए ठेका बनाया जाता है। वाद्यों पर नौ मात्रा की रचनाएं बजाई जाती हैं जिसमें रचना के अनुसार ही तबला वादक द्वारा ठेके की रचना की जाती है। उदाहरण स्वरूप कुछ तबले के ठेके निम्न प्रकार से हैंः–

1. धिं ना तिरकिट तू ना कता धिन कधा तिरकिट
2. धिं तिरकिट धिं ना तू ना कता धिंकतऽ ऽकधि ताऽकऽ
3. धिं ना धिं धिं ना तिं धिंधिं नाधिं धिनां

2.3.4 रूपक ताल का परिचय – यह तीन विभाग में विभक्त सात मात्रा की विषम पदीय ताल है। यह उत्तर भारतीय ताल पद्धति की ऐसी ताल है जिसकी पहली मात्रा पर सम के स्थान पर खाली दिखाई जाती है, जो कि एक अपवाद है क्योंकि सम एवं ताली पहली मात्रा पर ही मानी जाती है। इस ताल का प्रयोग शास्त्रीय संगीत की रचनाओं एवं सुगम संगीत भजन, गीत एवं गज़ल में किया जाता है। रूपक ताल में एकल वादन भी किया जाता है। इसका प्रयोग मध्य लय में ही करना अधिक उचित है। इसकी संरचना निम्न प्रकार हैः–

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 4 व 6 पर, खाली – 1 पर

ठेका

ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना	ती
0			2		3		0

2.3.5 तिलवाडा ताल का परिचय – इसका प्रयोग केवल ख्याल गायन की विलम्बित रचना, बड़े ख्याल के लिए किया जाता है। एकल वादन में इसका प्रयोग नहीं किया जाता है। इसकी संरचना निम्न प्रकार हैः–

मात्रा – 16, विभाग – 4, ताली – 1,5 व 13 पर, खाली – 9 पर

ठेका

धा तिरकिट धिं धिं	धा धा तिं तिं	ता तिरकिट धिं धिं	धा धा धिं धिं	धा
×	2	0	3	×

2.3.6 झूमरा ताल का परिचय – यह तबले का ताल है। इस ताल की संरचना दीपचन्दी की भांति है परन्तु इस ताल का प्रयोग दीपचन्दी से भिन्न है। झूमरा ताल का प्रयोग शास्त्रीय गायन के विलम्बित ख्याल के साथ किया जाता है। इस ताल का प्रयोग विलम्बित लय में ही किया जाता है, मध्य एवं द्रुत लय में इस ताल के प्रयोग का प्रचलन नहीं है। एकल वादन का प्रचलन इस ताल में नहीं है किन्तु कुछ विद्वानों के अनुसार पुराने तबला वादकों द्वारा इसमें कभी–कभी स्वतन्त्र वादन भी प्रस्तुत किया गया है।

यह मिश्र जाति की अर्द्ध समपदीय ताल है। इसकी 14 मात्राएं 3/4/3/4 विभागों में बँटी हैं। इसमें पहला एवं तीसरा विभाग तीन–तीन मात्रा एवं दूसरा एवं चौथा विभाग चार–चार मात्रा का है। पहली, चौथी एवं ग्यारवीं मात्रा पर ताली एवं आठवीं मात्रा पर खाली है। इसकी संरचना निम्न प्रकार हैः–

मात्रा – 14, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 11 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

2.4 तालों को लयकारीयों में लिखना

लयकारी – समय की समान गति को लय कहते हैं। दो मात्राओं की क्रिया के मध्य होने वाला विश्रांति काल ही लय है और जब यह काल प्रयोग होने वाली मात्राओं के बीच समान रहता है तो वह निश्चित लय का स्वरूप ले लेता है। अतः लय का सम्बन्ध मात्रा एव मात्राओं के बीच के समय से है।

लय सामान्य रूप से तीन प्रकार की मानी गई हैं– विलम्बित, मध्य एवं द्रुत लय। काल के लम्बा होने पर विलम्बित लय स्थापित होती है। इस काल के कम होने पर मध्य लय एवं उससे अधिक कम होने पर द्रुत लय हो जाती है। सामान्य रूप से मध्य लय का विश्रांति समय विलम्बित लय के विश्रांति समय का आधा होता है एवं द्रुत लय का विश्रांति समय मध्य लय के विश्रांति समय का आधा होता है। संगीत में यह मान्यता स्थापित हो चुकी है एवं प्रचलन में है। विलम्बित लय को आधार लय मानने से मध्य लय का प्रयोग विलम्बित लय में दो बार एवं द्रुत लय का प्रयोग चार बार करने की आवश्यकता होगी। अतः मध्य लय विलम्बित लय की दुगुनी, द्रुत लय मध्य लय की दुगुन होती है। लय का यही प्रयोग लयकारी कहलाता है। एक मात्रा में एक से अधिक मात्राओं का आधार लय के साथ प्रयोग लयकारी कहलाता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती हैं।

दुगुन – एक मात्रा में दो मात्रा — 1 2 1 2

तिगुन – एक मात्रा में तीन मात्रा — 1 2 3 123

चौगुन – एक मात्रा में चार मात्रा — 1234 1234

आड़ – एक मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा को आड़ लयकारी कहा जाता है। इसे डयोड़ी लय भी कहते हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में व्यक्त करते हैं। — 1 ऽ 2 ऽ 3 ऽ

कुआड़– इस लयकारी के विषय में दो मत हैं 1. आड़ की आड़ को कुआड़ कहते हैं अतः 9/4 जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में $2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते हैं। 2. 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एक मात्रा में सवा मात्रा। इस दूसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लय भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार–:

1ऽ ऽ ऽ 2ऽ ऽ ऽ 3	ऽ ऽ ऽ 4 ऽऽ ऽ 5 ऽ	ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ	ऽ 8 ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ
1	2	3	4

दुसरे मत के अनुसार :–

1 S S S 2 S S S 3 S S S 4 S S S 5 S S S S

1 2 3 4

बिआड़ – इस लयकारी के विषय में भी दो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड़ लय की आड़, बिआड़ लयकारी होती, जिसे $^{9}/_{4} \times {}^{3}/_{2} = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं। दूसरे मत के अनुसार $^{7}/_{4}$की लयकारी बिआड़ की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पौने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है जिसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार :–

1S S S S S S 2 S S S S S S 3 S S S S S S 4 S S

S S S S S 5 S S S S S S S 6 S S S S S S S 7 S S S S S

S S 8 S S S S S S S 9 S S S S S S S S 10 S S S S S S 11

S S S S S S S 12 S S S S S S S S 13 S S S S S S S S 14 S S S

S S S S 15 S S S S S S S S 16 S S S S S S S S 17 S S S S S

S S 18 S S S S S S S S 19 S S S S S S S S 20 S S S S S S S S 21 S

S S S S S S 22 S S S S S S S S 23 S S S S S S S S 24 S S S S

S S S 25 S S S S S S S S 26 S S S S S S S S 27 S S S S S S S

दूसरे मत के अनुसार :–

1 S S S 2 S S S 3 S S S 4 S S S 5 S S S 6 S S S 7 S S S

कुआड़ एवं बिआड़ में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है अतः लयकारी लिपिबद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोग करेंगे। आड़, कुआड़ एवं बिआड़ लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी हो कर गुणा में बदल जाती है।

उदाहरण आड़ की बट्टा संख्या $3/2 = 1\frac{1}{2}$

आड़ **लयकारी की मात्रा संख्या =** ताल की मात्रा × $2/3$, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या = ताल की भाग संख्या × $2/3$ जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण– आड़ की लयकारी – $^{3}/_{2} = \xrightarrow{2-1=} 1$

कुआड़ की लयकारी– $^{5}/_{4} = \xrightarrow{4-1=} 3$

बिआड़ की लयकारी – $^{7}/_{4} = \underrightarrow{4-1=3}$

अतः आड़ की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड़ एवं बिआड़ की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की उपर वाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती हैं, मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

2.4.1 पंचमसवारी ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :–

पंचमसवारी ताल

मात्रा – 15, विभाग – 4, ताली – 1, 4 व 12 पर, खाली – 8 पर

ठेका

धी ना धीधी	कत धीधी नाधी धीना	तीक तीना तिरकिट तूना
×	2	0

कता धीधी नाधी धीना	धि
3	×

पंचमसवारी ताल की दुगुन :–

धीना धीधीकत धीधीनाधी	धीनातीक तीनातिरकिट तूनाकत्ता धीधीनाधी
×	2

धीनाधी नाधीधी कत्तधीधी नाधीधीना	तीकतीना तिरकिटतूना कत्ताधीधी नाधीधीना	धी
0	3	×

पंचमसवारी ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1 धी नाधीधी कत्तधीधी नाधीधीना	तीकतीना तिरकिटतूना कत्ताधीधी नाधीधीना	धी
0	3	×

पंचमसवारी ताल की तिगुन :–

धीनाधीधी कतधीधीनाधी धीनातीक्रतीना	तिरकिटतूनाकत्ता धीधीनाधीधीना
×	2

धीनाधीधी कत्तधीधीनाधी	धीनातीक्रतीना तिरकिटतूनाकत्ता धीधीनाधीधीना
	0

धीनाधीधी	कतधीधीनाधी	धीनातीक्रतीना तिरकिटतूनाकत्ता धीधीनाधीधीना	धी
	3		×

पंचमसवारी ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

धीनाधीधी	कतधीधीनाधी	धीनातीक्रतीना तिरकिटतूनाकत्ता धीधीनाधीधीना	धी
0	3		×

पंचमसवारी ताल की चौगुन :–

धीनाधीधीकत	धीधीनाधीधीनातीक	तीनातिरकिटतूनाकता	धीधीनाधीधीना	नाधीधीकतधीधी
×			2	

नाधीधीनातीक्रतीना	तिरकिटतूनाकताधीधी	नाधीधीनाधीना	धीधीकतधीधीनाधी	धीनातीक्रतीनातिरकिट
		0		

तूनाकताधीधीनाधी	धीनाधीनाधीधी	कतधीधीनाधीधीना	तीक्रतीनातिरकिटतूना	कत्ताधीधीनाधीधीना	धी
	3				×

पंचमसवारी ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1धीनाधीधी	कतधीधीनाधीधीना	तीक्रतीनातिरकिटतूना	कत्ताधीधीनाधीधीना	धी
3				×

पंचमसवारी ताल की आड़ लयकारी :–

धीऽना	ऽधीधी	कतधी	धीनाधी	धीनाती
		0		

क्रतीना	तिरकिटतू	नाकता	धीधीना	धीधीना	धी
	3				×

2.4.2 आडाचारताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :–

आड़ाचार ताल

मात्रा – 14, विभाग – 7, ताली – 1,4,7 व 11 पर, खाली – 5,8 व 13 पर

ठेका

धिं	तिरकिट	धिं	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धि	ना	धि	धि	ना	धिं
×		2		0		3		0		4		0		×

दुगुन, तिगुन एवं चौगुन की लयकारी को क्रमशः दो बार, तीन बार एवं चार बार प्रयोग किया जाता है।

आडाचारताल की दुगुन :–

धिंतिरकिट	धिना	तूना	कता	तिरकिटधि	नाधि	धिना	धिंतिरकिट
×		2		0		3	
धिना	**तूना**	**कता**	**तिरकिटधि**	**नाधि**	**धिना**	**धिं**	
0		4		0		×	

आडाचारताल की दुगुन एक आवर्तन में – 7 मात्रा की होगी एवं आठवीं मात्र से आरम्भ कर सम पर आएगी।

धिंतिरकिट	धिंना	तूना	कता	तिरकिटधिं	नाधिं	धिंना	धिं
	0		4		0		×

आडाचारताल की तिगुन :–

धिंतिरकिटधि	नातूना	कतातिरकिट	धिनाधि	धिनाधिं	तिरकिटधिना	तूनाक	तातिरकिटधि
×		2		0		3	
नधिधि	नाधिंतिरकिट	धिनातू	नाकता	तिरकिटधिना	धिधिना	धिं	
0		4		0		×	

आडाचारताल की तिगुन एक आवर्तन में – एक आवर्तन की तिगुन $\frac{14}{3} = 4\frac{2}{3}$ मात्रा की होगी एवं $9\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी।

ऽधिंतिरकिट	धिनातू	नाकता	तिरकिटधिंना	धिंधिंना	धिं
	4		0		×

आडाचारताल की चौगुन :–

धिंतिरकिटधिना	तूनाकता	तिरकिटधिनाधि	धिनाधिंतिरकिट
×		2	
धिनातूना	कतातिरकिटधि	नाधिधिना	धिंतिरकिटधिना
0		3	
तूनाकता	तिरकिटधिनाधि	धिनाधिंतिरकिट	धिनातूना
0		4	
कतातिरकिटधि	नाधिधिना	धिं	
0		×	

आडाचारताल की चौगुन एक आवृति में – एक आवृति की चौगुन $\frac{14}{3} = 4\frac{2}{4}$ मात्रा की होगी एवं $11\frac{2}{4}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आएगी।

11	12	13	14	
ऽऽधिंतिरकिट	धिनातूना	कतातिरकिटधिं	नाधिंधिंना	धिं
4		0		×

आडाचारताल की आड लयकारी – $^{14 \times 2}/_{3} = \frac{28}{3} = 9\frac{1}{2}$ मात्रा में आएगी एवं $4\frac{2}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आएगी।

5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
ऽऽधिं	ऽतिरकिट	धिऽना	ऽतूऽ	नाऽक	ऽताऽ	तिरकिटधिं	ऽनाऽ	धिंऽधिं	ऽनाऽ

2.4.3 बसंत ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :–

बसंत ताल

मात्रा – 9, विभाग – 9, ताली – 1,2,3,4,6 व 8 पर, खाली – 5,7 व 9 पर

पखावज पर बजाए जाने वाला ठेका

धा। धेत्त । धेत्त । थुं । थुं । तिट । कता । गदी । गिन । धा

× 2 3 4 0 5 0 6 0 ×

तबले पर बजाए जाने वाला ठेका

धि	ना	तिरकिट	तू	ना	क	ता	धिं	ना	धि
×	2	3	4	0	5	0	6	0	×

बसंत ताल की दुगुन :–

धिना	तिरकिटतू	नाक	ताधि	नाधि	नातिरकिट	तूना	कता	धिना	धि
×	2	3	4	0	5	0	6	0	×

बसंत ताल की दुगुन एक आवर्तन में – एक आवृति की दुगुन $^{9}/_{2} = 4\frac{1}{2}$ मात्रा की होगी।

5	6	7	8	9	
ऽधि	नातिरकिट	तूना	कता	धिना	धि
0	5	0	6	0	×

बसंत ताल की तिगुन :–

धिनातिरकिट	तूनाक	ताधिना	धिनातिरकिट	तूनाक	ताधिना	धिनातिरकिट	तूनाक	ताधिना	धि
×	2	3	4	0	5	0	6	0	×

बसंत ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

7	6	8	
धिनातिरकिट	तूनाक	ताधिना	धि
0	6	0	×

बसंत ताल की चौगुन :–

धिनातिरकिटतू	नाकताधि	नाधिनातिरकिट	तूनाकता	धिनाधिना
×	2	3	4	0
तिरकिटतूनाक	तधिनाधि	नातिरकिटतूना	कताधिना	धि
5	0	6	0	×

बसंत ताल की चौगुन एक आवर्तन में – एक आवृति की चौगुन $^{9}/_{4} = 2\frac{1}{4}$ मात्रा की होगी एवं $6\frac{3}{4}$ मात्रा के बाद आरम्भ कर सम पर आएगी।

7	8	9	
ऽऽऽधि	नातिरकिटतूना	कताधिना	धि
0	6	0	×

बसंत ताल की आड लयकारी – $9 \times {}^{2}/_{3} = 6$ मात्रा की होगी।

4	5	6	7	8	9	
धिऽना	ऽतिरकिट	तूऽना	ऽकऽ	ताऽधिं	ऽनाऽ	धि
4	0	5	0	6	0	×

2.4.4 रूपक ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :–

रूपक ताल

मात्रा – 7, विभाग – 3, ताली – 4 व 6 पर, खाली – 1 पर

ठेका

ती	ती	ना	धी	ना	धी	ना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की दुगुन :–

तीती	नाधी	नाधी	नाती	तीना	धीना	धीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की दुगुन एक आवर्तन में :–

1ती	तीना	धीना	धीना	ती
2		3		0

रूपक ताल की तिगुन :–

तीतीना	धीनाधी	नातीती	नाधीना	धीनाती	तीनाधी	नाधीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की तिगुन एक आवर्तन में :–

12ती	तीनाधी	नाधीना	ती
	3		0

रूपक ताल की चौगुन :–

तीतीनाधी	नाधीनाती	तीनाधीना	धीनातीती	नाधीनाधी	नातीतीना	धीनाधीना	ती
0			2		3		0

रूपक ताल की चौगुन एक आवर्तन में :–

1तीतीना	धीनाधीना	ती
3		0

रूपक ताल की आड लयकारी :–

1तीऽ	तीऽना	ऽधीऽ	नाऽधी	ऽनाऽ	ती
	2		3		0

2.4.5 तिलवाडा ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :–

तिलवाडा ताल

मात्रा – 16, विभाग – 4, ताली – 1,5 व 13 पर, खाली – 9 पर

ठेका

धा	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	तिरकिट	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा
×				2				0				3				×

तिलवाडा ताल की दुगुन :–

धातिरकिट	धिंधिं	धाधा	तिंतिं	तातिरकिट	धिंधिं	धाधा	धिंधिं	
×				2				
धातिरकिट	धिंधिं	धाधा	तिंतिं	तातिरकिट	धिंधिं	धाधा	धिंधिं	धा
0				3				×

तिलवाडा ताल की दुगुन एक आवर्तन में :– 8वीं मात्रा से शुरू होगी।

धातिरकिट	धिंधिं	धाधा	तिंतिं	तातिरकिट	धिंधिं	धाधा	धिंधिं	धा
0				3				×

तिलवाडा ताल की तिगुन :–

धातिरकिटधिं	धिंधाधा	तिंतिंता	तिरकिटधिंधिं	धाधाधिं	धिंधातिरकिट	धिंधिंधा	धातिंतिं	
×				2				
तातिरकिटधिं	धिंधाधा	धिंधिंधा	तिरकिटधिंधिं	धाधातिं	तिंतातिरकिट	धिंधिंधा	धाधिंधिं	धा
0				3				×

तिलवाडा ताल की तिगुन एक आवर्तन में :—

ऽऽधा	तिरकिटधिंधिं	धाधातिं	तिंतातिरकिट	धिंधिंधा	धाधिंधिं	धा
		3				×

तिलवाडा ताल की चौगुन :—

धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	
×				2				
धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	धा
0				3				×

तिलवाडा ताल की चौगुन एक आवर्तन में :—

धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	धातिरकिटधिंधिं	धाधातिंतिं	तातिरकिटधिंधिं	धाधाधिंधिं	धा
0				3				×

तिलवाडा ताल की आड लयकारी :—

1	2	3	4	5	ऽधाऽ	तिरकिटधिं	ऽधिंऽ	
×				2				
धाऽधा	ऽतिंऽ	तिंऽता	ऽतिरकिट	धिंऽधिं	ऽधाऽ	धाऽधिं	ऽधिंऽ	धा
0				3				×

2.4.6 झूमरा ताल को विभिन्न लयकारीयों में लिखना :—

झूमरा ताल

मात्रा — 14, विभाग — 4, ताली — 1, 4 व 11 पर, खाली — 8 पर

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन :—

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	
×			2				
धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की दुगुन एक आवर्तन में :—

धिंऽधा	तिरकिटधिं	धिंधागे	तिरकिटतिं	ऽतातिरकिट	धिंधिं	धागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन :—

धिंऽधातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटतिंऽता	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटधिं	ऽधातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	
×			2				
तिंऽतातिरकिट	धिंधिंधागे	तिरकिटधिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं
0			3				×

झूमरा ताल की तिगुन एक आवर्तन में :—

1धिंऽधा	तिरकिटधिंधिं	धागेतिरकिटतिं	ऽतातिरकिटधिं	धिंधागेतिरकिट	धिं	
	3				×	

झूमरा ताल की चौगुन :–

धिंऽधातिरकिटधिं धिंधागेतिरकिटतिं ऽतातिरकिटधिंधिं |
×
धागेतिरकिटधिंऽधा तिरकिटधिंधिंधागे तिरकिटतिंऽतातिरकिट धिंधिंधागेतिरकिट |
2
धिंऽधातिरकिटधिं धिंधागेतिरकिटतिं ऽतातिरकिटधिंधिं |
0
धागेतिरकिटधिंऽधा तिरकिटधिंधिंधागे तिरकिटतिंऽतातिरकिट धिंधिंधागेतिरकिट | धिं
3 ×

झूमरा ताल की चौगुन एक आवर्तन :–

12धिंऽधा तिरकिटधिंधिंधागे तिरकिटतिंऽतातिरकिट धिंधिंधागेतिरकिट | धिं
3 ×

. झूमरा ताल की आड़ लयकारी :–

12धिं ऽऽधा तिरकिटधिं | ऽधिंऽ धागेतिर किटतिंऽ | ऽतातिर किटधिंऽ धिंऽधा गेतिरकिट | धिं
0 3 ×

अभ्यास प्रश्न

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. डॉ0 अरूण कुमार ने ..... प्रकार की सवारी बताई हैं।
2. पंचमसवारी में .....,..... व..... मात्राओं पर ताली है।
3. झूमरा ताल..... वाद्य की ताल है।
4. झूमरा ..... जाति की ताल है।
5. रूपक ताल में पहली मात्रा पर सम के स्थान पर ..... आती है।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप पाठ्यक्रम की तालों को ठेकों एवं उनको विभिन्न लयकारी(दुगन, तिगुन, चौगुन व आड) में लिपिबद्ध करने के विषय में जान चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप लयकारी को भली–भांति समझ चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप लयकारी का प्रयोग अपने वादन(एकल वादन व संगत) में करने में सक्षम होंगे जिससे आपका वादन प्रभावशाली होगा। इससे आप लयकारी को बोलने एवं बजाने में भी सक्षम होंगे। आप तबले की तालों के ठेकों को विभिन्न लयकारी में लिपिबद्ध करने एवं उसके क्रियात्मक स्वरूप को तबले में प्रस्तुत कर पाएंगे।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :–

1. 18 2. 1, 4 व 12 पर 3. तबले 4. मिश्र जाति 5. खाली

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वसन्त, *संगीत विशारद*, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. मिश्र, पं0 विजयशंकर, तबला पुराण।
3. श्रीवास्तव, श्री गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं तीन तालों का पूर्ण परिचय देते हुए उनके ठेकों को दुगुन, तिगुन, चौगुन व आड लयकारी सहित लिपिबद्ध कीजिए।

इकाई 3 – तबले की रचनाओं(पाठ्यक्रमानुसार) को लिपिबद्ध करना

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं
  3.3.1 पंचमसवारी ताल में रचनाएं
  3.3.2 आडाचारताल में रचनाएं
  3.3.3 बसंत ताल में रचनाएं
  3.3.4 रूपक ताल में रचनाएं
  3.3.5 तिलवाडा ताल में रचनाएं
  3.3.6 झूमरा ताल में रचनाएं
3.4 सारांश
3.5 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.6 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम(बी0ए0एम0टी0–301) के तृतीय खण्ड की तीसरी इकाई है। पूर्व की इकाईयों में आप पाठ्यक्रम की तालों का पूर्ण परिचय एवं उनको विभिन्न लयकारीयों जैसे दुगुन, तिगुन, चौगुन एवं आड़ में लिखना एवं प्रयोग करना जान गए चुके हैं।

इस इकाई में आप तबला वादन में प्रयोग होने वाली रचनाओं का अध्ययन करेंगे जो कि भातखण्डे ताललिपि में लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कर भविष्य के सन्दर्भ के लिए सुरक्षित कर पाएंगे एवं इनको तबले पर क्रियात्मक रूप में भलि–भांति प्रस्तुत कर पाएंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप :–

1. तबले की रचनाओं को लिपिबद्ध कर पाएंगे।
2. तबले की रचनाओं की लिपि को समझकर क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत कर पाएंगे।
3. यह भी जान सकेंगे की एक ही रचना को मात्राओं के अनुसार किन–किन तालों में प्रयोग किया जा सकता है।

3.3 पाठ्यक्रम की तालों में तबले की रचनाएं

3.3.1 पंचमसवारी ताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार पंचमसवारी ताल विस्तृत अध्ययन की ताल है। इसमें उठान, पेशकार, दो कायदे, रेला, टुकड़ा, परन, चक्करदार(सादा), चक्करदार(फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही हैं।

ठेका

धि	ना	धिधि	कत	धिधि	नाधि	धिना
×			2			
तीक	तिना	तिरकिट	तूना	कता	धिंधिं	नाधिं	धिना	धि
0				3				×

उठान

धागेतिना	किऽनकतातिर	किटतकतिरकिट	तकतिरकिटतक	तिरकिटधाती
×			2	
धाऽधाती	धाऽधाती	धा	तिरकिटधाती	धाऽधाती
		0		
धाऽधाती	धा	तिरकिटधाती	धाऽधाती	धाऽधाती	धि
	3				×

पेशकार(मुख्य बोल)

धिंऽधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताऽधा	धिंताऽधा
×			2	
धिंताधाती	धातीधाधा	तिंतातिंऽ	तिंताऽता	तिंतातीती
		0		
तातातिंता	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता
	3			

पल्टा – 1

ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताऽधा	धिंताऽधा
×			2	
धिंताधाती	धातीधाधा	तिंताऽता	तिंताऽता	तिंतातीती
		0		
तातातिंता	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता
	3			

पल्टा – 2

ऽधाऽधा	ऽधाधिंता	धातीधाधा	धिंताऽधा	धिताऽधा
×			2	
धिंताधाती	धातीधाधा	तिंताऽता	ऽताऽता	तिंतातीती
		0		
तातातिंता	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधाधिंता
	3			

पल्टा – 3

धातीधाधा	धिंताधिंता	धातीधाधा	धिंताऽधा	धिंताऽधा
×			2	
धिंताधाती	धातीधाधा	तिंतातीती	तातातिंता	तितातीती
		0		

तातातिंता	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाती	धाधातिंता
	3			

तिहाई

धातीधाती	धाधाधिंता	धिंताधाती	धाधातिंता	धा1
×			2	
1धाती	धातीधाधा	धिंताधिंता	धातीधाधा	धिताधा
		0		
12	धातीधाती	धाधाधिंता	धिंताधाती	धाधाधिंता
	3			

कायदा 1 – चतुरश्र जाति(मुख्य बोल)

धाति	टधा	तिट	धिन	धाधा
×			2	
तिट	धिन	धाती	धिन	धिना
		0		
गिन	धाती	गिन	तिना	किन
	3			
ताति	टता	तिट	किन	ताता
×			2	
तिट	धिन	धाती	धिन	धिना
		0		
गिन	धाती	धिन	धिना	गिन
	3			

कायदे की दुगुन

धातिटधा	तिटधिन	धाधातिट	धिनधाती	धिनधिना
×			2	
धिनधाती	धिनतिना	किनताति	टतातिट	किनताता
		0		
तिटकिन	धातीधिन	धिनागिन	धातीधिन	धिनागिन
	3			

पल्टा – 1

धाधातिट	धिनधाती	टधातिट	धिनधाती	धिनधिन
×			2	
धिनधाती	धिनतिना	किनताता	तिटकिन	तातीटता
		0		
तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन	धातीधिन	धिनागिन
	3			

पल्टा – 2

तिटधिन	धाधातिट	धिनतिट	धिनताती	धिनधिन
×			2	
धिनधाती	धिनतिना	किनतिट	किनताता	तिटकिन
		0		
तिटधिन	धातीधिन	धिनगिन	धातीधिन	धिनागिन
	3			

पल्टा – 3

धातीधिन	धिनागिन	धाधातिट	धिनधाती	धिनधिना
×			2	
धिनधाती	धिनतिना	किनताती	किनतिना	किनताता
		0		
तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन	धातीधिन	धिनागिन
	3			

तिहाई

धातीधिन	धिनागिन	धातीधिन	तिनाकिन	धा1
×			2	
2धाती	धिनधिना	गिनधाती	धिनतिना	किनधा
		0		
12	धातीधिन	धिनागिन	धातीधिन	तिनाकिन	धि
	3				×

कायदा 2 – तिस्त्र जाति(मुख्य बोल)

धाऽऽ	धगेन	धाऽऽ	धातिरकिट	धितिट
×			2	
धिनधि	नागिन	धातिरकिट	धितिट	धिनधा
		0		
ऽधिन	धातिरकिट	धितिट	धिनति	नाकिन
	3			
ताऽऽ	तकेन	ताऽऽ	तातिरकिट	तितिट
×			2	
किनति	नाकिन	धातिरकिट	धितिट	धिनधा
		0		
ऽधिन	धातिरकिट	धितिट	धिनधि	नागिन
	3			

कायदे की दुगुन

धाऽऽधगेन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनधि	नागेनधातिरकिट	धितिटधिनधा
×			2	
ऽधिनधातिरकिट	धितिटधिनति	धिनधिनागिन	नाकिनताऽऽ	तकेनताऽऽ
		0		
तातिरकिरकिट	किनतिनाकिन	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धातिरकिटधितिट
	3			

पल्टा – 1

धेगनधातिरकिट	धितिटधगेन	धाऽऽधगेन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनधा
×			2	
ऽधिनधातिरकिट	धिंतिटधिनति	नाकिनतकेन	तातिरकिटतितिट	तकेनाऽऽ
		0		
तकेनताऽऽ	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
	3			

पल्टा – 2

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनधा
×				2
ऽधिनधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकिनतातिरकिट	तितिटतकेन	तातिरकिटतितिट
				0
तकेनताऽऽ	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
	3			

पल्टा – 3

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनधा
×				2
ऽधिनधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकेनतातिरकिट	तितिटतातिरकिट	तितिटकिनता
				0
ऽकिनताऽऽ	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽधिन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
	3			

तिहाई

धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽकिन	धा1	
×				2	
2धातिरकिट	धितिटधिनधि	नागिनधातिरकिट	धितिटगिनधा	ऽकिनधा	
					0
12	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनधाऽकिन	धि
	3				×

रेला(मुख्य बोल)

धाऽ	धातिर	किटतक	तिरकिट	धातिर
×				2
किटतक	तिरकिट	धाऽ	धातिर	किटतक
				0
तिरकिट	धातिर	किटतक	तातिर	किटतक
	3			
ताऽ	तातिर	किटतक	तिरकिट	तातिर
×				2
किटतक	तिरकिट	धाऽ	धातिर	किटतक
				0
तिरकिट	धातिर	किटतक	धातिर	किटतक
	3			

रेले की दुगुन

धाऽधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक
×				2
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकताऽ	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर
				0
किटतकतिरकिट	धाऽधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
	3			

पल्टा – 1

धातिरकिरतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक
×			2	
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	ताऽतातिर
		0		
किटतकतिरकिट	धाऽधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
	3			

पल्टा – 2

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक
×			2	
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर
		0		
किटतकतिरकिट	धाऽधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
	3			

पल्टा – 3

धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक
×			2	
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर
		0		
किटतकतिरकिट	धाऽधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
	3			

तिहाई

धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धा1	
×			2		
2धातिर	किटतकधातिर	किटतकधातिर	किटतकतिरकिट	धातीधा	
		0			
12	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धि
	3				×

टुकड़ा

कऽतिट	घेघेतिट	कऽधातिट	कऽताऽ	धातिरकिटतक	
×			2		
तातिरकिटतक	ताकड़ान	धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	
		0			
ताकड़ान	धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	ताकड़ान	धि
	3				×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	कऽधातिट
×			2	
कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट	गदीगिन	नागेतिट
		0		
धागेतिट	ताकेतिट	कतिटता	ऽनाधित्त	ताऽन
	3			
धित्ताताऽ	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	धा
×			2	

धा तिरकिटधित्त | तगेऽन धा धा
0
धा | तिरकिटधित्त तगेऽन धा धा | धि
3 ×

चक्करदार(सादा) – रूपकताल अथवा आड़ाचारताल के 56 मात्रा के चक्करदार टुकड़े में प्रत्येक चक्कर के बाद दो मात्रा रूकने से तीन चक्कर में कुल मात्राएं 60 हो जाएंगी। अतः यह पंचम सवारी की चार आवृत्ति, एकताल की पांच आवृत्ति एवं झपताल की 6 आवृत्ति में आएगा। चक्करदार रचना निम्न प्रकार से है जो कुल 60 मात्रा की है।

| घेतिरकिटतक ताऽ घेतिरकिटतक | ताऽकता गऽदींऽ
× 2
कतधाऽ कृति | टता घेतिरकिटतक तातिरकिटतक
0
घेतिरकिटतक | ताऽकता धा घेतिरकिटतक ताऽकता |
3
| धा घेतिरकिटतक ताऽकता | धा 1
× 2
2 घेतिरकिटतक | ताऽ घेतिरकिटतक ताऽकता
0
गऽदींऽ | कृताधाऽ कति टता घेतिरकिटतक |
3
| तातिरकिटतक घेतिरकिटतक ताऽकता | धा घेतिरकिटतक
× 2
ताऽकता धा | घेतिरकिटतक ताऽकता धा
0
1 | 2 घेतिरकिटतक ता घेतिरकिटतक |
3
| ताऽकता गऽदींऽ कतधाऽ | कति टता
× 2
घेतिरकिटतक तातिरकिट | घेतिरकिटतक ताऽकता धा
0
घेतिरकितक | ताऽकता धा घेतिरकिटतक ताऽकता |
3
धि
×

चक्करदार(फरमाइशी)

| दिंगदिं नाकत दिंगदिं | नाकत तकट
× 2
धातिरकिट दिंगदिं | नाऽऽ धाऽन धाऽन
0
ताकेतिर | किटतक धातिरकिटतक तातिरकिटतक ताकड़ान |
3
| धा धातिरकिटतक तातिरकिटतक | ताकड़ान धा
× 2

धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	ताकड़ान	धा	1
2	दिंगदिं	नाकत	दिंगदि	नाकत
तकट	धातिरकिट	दिंगदिं	नाऽऽ	धाऽन
×			2	
धाऽन	ताकेतिर	किटतक	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक
ताकड़ान	धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	ताकड़ान
धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	ताक्ड़ान	धा
×			2	
1	2	दिंगदिं	नाकत	दिंगदिं
नाकत	तकट	धातिरकिट	दिंगदिं	नाऽऽ
धाऽन	धाऽन	ताकेतिर	किटतक	धातिरकिटतक
×			2	
तातिरकिटतक	ताकड़ान	धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक
तकड़ान	धा	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	ताकड़ान

धि
×

गत

धाऽन	धिकिट	तकट	धिकिट	धातिरकिट
×			2	
धिकिट	कताग	दिगिन	दींऽदीं	ऽदींऽ
नगन	गनग	तकट	तकट	धाऽक
धातिट	धाऽन	धाऽन	धा	ताऽन
×			2	
धा	धाऽन	धाऽन	धा	ताऽन
धा	धाऽन	धाऽन	धा	ताऽन

धि
×

3.3.2 आडाचारताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम में यह ताल विस्तृत अध्ययन हेतु रखी गई है। इसमें आपको तीनताल व एकताल की भांती ही रचरनाएं क्रियात्मक रूप में मंच पर प्रदर्शित करने कि आवश्यकता होगी। आड़ाचारताल में रचनाएं लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही हैं।

ठेका

धिं	तिरकिट	धी ना	तू ना	क त्ता	तिरकिट धि	ना धी	धी ना	धिं
×		2	0	3	0	4	0	×

उठान

धाधिऽन,	किऽकतातिर,	किटतकतिरकिट,	तकतिरकिटतक,	तिरकिटधाती,	धाऽधाती,	धाऽधाती,
×		2		0		3
धाऽतिरकिट,	धातीधाऽ,	धातीधाऽ,	धातीधाऽ,	तिरकिटधाती,	धाऽधाती,	धाऽधाती,
	0		4		0	

धिं
×

पेशकार(मुख्य बोल)

धिंऽधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधातिंता,
×		2		0		3
तिऽतिंता,	ऽतातिंता,	तातीताती,	तातातिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंधा,
	0		4		0	
			पलटा 1			
ऽधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधातिंता,
×		2		0		3
ऽतातिंता,	ऽतातिंता,	तातीताती,	तातातिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंधा,
	0		4		0	
			पलटा 2			
ऽधाऽधा,	ऽधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धाधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधातिंता,
×		2		0		3
ऽताऽता,	ऽतातिंता,	ऽतातिंता,	तातातिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,
	0		4		0	
			पलटा 3			
धिंताधाती,	धाधाधिंत्ता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधातिंता,
×		2		0		3
तिंतातीती,	तातातिंत्ता,	तातीताती,	तातातिंता,	ऽधाधिंता,	धातीधाती,	धाधाधिंता,
	0		4		0	
			तिहाई			
धातीधाती,	धाधाधिंत्ता,	धिंताधाती,	धाधातिंता,	धा,	धातीधाती,	धाधाधिंता,
×		2		0		3
धिंताधाती,	धाधाधिंत्ता,	धा,	धातीधाती,	धाधाधिंता,	धिंताधाती,	धाधातिंता,
	0		4		0	

धिं
×

कायदा – चतुरश्र जाति

धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	तिनाकिन		
×		2		0		3		
तातिरकिटति	तिटधिन	तातीकिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीगिन	धिनागिन		
	0		4		0			

कायदे की दुगुन

धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	तिनाकिनतातिरकिटति
×		2	
तिटकिनतातीकिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीधिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन
0		3	
धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	तिनाकिनतातिरकिटति	तिटकिनतातीकिन
0		4	
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन		
0			

पलटा 1

धातीधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटतिधन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तातीकिनतातिरकितति	तिटकिनतातीकिन	तातिरकिटतितिटकिन
	3		0	
तातीकिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

पलटा 2

तिटधिनधातीगिन	तिटधिनधातीगिन	तिटधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तिटकिनतातीकिन	तिटकिनतातीकिन	तिटधिनधातिरकिटधि
	3		0	
तिटधिनधातिरकिटधि	तिरधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

पलटा 3

तिटधिनतिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनतिटधिन	धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन
×		2		0
धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनतिनाकिन	तिटकिनतिटकिन	तातिकिनतातिरकिटति	तिटकिनतिरकिन
	3		0	
धातीगिनधातिरकिटधि	तिटधिनधातीगिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	
4		0		

तिहाई

धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीधिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धाऽ
×		2		0
धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धाऽ
	3		0	
धातीगिनधिनागिन	धातिरकिटधितिटधिन	धातीगिनधिनागिन	धाऽधाऽ	धिं
4		0		×

कायदा – तिस्त्र जाति

धिऽन,	धगेन,	धाऽऽ,	धातिरकिट,
×		2	
धितिट,	धिनति,	नाकिन,	तिऽन,
0		3	
तकेन,	ताऽऽ,	धातिरकिट,	धितिट,
0		4	
धिनधि,	नागिन,		
0			

कायदे की दुगुन

धिऽनधगेन	धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकिनतिऽन
×		2	
तकेनताऽऽ	धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन	धिऽनधगेन
0		3	
धाऽऽधातिरकिट	धितिटधिनति	नाकिनतिऽन	तकेनताऽऽ
0		4	
धातिरकिटधितिट	गिनधिनागिन		
0			

पलटा 1

धगेनधिऽन,	धगेनधाऽऽ	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट
×		2	
धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन,	तकेनतिऽन,
0		3	
तकेनताऽऽ,	तातिरकिटतकेन	तातिरकिटतितिट	धतिरकिटधगेन,
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन,		
0			

पलटा 2

धातिरकिटधगेन,	धिऽनधगेन,	धाऽऽधगेन,	धातिरकिटधितिट,
×		2	
धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन,	तातिरकिटतकेन,
0		3	
तिऽनतकेन	ताऽऽतकेन	तातिरकिटतितिट,	धातिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन		
0			

पलटा 3

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन,	धिऽनधगेन,	धाऽऽधगेन,
×		2	
धातिरकिटधगेन,	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	तातिरकिटतितिट
0		3	
तातिरकिटतकेन	तिऽनधगेन,	ताऽऽतकेन,	धातिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,		
0			

तिहाई

धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेन
×		2	
धा	धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन	धातिरकिटधितिट
0		3	
धिनातिनाकिन	धा	धातिरकिटधितिट	धातिरकिटधगेन
0		4	
धातिरकिटधितिट	धिनातिनाकिन	धिं	
0		×	

रेला – मुख्य बोल

धातिर	किटतक	तिरकिट	धातिर
×		2	
किटतक	तातिर	किटतक	तातिर
0		3	
किटतक	तिरकिट	धातिर	किटतक
0		4	
धातिर	किटतक		
0			

दुगुन

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तातिरकिटतक
0		0	
तिरकिटताऽ	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 2

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक
×		2	
तिरकिटधाऽ	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

पलटा 3

तिकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर
×		2	
किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर
0		3	
किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	धातिरकिटतक		
0			

तिहाई

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तिरकिटधाती
×		2	
धा	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक
0		3	
तिरकिटधाती	धा	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट
0		4	
धातिरकिटतक	तिरकिटधाती	धिं	
0		×	

गत

धाऽन	धितिट	तकिट	धितिट	
×		2		
धातिरकिट	धितिट	कताग	दीकिन	
0		3		
दींऽदीं	ऽदींऽ	नगन	गनग	
0		4		
तकट	तकट	धाऽक	धातिट	
0		×		
धाऽन	धाऽन	धा	धाऽक	
2		0		
धातिट	धाऽन	धाऽन	धा	
3		0		
धाऽक	धातिट	धाऽन	धाऽन	धिं
4		0		×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	
×		2		
कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट	
0		3		
गदीगन	नागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	
0		4		
कतिटता	ऽनताके	तिटकता	गदीगिन	
0		×		
धित्ततगे	ऽनाधित्त	तगेऽन	धित्ताऽ	
2		0		

तिरकिटधित्त	तगेऽन	धा	तिरकिटधित्त	
3		0		
तगेऽन	धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन	धिं
4		0		×

चक्करदार(सादा)

घेतिरकिटतक	ता	घेतिरकिटतक	ताऽकता	
×		2		
गऽदींऽ	कतधाऽ	कतिं	टता	
0		3		
धातिरकिटतक	ताऽकता	धाऽकता	धाघेतिर	
0		4		
किटतकताऽ	कताधाऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	
0		×		
ताऽकता	धाऽकता	धा		× 3
2		0		

उक्त बोल उन्नीस मात्रा का है अतः 3 बार बजाने पर चार आवृति के बाद सम पर आएगा।

चक्करदार(फरमाइशी)

घेतिरकिटतक	ताकटधा	घेतिरकिटतक	तकिटधा	
×		2		
घेतिरकिटतक	ताकिटधा	ऽतकिट	धाऽकिट	
0		3		
धाऽकता	गऽदींऽ	कताधाऽ	घेतिरकिटतक	
0		4		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	
0		×		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	
2		0		
तातिरकिटतक	ताकडान	धा	ऽ	×3
3		0		

3.3.3 बसंत ताल में रचनाएं :–

इस ताल में उठान, पेशकार, दो कायदे, एक रेला, गत, परन, चक्करदार(सादा एवं फरमाइशी) रचनाएं लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही हैं।

ठेका–तबला

धिं	ना	तिरकिकिट	तू	ना	कत्ता	धिं	धिं	ना	धिं	
×	2	3	4	0	5	0	6	0	×	

उठान

ताकेतिना	किऽनकतातिर	किटतकतिरकिट	तकतिरकिटतक		
×	2	3	4		
तिरकिटधाती	धा	तिरकिटधाती	धा	तिरकिटधाती	धिं
0	5	0	6	0	×

पेशकार

धिंऽधिता	ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
×	2	3	4	
तिंतातिऽ	तिंताऽता	तिंताऽता	धिताधाती	धाधाधिंता
0	5	0	6	0

पलटा 1

ऽधाधिंता	धिंऽधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
×	2	3	4	
तिंताऽता	तिंतातिंऽ	तिंताऽधा	धिंताधाती	धाधाधिंता
0	5	0	6	0

पलटा 2

ऽधाऽधा	ऽधाधिंता	धिंऽधिंता	धातीधाधा	
×	2	3	4	
तिंताऽता	ऽताऽता	तिंताधिंऽ	धिंताधाती	धाधाधिंता
0	5	0	6	0

पलटा 3

धिंताधाती	धधधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
×	2	3	4	
तिंतातिंता	तातीताता	तिंताऽधा	धिंताधाती	धाधाधिंता
0	5	0	6	0

तिहाई

धातीधाधा	धिंताधाती	धा1	2धाती		
×	2	3	4		
धाधाधिंता	धातीधा	12	धातीधाधा	धिंताधाती	धिं
0	5	0	6	0	×

कायदा–चतुरश्र जाति

धाती	धागे	नधा	तिरकिट	
×	2	3	4	
धागे	धाती	धागे	तिना	किन
0	5	0	6	0

दुगुन

धातीधागे	नाधातिरकिट	धागेधाती	धागेतिना	
×	2	3	4	
किनताती	ताकेनता	तिकिटधागे	धातीधागे	धिनागिन
0	5	0	6	0

पलटा 1

धागेनधा	तिरकिटनधा	तिरकिटधाती	धागेतिना	
×	2	3	4	
किनताके	नतातिरकिट	नधातिरकिट	धातीधागे	धिनागिन
0	5	0	6	0

पलटा 2

नधातिरकिट	धागेनधा	तिरकिटधाती	धागेतिना	
×	2	3	4	
किननता	तिरकिटधागे	नधातिरकिट	धातीधागे	धिनागिन
0	5	0	6	0

पलटा 3

तिरकिटनधा,	तिरकिटनधा,	तिरकिटधाती,	धागेतिना,	
×	2	3	4	
किनतिरकिट,	नतातिरकिट,	नधातिरकिट,	धातीधागे,	धिनागिन,
0	5	0	6	0

तिहाई

धातीधागे,	तिनाकिन,	धा1,	2धाती,		
×	2	3	4		
धागेतिना,	किनधा,	12	धातीधागे,	तिनाकिन,	धिं
0	5	0	6	0	×

कायदा–तिस्त्र जाति

धिऽन,	धगेन,	धातिरकिट,	धितिट,	
×	2	3	4	
धगेन,	धातिरकिट,	धितिट,	धिनति,	नाकिन,
0	5	0	6	0

दुगुन

धिऽनधगेन,	धातिरकिटधितिट,	धगेनधातिरकिट,	धितिटधिनति,	
नाकिनतिऽन,	तकेनतातिरकिट,	तितिटधगेन,	धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,

पलटा 1

धगेनधातिरकिट,	धितिटधिऽन,	धगेनधातिरकिट,	धितिटधिनति,	
नाकिनतकेन,	तातिरकिटतितिट,	धिऽनधगेन,	धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,

पलटा 2

धातिरकिटधितिट,	धगेनधिऽन,	धगेनधातितकिट,	धितिटधिनति,	
नाकिनतातिरकिट,	तितिटतकेन,	तिऽनतकेन,	धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,

पलटा 3

धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,	धगेनधातिरकिट,	धितिटधिनति,	
नाकिनतातिरकिट,	तितिटकिनातिन,	नाकिनधगेन,	धातिरकिटधितिट,	धिनधिनागिन,

तिहाई

धातिरकिटधितिट,	धिनतिनाकिन,	धा1,	2धातिरकिट,	
×	2	3	4	
धितिटधिनति,	नाकिनधा,	12,	धातिरकिटधितिट,	धिनतिनाकिन,
0	**5**	**0**	**6**	**0**
धिं				
×				

रेला

धा	धातिर	किटतक	तिरकिट	
×	2	3	4	
धा	धातिर	किटतक	तातिर	किटतक
0	5	0	6	0

दुगुन

धाधातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतातिर	
किटतकता	तातिरकिटतक	तिरकिटधा	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक

पलटा 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधा	धाधातिर	किटततातिर	
किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	ता धा	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक

पलटा 2

धातिरकिटतक	धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतातिर	
किटतकतातिर	किटतकतातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक

पलटा 3

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतातिर	
किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	तिरकिटधा	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक

तिहाई

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धा 1	2तिरकिट	
×	2	3	4	
धातिरकिटतक	तिरकिटधा	1 2	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट
0	5	0	6	0

धिं
×

गत

धिरधिरकिटतक	तकिटधा	ऽतक	धिरधिरकिटतक		
×	2	3	4		
धातिरकिटतक	दीगीननाऽन	ऽनगन	तातिरकिटतक	धिरधिरकिटतक	
0	5	0	6	0	
तकिटधा	ऽतक	धिरधिरकिटतक	धातिरकिटतक		
×	2	3	4		
धिरधिरकत	धातिरकिटतक	धिरधिरकत	धातिरकिटतक	धिरधिरकिटतक	धिं
0	5	0	6	0	×

परन

धिटधिट	धागेतिट	कऽधातिट	धागेतिट	
×	2	3	4	
कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	धागेतिट	गदीगीन
0	5	0	6	0

नागेतिट ×	धागेतिट 2	ताकेतिट 3	कतिटत 4		
किनताके 0	तिटकता 5	गदीगिन 0	धित्ततगे 6	ऽनधित्त 0	
तगेऽन ×	धित्ताऽ 2	तिरकिटधित्त 3	तगेऽन 4		
धातिरकिट 0	धित्ततगे 5	ऽनधा 0	तिरकिटधित्त 6	तगेऽन 0	धिं ×

चक्करदार(सादा)

कऽतिट ×	घेघेतिट 2	कऽधातिट 3	कता 4	
घेतिरकिटतक 0	तातिरकिटतक 5	ताकऽान 0	धाता 6	कऽानधा 0
ताकऽान ×	धा 2	1 3	2 4	× 3

चक्करदार(फरमाइशी)

दींदीं ×	तिटतिट 2	धागेतिट 3	ताकेतिट 4	
कऽधातिट 0	कता 5	घेतिरकिटतक 0	तातिरकिटतक 6	ताकऽान 0
धा ×	ताकऽान 2	धा 3	ताकऽऽान 4	1 0
2 **5**	× 3			

3.3.4 रूपकताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार रूपक ताल विस्तृत अध्ययन की ताल है। इसमें उठान, पेशकार, दो कायदे, रेला, टुक्ड़ा, परन, चक्करदार(सादा), चक्करदार(फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की जा रही है।

ठेका

तिं 0	तिं	ना	धिं 2	ना	धिं 3	ना	तिं 0

उठान

धागेतिना 0		किऽनकतातिर	किटतकतिरकिट	
तकतिरकिटतक 2		तिरकिटधाती	धाधा 3	धा
ऽ 0		तिरकिटधाती	धाधा	
धा 2		ऽ	तिरकिटधाती 3	धाधा तिं 0

पेशकार(मुख्य बोल)

धिंऽधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातिऽ	तिंताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	
तिंऽतिंता	ऽताातिंता	तातीधाधा	
0			
धिंतातिऽ	धिंताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 1

ऽधाधिंता	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंताऽता	तिंताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 2

धिंताऽधा	ऽधाधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातिंता	ऽताऽता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

पल्टा – 3

धातीधाधा	धिंताधिंता	धातीधाधा	
0			
तिंतातती	तातातिंता	धिंताधाती	धाधाधिंता
2		3	

तिहाई

धिंताधाती	धाधातिंता	धाऽधिंता		
0				
धातीधाधा	तिंताधाऽ	धिंताधाती	धाधातिंता	तिं
2		3		0

नोट–: मुख्य बोल एवं प्रत्येक पल्टा दो–दो बार बजेगा।

कायदा–चतुरश्र जाति

धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तातिरकिटति	तिटकिन	तातीकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 1

धातीधिन	धातिरकिटधि	तिटधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तातीकिन	तातिरकिटति	तिटकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 2

तिटधिन	धातीधिन	तिटधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तिटकिन	तातीकिन	तिटकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

पल्टा – 3

तिटधिन	तिटधिन	धातीधिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	तिनाकिन
2		3	
तिटकिन	तिटकिन	तातीकिन	
0			
धातिरकिटधि	तिटधिन	धातीधिन	धिनागिन
2		3	

तिहाई

धातीधिन	तिनाकिन	धाऽधाति	
0			
धिनतिना	किनधाऽ	धातीधिन	तिनकिन तिं
2		3	0

कायदा–तिस्त्र जाति

धगेन	धातिरकिट	धगेन	
0			
धातिरकिट	धितिट	धिनति	नाकिन
2		3	
तकेन	तातिरकिट	तकेन	
0			
धातिरकिट	धितिट	धिनधि	नागिन
2		3	

कायदे की दुगुन

धगेनधातिरकिट	धगेनधातिरकिट	धितिटधिनति	
0			
नाकिनतकेन	तातिरकिटतकेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 1

धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	
0			
धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तकेनतातिरकिट	तितिटतकेन	तातिरकिटतितिट	
0			
धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 2

धातिरकिटधितिट	धगेनधातिरकिट	धितिटधगेन	
0			
धगेनधातिरकिट	धिनधिनागेन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तातिरकिटधितिट	तकेनतातिरकिट	तितिटतकेन	
0			
धगेनधातिरकिट	धिनधिनागेन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

पल्टा – 3

धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधगेन	
0			
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकेना
2		3	
तातिरकिटतितिट	किनतिनाकिन	तातिरकिटतकेन	
0			
धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन	धातिरकिटधितिट	धिनधिनागिन
2		3	

तिहाई

धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	धाऽधातिरकिट		
0				
धितिटधिनति	नाकिनधाऽ	धातिरकिटधितिट	धिनतिनाकिन	तिं
2		3		0

रेला–मुख्य बोल

धा	धातिर	किटतक	
0			
तिरकिट	धातिर	किटतक	तिरकिट
2		3	

ता	तातिर	किटतक	
0			
तिरकिट	धातिर	किटतक	तिरकिट
2		3	

रेले की दुगुन

धाधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटता	तातिरकिटतक	तिरकिटधाति	किटतकतिरकिट
2		3	

पल्टा – 1

धातिरकिटतक	तिरकिटधा	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतिरकिट
2		3	
तातिरकिटतक	तिरकिटधा	तातिरकिटतक	
0			
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	धाधातिर	किटतकतिरकिट
2		3	

पल्टा – 2

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	
0			
तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	तारिकिटतक
2		3	
तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	तातिरकिटतक	
0			
तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक	धातिरकिटतक
2		3	

पल्टा – 3

धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	तारिकिटतक
2		3	
तातिरकिटतक	तिरकिटतातिर	किटतकतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धातिरकिटतक
2		3	

तिहाई

तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	धाऽतिरकिट	
0			
धातिरकिटतक	तिरकिटधाऽ	तिरकिटधातिर	किटतकतिरकिट	तिं
2		3		0

टुकडा

दींदीं	तिटतिट	धागेतिट		
0				
ताकेतिट	कऽधातिट	कऽताऽ	धातिरकिटतक	
2		3		
तातिरकिटतक	ताकड़ान	धातातिर		
0				
किटतकता	कड़ानधा	तातिरकिटतक	ताकड़ान	तिं
2		3		0

परन

धिटधिट	धागतिट	कऽधातिट		
0				
धागेतिट	कऽधातिट	कऽधातिट	कऽधातिट	
2		3		
धागेतिट	गदिगिन	नागेतिट		
0				
धागेतिट	ताकेतिट	कतिटत	किनताके	
2		3		
तिटकता	गदिगिन	धागेतिट		
0				
ताकेतिट	धित्ततगे	ऽगधित्त	तगेऽन	
2		3		
धित्ता	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
0				
धा	तगेऽन	धा	तगेऽन	
2		3		
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
0				
धा	तगेऽन	धा	तगेऽन	
2		3		
धा	तिरकिटधित्त	तगेऽन		
0				
धा	तगेऽन	धा	तगेऽन	तिं
2		3		0

चक्करदार(सादा)

धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	
0			
ताकेतिट	कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन
2		3	
नागेतिट	कतिटत	किनताके	
0			

तिटकता	गदीगिन	धा	तिटकता
2		3	
गदीगिन	धा	तिटकता	
0			
गदीगिन	धा	धागेतिट	धागेतिट
2		3	
ताकेतिट	ताकेतिट	कऽधातिट	
0			
ताकेतिट	गदीगिन	नागेतिट	कतिटत
2		3	
किनताके	तिटकता	गदीगिन	
0			
धा	तिटकता	गदिगिन	धा
2		3	
तिटकता	गदीगिन	धा	
0			
धागेतिट	धागेतिट	ताकेतिट	ताकेतिट
2		3	
कऽधातिट	ताकेतिट	गदीगिन	
0			
नागेतिट	कतिटत	किनताके	तिटकता
2		3	
गदीगिन	धा	तिटकता	
0			
गदीगिन	धा	तिटकता	गदीगन
2		3	

ति
0

रूपकताल अथवा आड़ाचारताल में चक्करदार हेतु 18 मात्रा का तिहाई युक्त बोल जिसका 'धा' उन्नीसवीं मात्रा पर आएगा को तीन बार बजाने से चक्कदार बोल प्राप्त होगा जो कुल 56 मात्रा का होगा 18+1 = 19×3 = 56+1 = 57।

चक्करदार(फरमाइशी)

धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	
0			
तकटधा	धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा
2		3	
तकटधा	तिट	कता	
0			
गदी	गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट
2		3	
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	
0			

किटतकतकट	धा	धिरधिरकिटतक	तकटधा	
2		3		
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकत		
0				
धिरधिरकत	तकटध	तकटधा	तिट	
2		3		
कता	गदी	गिन		
0				
कतधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट	
2		3		
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धा		
0				
धिरधिरकिटतक	तकटधा	धिरधिरकिटतक	तकटधा	
2		3		
धिरधिरकत	धिरधिरकत	तकटधा		
0				
तकटधा	तिट	कता	गदी	
2		3		
गिन	कतधिरधिर	किटतकतकट		
0				
धाऽधिरधिर	किटतकतकट	धाऽधिरधिर	किटतकतकट	तिं
2		3		0

3.3.5 तिलवाडा ताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। इस ताल में एकल वादन नहीं किया जाता। बल्कि यह ताल ख्याल गायकी के साथ प्रयोग की जाती है अतः इसके ठेके को विलम्बित लय में बजाने का अभ्यास करने की आवश्यकता है एवं अन्तिम मात्राओं में एक, दो एवं चार मात्रा में मुखड़ा बजाकर सम पर आना होता है।

मात्रा – 16, विभाग – 4, ताली – 1,5 व 13 पर, खाली – 9 पर

ठेका

धा तिरकिट धिं धिं । धा धा तिं तिं । ता तिरकिट धिं धिं । धा धा धिं धिं । धा

× 2 0 3 ×

3.3.6 झूमरा ताल में रचनाएं :–

पाठ्यक्रम के अनुसार यह अविस्तृत अध्ययन की ताल है। इस ताल में एकल वादन नहीं किया जाता बल्कि यह ताल ख्याल गायकी के साथ प्रयोग की जाती है अतः इसके ठेके को विलम्बित लय में बजाने का अभ्यास करने की आवश्यकता है एवं अन्तिम मात्राओं में एक, दो एवं चार मात्रा में मुखड़ा बजाकर सम पर आना होता है।

ठेका

धिं	ऽधा	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तिं	ऽता	तिरकिट	धिं	धिं	धागे	तिरकिट	धिं
×			2				0			3				×

3.4 सारांश

तबला वादन हेतु तबले की रचनाओं का ज्ञान आवश्यक है जो शिक्षक एवं प्राप्त पुस्तकों में रचनाओं से प्राप्त किया जा सकता है। इस इकाई में पाठ्यक्रम की तालों में विभिन्न रचनाएं लिपिबद्ध कर प्रस्तुत की गई हैं जिसमें भातखण्डे ताल पद्धति का प्रयोग किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस इकाई में दी गई सभी रचनाओं को तबले पर प्रयोग करने में सक्षम होंगे। पुस्तकों में भी तबले की रचनाएं प्राप्त होती हैं अतः इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप तबले की रचनाओं को पुस्तक से पढ़कर भी तबले पर बजा पाएंगे। इस इकाई से आप रचनाओं के विभिन्न तालों में प्रयोग के विषय में जान गए हैं जो कि आपको सफल तबला वादक बनने में सहायक होगा।

3.5 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मिस्त्री, डॉ0 आबान ई0, तबले की बन्दिशें।
2. पागलदास, रामशंकर, तबला कौमुदी।
3. मिश्र, पं0 छोटेलाल, ताल प्रसून।

3.6 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पाठ्यक्रम की किन्हीं दो तालों में उठान, पेशकार, दो कायदे, 1 रेला, टुकड़ा, परन, चक्करदार (सादा), चक्करदार(फरमाइशी) एवं गत लिपिबद्ध कीजिए।